यहूदी, ईसाइयत और इस्लाम

एवं

उनकी धर्मान्धता की विभीषिकाएँ

लेखक :
अनवर शेख

अनुवाद : सच्चिदानन्द चतुर्वेदी

''इस्लाम'' अध्याय में कहीं कुर्आन कहीं कुरान छपा है। दोनों शब्द एक ही ग्रंथ के लिए हैं। मूल अंग्रेजी पुस्तक में सूराओं का सिर्फ नाम और आयतों की क्रम संख्या दी गई है। अनुवाद में सूराओं के नाम के साथ उनका क्रमांक और मूल ग्रंथ के अंग्रेजी अनुवाद वाले आयतों और समानार्थी अन्य आयतों की क्रम संख्यायें भी दी गयी हैं।

कुर्आन की आयतों का हिन्दी अनुवाद मेरे द्वारा नहीं किया गया है। इन्हें मौलाना फतेह मुहम्मद खाँ साहब जालंधरी द्वारा ''कुर्आन मजीद''— तर्जुमा, से एवं श्री नन्द कुमार अवस्थी द्वारा ''कुर्आन शरीफ़''— मुतर्जम: बरहाशिय: (सानुवाद सटिप्पण) से ज्यों का त्यों लिया गया है।

प्रथम संस्करण में कुछ संयोजन की त्रुटियों के रह जाने की संभावना बनी रहती है। कुछ इसके कारण और कुछ अनुवाद की सामान्य मानवीय भूलों के कारण इस प्रथम संस्करण में भी, संभव है, कुछ त्रुटियाँ रह गयी हों। पाठक इस ओर ध्यान दिलाने की कृपा करें तो आगमी संस्करण में सुधार किया जा सकेगा। उनके इस उपकार का मैं ऋणी रहूँगा।

सच्चिदानन्द चतुर्वेदी

लेखक के बारे में

अनवर शेख कोई साधारण व्यक्ति नहीं हैं। उनका जन्म १ जून १९२८ को एक कश्मीरी ब्राह्मण परिवार में हुआ था, जिसे मुस्लिम सुल्तानों के समय में ही बलात् धर्मान्तरित कर दिया गया था। वे इस्लामी विषयों के साथ ही अरबी, फारसी और उर्दू भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान हैं। जब जिन्ना के नेतृत्व में पाकिस्तान के लिए आंदोलन अपने चरम पर था, तब वह अभी छोटे ही थे। पर उन्होंने इस आंदोलन में जिसका परिणाम इस उपमहाद्वीप के बँटवारे के रूप में सामने आया, बढ़—चढ़ कर हिस्सा लिया। बाद में बँटवारे से इस देश और यहाँ की जनता को होने वाली हानि के विरुद्ध उनका मन जागृत हुआ। इसके बाद यह जानने के लिए कि हिन्दुओं ने कहाँ भूल की उन्होंने वेदों का अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि हिन्दुओं में इस्लाम और वेदों, दोनों की अनभिज्ञता ने ही उन्हें इस महाविनाश में झोंक दिया। इतिहास के सम—सामयिक समीक्षक के अतिरिक्त अनवर शेख कवि, लेखक और प्रख्यात दार्शनिक भी हैं। वे अंग्रेजी और उर्दू दोनों भाषाओं में समान अधिकार के साथ लिखते हैं। इस उपमहाद्वीप के धर्मान्तरित मुसलमानों में आये बदलाव और कुरान के संबंध में उनकी समझ अद्भुत है। उनकी कृतियों से मर्मज्ञ और सामान्य लोग सभी परिचित हैं। अब तक प्रकाशित उनकी निम्नलिखित प्रमुख कृतियाँ हैं :—

1. Eternity, 2. Faith and Deception, 3. Islam-Arab National Movement, 4. Islam- The Arab Emperialism, 5. Islam - Sex and Violence, 6. Islam and Terrorism, 7. The Tale of Two Gujrati Saints Jinnah and Gandhi, 8. Islam & Human Rights.

श्री शेख १९५६ से ही ब्रिटिश नागरिक हैं और वेल्स के कार्डिफ में बस गये हैं। इस्लाम के धर्मोन्मादियों ने उनकी हत्या के लिए अनेक फतवे जारी किये। पर वे अभी तक सुरक्षित हैं। ईरान के खुमैनी के समय से अब तक कोई मुल्ला उनसे सीधा शास्त्रार्थ करने का साहस नहीं जुटा सका। अनवर शेख की उन्मुक्त प्रतिभा को चुनौती देने वाला कोई नहीं है। वे मानवता के लिए वरदान हैं।

विषय सूची

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	परिचय	1
2.	मध्य पूर्व का पुराण शास्त्र	3
3.	ईश्वरीय संदेश (Revelation)	17
4.	यहूदी	29
5.	ईसाइयत	65
6.	इस्लाम	89
7.	धर्मान्धता की विभीशिकाएँ	138

1.

परिचय

यहूदी, ईसाई और इस्लाम, शामी परम्परा के मजहब हैं। ये ईश्वरीय संदेश (वह्य) पर आधारित हैं। इनके विश्वास के अनुसार ईश्वर अपना संदेश व्यक्ति के माध्यम से प्रकट करता है जिसे पैगम्बर, नबी या मसीहा कहते हैं। ये स्वयं को दिव्य होने का दावा करते हैं। इनका कहना है कि कोई व्यक्ति बिना इनकी मध्यस्थता के ईश्वर को नहीं पा सकता।

यदि ईश्वर सभी मनुष्यों का पिता है तब उस तक उसके सभी बच्चों की सीधी पहुँच होनी चाहिए। वह कैसा ईश्वर है जिस तक पहुँचने के लिए किसी बिचौलिया की आवश्यकता हो? वास्तव में ईश्वर को किसी बिचौलिया की आवश्यकता नहीं है। ये नबी, पैगम्बर और मसीहा आदि ही स्वयं को बिचौलिया के रूप में ईश्वर से जोड़ते हैं। क्योंकि वे ईश्वर का अभिकर्ता बनकर ईश्वर के समान ही पूजे जाने की इच्छा रखते हैं।

वे ईश्वर की तरह क्यों पूजा जाना चाहते हैं? क्योंकि वे प्रभुत्व प्राप्ति की प्रबल आकांक्षा वाले लोग होते हैं। उनकी अन्तर्वृत्ति, शासन करने एवं पूजे जाने के उनके अधिकार को स्थापित करने के लिए स्वयं को श्रेष्ठ बताने हेतु प्रेरित करती है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु ईश्वरीय संदेश वाली युक्ति सर्वाधिक प्रभावकारी होती है। एक संदेश–वाहक (नबी, पैगम्बर, मसीहा आदि) बहाना बनाता है कि वह जो कुछ भी कहता या करता है सब कुछ ईश्वर के आदेश पर ही कहता या करता है। उसमें उसका अपना कुछ भी नहीं होता है। इस उपाय से बहुत आसानी से वह लोगों को अपने अधीन कर लेता है। जब हम मूसा, ईसा और मुहम्मद की शिक्षाओं और जीवन चरित्र का आलोचनात्मक विश्लेषण करते हैं तो पाते हैं कि वे ऐसे मनुष्य थे जो ईश्वरीय संदेश की युक्ति द्वारा शीघ्र ही ईश्वर के समान मान्य होने की प्रबल आकांक्षा रखते थे। यहूदी, ईसाई और इस्लाम मजहब मानव जाति की तो कोई भलाई नहीं कर सके, हाँ, उनके संस्थापकों ने मानव जाति की प्रतिष्ठा की कीमत पर

स्वयं को अवश्य ही दैवी स्तर पर स्थापित करने में सफलता पा ली। वास्तव में, ये सभी मजहब, मध्य पूर्व के प्राचीन पौराणिक गल्पों की परम्परा के ही क्रम हैं, जिनमें विभिन्न रूपों में पुराने के स्थान पर नये भगवान की स्थापना का प्रयास देखा जाता है।

यह कैसे हुआ? इसका कारण, इस सच्चाई पर आधारित है कि प्रत्येक पैगम्बर, नबी या मसीहा ने सिर्फ अपने पर विश्वास करने के लिए जोर देकर पहले वाले के स्थान पर स्वयं को स्थापित कराया और अपने अनुयायियों का एकमात्र मुक्तिदाता बना। यह बुद्धि–नियन्त्रण द्वारा विश्वासी मनुष्य को उन्माद की ओर खींच कर 'रोबोट' बना देता है और समझबूझ के सामान्य मानवीय आचरण से विरत कर देता है। धर्मान्धता, मानवीय घृणा, कलह और अपमान का मुख्य स्रोत है। इससे स्पष्ट बोध होता है कि ईश्वर–संदेश की युक्ति ही मनुष्य के भटकाव का असली स्रोत है। मनुष्य अपना मार्ग खोकर उस मार्ग का अनुसरण करने लगा है जो उसके सही लक्ष्य से विपरीत दिशा की ओर ले जाता है।

●

2.

मध्य पूर्व का पुराण शास्त्र
मनुष्य सम्भावित भगवान

प्रत्येक मनुष्य में भगवान होने की सम्भावना मौजूद होती है, पर उसकी सम्भावना को सुअवसर नहीं मिल पाता है। ऐसा क्यों? क्योंकि प्रभुत्वशाली लोगों में प्रभुत्व की चाह अपने आस–पास के लोगों के दिव्योत्थान में बाधा पहुँचाती है। वास्तव में प्रभुत्वशाली व्यक्ति स्वयं को ही भगवान की तरह पूज्य बनाना चाहता है और दूसरों से अपनी पूजा कराना चाहता है। इसमें कोई रहस्य की बात नहीं है। किसी समाज के धर्माधिकारी के प्रभुत्व से प्रलोभित, कोई व्यक्ति अपनी ही प्रभुता और श्रेष्ठता के लिए कुछ भी करने पर उतारू हो जाता है।

मसीहा द्वारा दिव्य वचनों का प्रतिनिधित्व

ईश्वरीय संदेश, मनुष्य द्वारा आविष्कृत अब तक का सबसे बड़ा कपट (छल) है जो किसी को अवतार, ईश्वर–पुत्र, ईश्वर का संदेश–वाहक, पैगम्बर, गुरू, मसीहा, महदी या इमाम के रूप में स्थापित कराने में सबसे अधिक प्रभावी होता है। ऐसे व्यक्ति दिव्य या ईश्वरीय संदेशों के सामान्य जनों पर पड़ने वाले प्रभाव के महत्व को समझते हैं। ईश्वरीय वचनों का प्रभाव इतना प्रबल होता है कि लोगों में कार्य–कारण विचार की शक्ति विनष्ट हो जाती है। वे मनगढंत ईश्वरीय संदेशों के साथ अपने संबंध को स्थाई रूप से जोड़ कर बड़े उत्साह से और इतने प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि लोग भय और कृपा की आन्तरिक प्रवृत्ति के कारण सहम कर उनके सामने नतमस्तक हो जाते हैं।

भारतीय और शामी परम्परा की पौराणिक कथाएँ

भारतीय और शामी दो प्रथाओं का विस्तार देखने में आता है। यहाँ शामी परम्परा वाले मजहबों पर ही विचार किया जा रहा है जो मूल रूप में

सजातीय हैं। शामी मजहबों– यहूदी, ईसाई और इस्लाम के सिद्धान्त और विश्वास, यहूदी पूर्व के जमाने की पौराणिक कथाओं की ही निरन्तरता या विस्तार हैं। मैं यहाँ संक्षेप में इन पर विचार करते हुए जोर देना चाहता हूँ कि पौराणिक गल्पों की बचकानी बातों के कारण ही शामी परम्परा से प्रभावित लोगों में सोच–विचार की धारा आरंभ से ही कारण और तर्क पर केन्द्रित न हो सकी।

मिश्र की पौराणिक परम्पराएँ

मिश्र वाले विश्वास करते थे कि आरम्भ में चारों ओर जल ही जल था [१] जो अंधकार से आच्छादित था जिसे वे ''नू'' कहते थे। ''नू'' की शक्ति से एक विशाल चमकता हुआ अंडा प्रकट हुआ जो ''रा'' था।

(ए) उनका यह भी विश्वास था कि शक्तिशाली ''रा'' में कोई भी रूप धारण करने की क्षमता थी। उसने मानव फराओह का रूप धारण किया जिसने मिश्र पर एक हजार वर्षों तक राज्य किया और अन्ततः बहुत वृद्ध हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि यह भारतीय सिद्धांत का ही प्रतिरूप है जिसे अवतार कहते हैं, जिसका अर्थ है कि ईश्वर मनुष्य के रूप में प्रकट होकर नष्टकारी प्रवृत्तियों एवं दुष्टों का संहार कर मानव जाति की रक्षा करता है।

(बी) ''अतुम'' [२] के रूप में वह संसार का रचयिता माना जाता था।

(सी) अपनी बहुत लम्बी उम्र के कारण ''रा'' बहुत दुर्बल हो गया था। लोग उस पर हँसते थे और अपने पालन हेतु बनाये गये उसके नियमों का उपहास करते थे। इस अवज्ञा के कारण ''रा'' बहुत कुपित हुआ।[३] उसने अपनी बेटी शेखमत को इसका बदला लेने और दण्ड देने हेतु नियुक्त किया। जिसने ''नील'' और ''रेगिस्तान'' के दोनों ओर विध्वंस और नरसंहार किया। जब उसने अपने शिकार का खून पीया तब ''रा'' और दूसरे देवताओं ने भी खुशियाँ मनाई।

(डी) ''रा'' ने पृथ्वी के सभी वस्तुओं का नामकरण किया।[४]

(ई) अखनातून फराओ ने ही सबसे पहले बहुदेववाद की निन्दा की और एक ही सर्वोच्च ईश्वर की पूजा हेतु अपना निर्णय सुनाया।[५] वह मूल रूप से एमेनहोतेप IV था। ''अतून'' देवता उसकी कल्पना का देवता

नहीं बल्कि बाज के सिर वाला सूर्य देवता रा–हरख्ती था। जो भी हो अखनातून का मजहब एकेश्वरवादी नहीं था जैसा सुनने में आता है; क्योंकि स्वयं को ''अतून'' का पुत्र घोषित करने के साथ ही अपने को देवता की श्रेणी में पहुँचा दिया और अतून का प्रधान पुजारी[६] होने के कारण उस तक अपनी सीधी पहुँच का भी अधिकारी बन गया। सभी विश्वासियों की तरफ से वह अतून का एक मात्र पुजारी बनने का अधिकार पा गया। अतून और अखनातून के बीच के विशेष सम्बन्धों ने दोनों के बीच के भेद को बहुत कम कर दिया। विशेषकर ऐसा इसलिए कि 'अतून' के समान अखनातून को भी एक सर्वोच्च पुजारी था। इस प्रकार दोनों आनन्दोत्सव में समान भागीदार थे।

(एफ) मिश्र की पैराणिक कथा के अनुसार ओसिरिस की पिटारी लेबनान के देवदार और पुंत और लाल सागर के अन्तिम दक्षिणी छोर से लायी गयी एक विशेष प्रकार की काली और कड़ी लकड़ी से बनाई गई थी। इसमें हाथी दाँत और कहीं–कहीं सोने और चाँदी की पच्चीकारी की गई थी। इसके भीतरी भाग की देवताओं, पशुओं और पक्षियों के चित्रों के साथ ही सुन्दर रँगाई की गई थी।

दूसरे टैबलेट्स (शिलालेख पट) को रखने के लिए यहवे ने मूसा को इसी तरह की दूसरी तिजोरी बनाने के लिए कहा। यही वह तिजोरी थी जिसके कारण यहूदी और यहवे (ईश्वर) के बीच विशेष संबंध का प्रमाण मिलता है।

(जी) मिश्र की पौराणिक कथा में एक रुचिकर प्रसंग है ओसिरिस की बहन–पत्नी 'आइसिस' एक बक्से को एक बड़ी नाव पर रखकर मिश्र की ओर ले जाना चाहती थी; जिसमें ओसिरिस का शरीर रखा था। फैड्रस नदी की तीव्र धारा ने नाव को आगे बढ़ने से रोक दिया। नदी के व्यवहार से आईसिस उद्विग्न हो गई। उसने शाप दे दिया जिससे नदी की धारा सदा के लिए सूख गई। कथा का यह प्रसंग यहूदी–कथा के पूर्व का है जिसमें लाल सागर के हट जाने की चर्चा है जिससे इसरायल की सन्तानों को बच निकलने में कामयाबी मिली।

(एच) पुराण–कथाओं के साथ ही मिश्रवासियों ने कुछ पूजनीय दैवी महत्व

की रीति विकसित कर ली थी; मिश्र के लोगों ने अपने को सारी दुनिया में श्रेष्ठ बना लिया था। वे वहीं पैदा होते थे और दफनाए जाते थे, वे अपने देवताओं की पूजा करते थे और अपने ही विधानों का पालन करते थे। उन्होंने अपनी विशिष्ट भवन निर्माण कला, अभियांत्रिकी, तकनीकि, कला और साहित्य विकसित कर ली थी। वे मिश्र की सभी चीजों से प्यार करते थे। इस कारण वे अपने को एक अलग विशिष्ट श्रेणी की जाति के रूप में साधिकार मान्यता देते थे।

इसराईल के प्रति यहूदियों की भी यही नजरिया थी। यहाँ तक कि यह्वे इसराईल का भगवान था। यह साफ है कि यहूदियों ने मिश्र की संस्कृति और धार्मिक परम्पराओं को भी अपने साथ लाया।

(आई) मिश्र की भौगोलिक स्थिति उनके अंधविश्वासों का दूसरा कारण थी। ८०० कि०मी० लम्बा और नगण्य चौड़ाई वाले मिश्र पर शासन करना बहुत कठिन होता यदि शासकों में प्रजा की भक्तिपूर्ण आस्था नहीं होती। पुन:, आस्था के लिए कुछ विशेष पुरस्कार का होना आवश्यक था। जिससे यह मान्यता विकसित हुई कि मृत्यु के पश्चात मनुष्य पुन: जी उठता है[७] और न्याय के दिन जब फैसला होगा उस दिन फराओ में दैवी आस्था रखने वाले विश्वासियों की मुक्ति के लिए ओसिरिस देवता उनके पक्ष में अपना निर्णय देगा। इसके चलते राजा और पुरोहित का पद एक ही व्यक्ति में संयुक्त हो गया।

(जे) लेकिन भूखे लोगों के लिए सिर्फ मोक्ष का विचार ही पर्याप्त नहीं था। एमोन–रे जो राज्य का देवता था, विदेशियों के विरुद्ध युद्ध प्रारम्भ करने के लिए अधिकृत था[८]। वह लूट के माल का पाँचवाँ हिस्सा लिया करता था और बाकी के चार हिस्से युद्ध और लूट में भाग लेने वाले लोगों को मिलता था। शासक वर्ग के लोग अपने संबंधियों के मामलों में पक्षपात करते थे। राज्य के सभी प्रधान पद राजा के संबंधियों को ही मिलते थे।

हिट्टिटे और मेसोपोटामिया की परम्पराएँ

१. हैती लोग अपने देवताओं के नाम खुले रूप में बोलकर या लिखकर प्रकट नहीं करते थे, बल्कि इशारों में प्रकट करते थे। सिर्फ पुजारी ही उसका मतलब समझता था। यहूदियों के चार अक्षरों के

शब्दों का स्रोत वही है।

२ मेसोपोटामिया में राजा को देवतास्वरूप नहीं समझा जाता था। सुमेरिया, बेबीलोनिया और असीरिया के सम्राटों को उनके देवताओं के प्रतिनिधि की मान्यता थी, जिनको देवता से अधिकार भर मिला हुआ था। शामी परम्परा के पैगम्बर की प्रथा का बीज इसी में निहित है। मूसा और मुहम्मद दोनों ने ही स्वयं को पैगम्बर और इस प्रकार ईश्वर का प्रतिनिधि होने का दावा किया और सीधे स्वयं को ही ईश्वर होने की घोषणा नहीं की। राजा के प्रतिनिधि होने की अवधारणा के कारण सुमेरियन लोग विश्वास करते थे कि उनका अपना कुछ भी नहीं है। उनके पास जो भी है सब देवों का है। वे देवों की जमीन पर आसामी की तरह काम करते हैं और देवों के घरों में किरायेदारों की तरह रहते हैं।

३. बेबीलोनिया की परम्पराएँ

(ए) प्रधान देवता मारडुक ने देवों के समुदाय को कहा कि बेबीलोन ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का केन्द्र है जहाँ उसने अपने लिए एक "भव्य महल" बनाया है। सोलोमन के मंदिर और यहूदियों द्वारा ब्रह्माण्ड का केन्द्र जेरूसलम को मानने का प्रेरक स्रोत यही है।

(बी) बेबीलोनिया के महाकाव्य (ईनुमा ईलिस) के अनुसार देवों ने मनुष्य की रचना अपनी सेवा कराने के लिए की। क्योंकि वे आलसी थे और चाहते थे कि आदमी कड़ी मेहनत करे और उनके लिए पसंदीदा भोजन की व्यवस्था करे। इस्लामी सिद्धांत कि अल्लाह ने मनुष्य को बनाया, ताकि लोग उसकी पूजा किया करें, इसी महाकाव्य से निकलता है।

(सी) बेबीलोनिया के देवता स्वर्ग के सभा–भवन में, तियामत नाम के दैत्य का वध करने के पुरस्कार स्वरूप, मारडुक को निर्माण और विध्वंस की शक्ति प्रदान करने हेतु जमा हुए। मारडुक को वस्त्र का एक टुकड़ा दिखाते हुए उनलोगों ने कहा, "मारडुक, हमारे स्वामी, अब आप देवताओं के अगुआ हुए। आप सिर्फ एक शब्द बोलकर निर्माण या विध्वंस कर सकते हैं[९]। एक शब्द बोलिये और यह वस्त्र गायब हो जायेगा, फिर बोलिये और यह उसी रूप में प्रकट हो जायेगा।

(डी) सुमेरियन देवता इनलिल जो इल्लिल[१०] के रूप में भी जाना जाता

था, आँधी—तूफान, भारी वर्षा और प्रलयंकारी बाढ़ लाने वाला भयानक छवि की प्रसिद्धि वाला देवता था। बदला लेने वाले स्वभाव के कारण उसे जंगली साँढ़ कहा जाता था।

(ई) सभी मेसोपोटामियन देवता बेटे—बेटियाँ वाले थे। वे उच्च स्तर पर मनुष्य की संस्कृति का ही पालन करते थे। इस प्रकार विश्वासी मनुष्यों के अच्छे गुणों को उनलोगों ने अपना लिया था।

यहूदियों के भगवान यह्वे और मुसलमानों के भगवान अल्लाह के गुण, स्वभाव और चरित्र मनुष्यों के समान ही थे।

(एफ) देव—देवियों के मूल में भय था, जिनको विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों का प्रतिनिधि समझा जाता था। उदाहरण के लिए कैनन का देवता ''बाल'' वर्षा, गर्जन और चमक का देवता था। उसने घोषित किया था कि वह आगे मौत को रोक देगा। मृत्यु का भय सबसे बड़ा भय था, जिसने मनुष्य को अमरत्व की खोज के लिए प्रेरित किया। अक्काडियन हीरो गिलगमेश सुमेरियन पौराणिक कथाओं को प्रतिबिम्बित करता है जिनका सदियों तक अस्तित्व बना हुआ था। वह मृत्यु के भय से व्याकुल होकर सर्वत्र अमरत्व की खोज में भटकता रहा। अन्त में हार कर वह भारी दु:ख और निराशा में विलाप करने लगा।

अपनी खोज के क्रम में वह एक जादुई पौधा के सम्पर्क में आया जिसको ''बूढ़ा को युवा करने वाला'' पौधा कहते थे। उसने इसे समुद्र की निचली सतह पर उगते हुए पाया। वह इसकी एक शाखा प्राप्त करने में सफल हो गया। वापस लौटने पर वह सूर्य की भयंकर गर्मी से बेचैन होकर, कपड़े उतार कर ठंडे पानी के एक तालाब में समा गया। एक साँप प्रकट होकर पौधे को लेकर एक कुएँ में घुस गया। पौधा सच्चा था क्योंकि साँप के शरीर से पुराना चमड़ा छूट गया और नया चमड़ा उग आया। युवा होने के सभी चिन्ह उसमें प्रकट हुए। ''जेनेसिस'' में साँप का वर्णन महज संयोग की बात नहीं है। वह इस प्राचीन दन्तकथा से अवश्य ही प्रभावित होगा।

(जी) गिलगमेश (और इनकिडू) ने डरावने सपने देखे जिसमें उस बदरूप स्थान का भी दृश्य था जहाँ से मनुष्य वापस नहीं आता है। यह नर्क

की अवधारणा की ही नकल है।

(एच) सुमेरियन पुराण—कथा के अनुसार अदावा पहला मनुष्य था जिसने बोलने की शुरुआत की। वह देवता नहीं था। देवता अनू द्वारा उसे अमृत दिया गया जिसे उसने लेने से इनकार कर भारी गलती की जिसके चलते आने वाली पीढ़ियों पर रोग और मृत्यु का कहर छा गया। ईव ने आदम को बहकाने की यही गलती की थी।

(आई) बेबीलोनिया की पौराणिक कथा के अनुसार अनू देवता के आदेश पर देवी ''अरूरू'' ने अनू के समान ही मिट्टी की एक मूर्ति तैयार की और 'इनलिल' के पुत्र 'निनुरता' को उसमें साँस डालकर जीवन देने के लिए कहा।

दूसरी कथा के अनुसार मरडुक देवता ने घोषणा की कि वह एक जानवर बनायेगा जिसे मनुष्य कहा जायेगा। मरडुक के पिता ईया ने मनुष्य का रूप तैयार कर उसमें दैवी गुणों से युक्त आत्मा का प्रवेश कराया ताकि उसकी नसों में देवत्वपूर्ण रक्त की भी एक बूँद प्रवाहित हो सके। ऐसा उसने आदमी में थोड़ी अच्छाई डालने के लिए किया। यही जेनेसिस के आदम की रचना का आधार है।

(जे) यह्वे के सादृश्य वाले 'एल' ने नदियों के स्रोत को वश में किया; एक नदी ने अपने जल से बाग को सींचा। विद्वानों के अनुसार बाइबिल के इडेन से इसकी समानता है।

(के) सुमेरिया का पानी का देवता 'एनकी' का संबंध एक ऐसी कथा से है जिसका सूत्र हिब्रू कहानी के आदम और इडेन के बाग से जुड़ा है। एनकी, पृथ्वी माता निनहुरसंगा के साथ, स्वर्ग के समान दिलमुम (जो बहरीन में अवस्थित था) में रहता था। दिलमुम शान्ति और आनन्द का घर था जहाँ दु:ख और अभाव का नाम भी नहीं था क्योंकि वहाँ बुढ़ापा और रोग नहीं था, सबमें एकता थी, और यहाँ तक कि जानवर भी आपस में अत्यन्त मित्रवत थे। एनकी और निनहुरसंगा में पति—पत्नी के पारस्परिक प्रेम के कारण स्वर्गिक आनन्द का वातावरण था। एनकी द्वारा निनहुरसंगा के लगाये हुए आठ पौधों को निगल जाने के कारण, प्रेमपूर्ण वातावरण भयंकर विषाद के वातावरण में बदल गया। निनहुरसंगा

ने कुपित होकर एनकी को मृत्यु का शाप दे दिया और एनकी कुछ न कर सका। अन्त में एक लोमड़ी निनहुरसंगा को एक सुन्दर पुरस्कार के लिए वापस लाई। अपने जीवन साथी के उद्धार के लिए उसने आठ देवों की रचना की, उसमें एक निनती थी "पसली की हड्डी की औरत" दिलमुम नामक उस स्वर्गिक स्थान में एक दैवी महत्व का पवित्र पेड़ था जिसको किसकानू कहते थे। महत्व के सभी कामों के केन्द्र में वह अवश्य होता था। अच्छा और बुरा के ज्ञान का बाइबिल वृक्ष 'किसकानू' की ही नकल है और उसी प्रकार आदम की पसली से ईव की पैदाइश की कहानी भी।

भारतीय और कैननाइट प्रभाव

सीरिया, फीलीस्तीन और बेबीलोनिया की प्राचीन कथाओं में बहुत सारे भारतीय शब्दों को देखकर आश्चर्य होता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं – अशुरबनिपाल, गिलगमेश, उत्नापीस्तम, यम, राम, पौल, सरपनितू, जुइसूद्र, नमतार, नरगल, सिदुरी, निनहुरसंगा, कमरूसेपास इत्यादि। बेबीलोन के मंदिरों की भारतीय मंदिरों से समानता, त्रिमूर्ति और बहुपतित्व आदि प्रथाओं का पालन आदि साक्ष्य प्राचीन शामी (सेमीटिक) जगत पर सिन्धु घाटी की सभ्यता के प्रभाव को दर्शाते हैं।

(ए) कैनन या फीलीस्तीनी देवता 'एल', सिर्फ 'बाल' को छोड़कर सभी देवताओं का पिता है। वह पृथ्वी और मनुष्य का स्रष्टा है। बाइबिल में उसको स्वर्ग और पृथ्वी का स्रष्टा बताया गया है। (जेनेसिस १४:१९)। उसे दयालु कहा गया है तथा यौन शक्ति के प्रतीकस्वरूप उसे बैल का सिंघ लगाये हुए चित्रित किया गया है। इस प्रकार भारतीय देवता शिव का पशुपति के रूप में यह परिवर्तित संस्करण है।

(बी) तूफान का देवता बाल, सीरियान–फीलीस्तीनी परम्परा का एक अन्य प्रसिद्ध देवता है जिसका अर्थ स्वामी या मालिक है। उसकी उपाधि "बादल का सवार" का संबंध यह्वे से है। (साम ६८:४)। उसकी युद्ध कला और दृढ़ता के कारण उसे 'राजकुमार' या 'विजेता' समझा जाता था।

(सी) कैनन के बाल महाकाव्य में उसे मृत्यु से वापस लौटने वाला बताया

गया है। इससे पुनः जी उठने की अवधारणा, जिसे शामी मजहबों ने लिया है, के स्रोत का बोध होता है।

(डी) हीब्रू जलदैत्य, लोटन अर्थात आदि सर्प– कुण्डलीग्रस्त सर्प से भिन्न नहीं है जिसे बाल ने हराया था। ओल्ड टेस्टामेन्ट में यह्वे को ड्रैगन–हन्ता बताना, इससे समानता दर्शाता है। (इसियाह २७)

(ई) "मेरी" ग्रंथ में दैव वाणी की कला (Art of Prophecy) का वर्णन है, जो ईसा पूर्व १८वीं सदी का है। ११०० वर्ष ईसा पूर्व के मिश्र में भी इसे पाया जाता है। मंदिरों में, बिना बुलाए देव–संदेश सुनाने वाले मर्द और औरत दोनों पहुँचते रहते थे। ये अनेक तरीकों से, राजाओं और प्रसिद्ध लोगों को दैव संदेश सुनाने के लिए, उन्माद पैदा करने का उपाय करते थे। टीरियन बाल के प्रोफेट उन्माद पैदा करने के लिए स्व–भेदन, नृत्य, मंत्र और जादू का उपयोग करते थे। ये तरीके हमलोगों के समय तक सूफियों, साधुओं, गुप्त बातें बताने वालों और भविष्यवक्ताओं आदि द्वारा प्रयोग में लाए जाते रहे हैं।

(एफ) कैनन की पुरानी मान्य रीतियों, जैसे बलि देना (Sacrifice), शान्ति के लिए आहुति (Peace Offerings), हवन करना (Burnt Offerings), अर्घ्य देना (Wave Offering) आदि हिब्रू लोगों द्वारा अपना लिया गया। यहाँ तक कि बाइबिल के भजनों को भी बाल देवता की उपासना पद्धति के विकसित रूप में पहचाना गया है।

(जी) अन्त में, ईसा पूर्व ३३३ ई० में सिकन्दर महान के विजयों से पूरब के क्षेत्रों में यूनानीकरण की शुरुआत का पता चलता है। यूनानी परम्परा के २५००–३००० शब्द न केवल यहूदी पुजारियों के प्रचलित प्रार्थनाओं में बल्कि यूनानी आधिपत्य के प्रभाव के कारण सरकार, कानून, धर्म, विज्ञान, दर्शन, कला और तकनीकि आदि क्षेत्रों में भी प्रचलन में आये।

भारतीय और ईरानी प्रभाव

अब हम देखेंगे कि किस प्रकार मध्य पूर्व की पौराणिक कथाओं पर भारतीय वेदों का प्रभाव है जिससे यहूदी, ईसाई और इस्लाम आदि मजहबों का स्वरूप प्रभावित हुआ है, विशेष रूप से जरथुस्त्रवाद और

मानीवाद का । प्राचीन भारतीय शास्त्र—उपनिषद् बतलाते हैं कि स्वर्ग में आत्मा की अगवानी पाँच सौ अप्सराओं द्वारा की जाती है। परसियन पैगम्बर जरथुस्त्र जिसने वेदों से प्रेरणा ग्रहण की थी, ने अप्सराओं का वर्णन सुन्दर कुँआरियों के रूप में किया है, जो स्वर्ग में आत्माओं से मिलती हैं। पुन: स्वर्ग और नरक की धारणा भारतीय पौराणिक गल्प का ही भाग है, जो निस्संदेह संसार में सबसे पुराना है।

(ए) भारत के प्राचीन धर्म—ग्रन्थ उपनिषद् और यजुर्वेद के अनुसार आत्मा को एक सेतु से पार जाना पड़ता है। जरथुस्त्र इसे बदला देने वाला सेतु कहते हैं, जो अच्छी आत्माओं को तो स्वर्ग में जाने देता है पर बुरी आत्माओं को नरक में गिरा देता है। इस्लाम के कयामत के दिन का यह अभिन्न भाग है।

(बी) जोरोआस्टर जिसे जरथुस्त्रा और जरथोस्त्र भी कहते हैं, एक परसियम साधू था, जिसका काल ईसा पूर्व छठी शताब्दी बतलाया जाता है।

अवतार की भारतीय धारणा के अनुसार ही उसका कहना था कि भिन्न—भिन्न समय में संसार में संसार की रक्षा करने वाले आते रहेंगे। उसका कहना था कि उसने परम ज्ञानी परमात्मा अहुरा माज्दा का साक्षात्कार किया जिसने उसे सत्य का उपदेश देने का आदेश दिया।

यहूदी, ईसाई और इस्लामी विश्वास, मसीहा और संदेश—वाहक की अवधारणा इसी स्रोत से पाते हैं।

(सी) जरथुस्त्र ने एक सर्वोच्च परमेश्वर के विचार का प्रतिपादन किया था, जिसने स्वर्ग और पृथ्वी की रचना की; प्रकाश और अंधकार बारी—बारी से उसी से निकलते है, उसी का विधान अन्तिम है, वही प्रकृति का स्रोत है और वही सारे संसार का सर्वोच्च न्यायाधीश है।

एकेश्वरवाद और सृष्टि के यहूदी और इस्लामी सिद्धांत, अन्य किसी की भी तुलना में जरथुस्त्र के विचारों से अधिक प्रभावित हैं।

(डी) जरथुस्त्र की शिक्षाएँ पुन: जी उठने की अवधारणा का स्पष्ट साक्षी हैं, जब सर्वोच्च परमेश्वर अहुरा माज्दा जो एक मात्र पूजनीय है, न्याय के दिन अपना निर्णय सुनायेगा। वह स्वर्ग और नर्क के विषय में भी अपनी दृष्टि स्पष्ट करता है; न्याय के बाद पुण्यात्मा शाश्वत आनंद और

प्रकाश के राज्य में प्रवेश करेंगे जबकि दुष्टात्मा कँपाने वाले भय के अंधकार में फेंक दिये जायेंगे, जैसा कि भारतीय पुराणों में लिखा है। न्याय के दिन चारो ओर अग्नि प्रस्फुटित होगी, जो पहाड़ों के धातुओं को पिघले लावा की तरह आग की दरिया में बदल देगी। पुण्यात्मा लोग इस भयंकर आग को गरम दूध की तरह अनुभव करेंगे लेकिन दुष्टात्मा लोग इसके वास्तविक उत्पीड़क प्रभाव को भोगेंगे। दुष्टों के पाप को हटाने के लिए यह प्रक्रिया आवश्यक है जो पुण्यात्माओं की तरह ही अपने असली शरीर और आत्मा के साथ पुन: जी उठेंगे।

पुरस्कार एवं दण्ड का इस्लामी सिद्धांत यहाँ दृढ़ता से स्वर्ग और नर्क के रूप में स्थापित है, जो अल्लाह के पक्षपात के कारण मृत्यु के भय को दूर कर देता है।

पुन: जी उठने का विचार बेबीलोनिया के पुराणों 'तम्मुज' और 'इस्तार' में भी पाया जाता है, जहाँ मृत प्रेमी (तम्मुज) प्रतिवर्ष के आधा समय तक पुन: जीवित होता है। मिश्रवासी भी ओसिरिस और उसके अनुयायियों के पुन: जी उठने में विश्वास रखते थे।

(ई) बेबिलोनियावासियों के देश—त्याग के बाद, यहूदियों ने, पारसियों के अहरीमान की अवधारणा को दानव के रूप में विकसित कर लिया। एनोक की किताब में शैतान का वर्णन ईश्वर की औलाद के रूप में है, जिसने ईर्ष्या के कारण आदम की भक्ति को अस्वीकार कर दी। यह्वे ने उसे उसके अनुयायियों सहित स्वर्ग से निकाल दिया।

इस वृतांत ने ईसाइयों के शैतान विषयक विचार को जन्म दिया, जिसके अनुसार प्रत्येक जीव के साथ एक अच्छा और एक बुरा फिरिस्ता तैयार रहता है। इस्लाम में ये फिरिस्ते दो साक्षियों का रूप ग्रहण कर लेते हैं; आदमी जो भी करता है, उसे लिखते जाते हैं।

(एफ) पारसियों के स्रावोसा को, जिसका शाब्दिक अर्थ सुनाना है, इस्लाम के जिब्रील की तरह अल्लाह के संदेश—वाहक के स्तर पर स्थापित होना माना जाता है।

(जी) शरीर को शुद्ध करने के लिए ''चार आँखों वाले'' कुत्ते को शव के पास दिन में पाँच बार लाना चाहिए; जरथुस्त्र के अनुयायियों की ऐसी मान्यता थी।

(एच) 'रता–द्रुह' अर्थात पाप–पुण्य का प्राचीन भारतीय सिद्धांत जरथुस्त्र द्वारा अशा–द्रुज (सत्य–असत्य) के संघर्ष के रूप में स्पष्टता से वर्णित है। प्रथम मानव–जोड़ा को अँधेरे का स्वामी अहरिमान द्वारा पथभ्रष्ट किया गया। प्रकाश के देवता ओरमज्द और अहरिमान के बीच न्याय के दिन तक संघर्ष चलता रहेगा जब अन्ततः पुण्य की पाप पर जीत होगी। पाप–पुण्य के सिद्धान्त को शामी परम्परा के सभी मजहबों ने पाप–पुण्य के अपने दर्शनों को इसी द्वंद्व–सिद्धांत से उधार लिया है।

ईरान का और भी प्रभाव

मानी नाम के दूसरे पारसी साधू ने ईस्वी सन् तीसरी शताब्दी में उपदेश दिया कि :

(ए) सच्चे धर्म की शिक्षा देने पैगम्बर समय–समय पर अवतरित होते हैं; उसने कहा कि आदम, एनोक, बुद्धा, जरथुस्त्र और ईसा पैगम्बर थे, जो उसी श्रृंखला की कड़ी थे। वास्तव में यह उसी विश्वास का रूपान्तरण था जिसे जरथुस्त्र के शिष्यों ने विकसित किया था, जिसके अनुसार न्याय के दिन पैगम्बर जरथुस्त्र के प्रकट होने तक पृथ्वी पर उनकी तरफ से तीन उद्धारक एक–एक हजार वर्ष के अंतर पर पैदा होंगे।

(बी) प्रत्येक धर्म कुछ समय बाद भ्रष्ट हो जाता है जिसे पैगम्बर द्वारा उसकी मूल शिक्षाओं पर पुनः स्थापित किया जाता है।

(सी) उसने अपने को अन्तिम पैगम्बर घोषित किया। उसने कहा कि उसके साथ ही पैगम्बरी पर मुहर लग गई है और भविष्य में अब कोई पैगम्बर पैदा नहीं होगा। उसने आगे कहा कि उसकी शिक्षाएँ और आलेख भ्रष्ट नहीं होंगे।

(डी) उसने चुने हुओं के लिए नित्य सात प्रार्थनाएँ और श्रोता अनुयायियों के लिए चार प्रार्थनाएँ नियत कीं, जिनको दो पहर, दो पहर और संध्या के मध्य काल में,सन्ध्या के तुरंत बाद और संध्या के तीन घंटा बाद पूरा करना था।

(ई) उसने उपवास व्रत भी तय किया जो बार–बार करना होता था। उपवास की सबसे लम्बी अवधि छब्बीस दिन की थी। ये सभी सिद्धान्त इस्लाम द्वारा इस या उस रूप में (किसी न किसी रूप में) अपना लिये गये हैं, फिर भी इस्लाम यह दावा करता है कि यह अल्लाह के संदेश (वह्य) पर आधारित है।

मैंने इस अध्याय में जो कुछ भी कहा है, उसका संक्षेप में पुनः वर्णन करते हुए यह अवश्य ही जोड़ना चाहता हूँ कि पौराणिक कथाओं का जन्म, मृत्यु एवं प्राकृतिक शक्तियों जैसे सूर्य, आँधी, वर्षा आदि के भय के कारण हुआ है। लोग विश्वास करते थे कि प्रत्येक प्राकृतिक शक्ति के पीछे किसी न किसी देवी या देवता का हाथ होता है। प्रार्थना या पूजा द्वारा उन्हें संतुष्ट किया जा सकता है और उनकी कृपा से दरिद्रता, रोग और मृत्यु से छुटकारा पाया जा सकता है।

जिन लोगों ने मनुष्य के इस भय का अपने लाभ के लिए व्यापार और आध्यात्मिक प्रतिष्ठा प्राप्ति का आधार बनाया, उन्होंने प्रकृति की शक्तियों को नियन्त्रित करने वाले देवी–देवताओं को महिमा मण्डित करने के लिए मनगढ़ंत झूठी कथाओं की रचना कर डाली। एक तरफ तो उन्होंने देवी–देवताओं को श्रेष्ठ और स्वर्गिक बनाया और दूसरी ओर स्वयं को उनका प्रतिनिधि अधिकारी बना लिया और यह दावा किया कि बिना उनकी सहायता के उनतक नहीं पहुँचा जा सकता है। इस प्रकार देव–प्रतिनिधि बन कर वे स्वंय दैवी आकार ग्रहण कर लेते थे।

आरम्भ में ये स्थानीय उपासना पद्धति थे। समय बीतने के साथ ही प्रभुत्व की चाह रखने वाले लोग सामने आये, जिनकी महत्वाकांक्षा ऊँची थी और जिनमें प्रभुत्व प्राप्ति का दृढ़ आग्रह था।

वर्तमान देवताओं की जगह स्वयं को स्थापित कराने के लिए उनमें से प्रत्येक ने अनेक तरीकों और रूपों में अपने को प्रस्तुत किया जैसे ईश्वर का प्रतिनिधि (पैगम्बर, मसीहा, नबी आदि) ईश्वर–पुत्र या स्वयं ईश्वर; लेकिन सबों ने पूर्व के देवताओं से जुड़े पौराणिक विश्वासों को बनाये रखा। ऐसा क्यों? ऐसा इसलिए कि पूर्व के दैवी महत्व के पौराणिक कथाओं का गहन मनोवैज्ञानिक प्रभाव अनुयायियों के ऊपर विद्यमान होता था। इसलिए नये उम्मीदवारों में दैवी आरोपण की उनकी ग्रहणशीलता सहज होती थी।

नये पैगम्बरों और मसीहाओं ने बतलाया कि वे जो भी कहते–करते हैं सभी ईश्वर की ईच्छा के पालन में कहते या करते हैं इसमें उनकी अपनी इच्छा बिल्कुल नहीं होती। इस प्रकार उन्होंने ईश–संदेश की इस तकनीकि को पूर्णता तक पहुँचाया। यद्यपि इस युक्ति ने विभेद और भयानक पारस्परिक घृणा द्वारा मानव जाति के स्तर को बहुत नीचे तक गिराया। लेकिन पैगम्बरों और

मसीहाओं के लिए यह बहुत फायदेमंद रहा और उनका कद बहुत ऊँचा हो गया जबकि मनुष्यता का मापदण्ड मजहबी नफरत, दुष्टतापूर्ण द्रोह और हत्या के वातावरण में डूब कर पतित हो गया।

मानवता के प्रत्येक मित्र को ईश–संदेश की इस तकनीकि को ध्यान पूर्वक समझना चाहिए जो मजहबी नफरत, असहिष्णुता और अवनति द्वारा पूरे मानव–समाज को विनाश के कगार पर ला खड़ा किया है।

नोट :–

१. समानता पर ध्यान दें : जेनेसिस पानी से सृष्टि की रचना की कहानी की शुरुआत करता है और ईश्वर की चर्चा सृष्टिकर्ता के रूप में करता है।
२. समानता पर ध्यान दें : जेनेसिस ईश्वर को सृष्टिकर्त्ता बताता है।
३. यहूदी मिश्र से निकल भागे, जहाँ लोग विश्वास करते थे कि ''रा'' ने वैसा ही पालन करने का आदेश दिया है। जब मिश्रवालों ने उनकी अवज्ञा की तब ''रा'' ने उनके साथ कठोरता बरती। मूसा ने वैसा ही आदेश यह्वे से पाया था जो बर्बादी की कीमत पर भी पालन कराना चाहता था।
४. इस्लामी मजहबी मान्यताओं के अनुसार अल्लाह ने वस्तुओं का नाम आदम को सिखाया।
५. एकेश्वरवाद मूसा द्वारा मिश्र से लिया गया था यह यहूदियों का अपना नहीं था।
६. अनेक प्रकार से मूसा, यह्वे का प्रधान पुजारी था; जैसा अखनातून, एटोन का था।
७. यहाँ ईसाई धारणा ''पुनर्जीवन'' (Resurrection) के बीज निहित हैं।
८. यहूदियों द्वारा कैनन में लूटपाट के धावों का स्वरूप जिनका उद्देश्य जबरन और कर उगाही था, मिश्रवालों के व्यवहार का ही प्रतिरूप था; जो इस्लाम के मजहबी उन्मादी सैनिक रूप में बदल गया। जिसके अनुसार अधीन हुए लोगों को या तो जजिया देना पड़ता था या इस्लाम स्वीकार करना होता था।
९. इस्लाम का सृष्टि का सिद्धांत, ''कुन फा याकून'' जिसका अर्थ है अल्लाह कहता है ''हो जा'' और हो जाता है, निश्चित रूप से इसी कल्पना का विस्तार है।
१०. इल्लील इस्लाम का अल्लाह मालूम पड़ता है। बदला लेने वाले ईश्वर के रूप में यह्वे या (यहोवा) की भी इससे अनेक समानताएँ हैं।

●

3.

ईश्वरीय संदेश

ईश्वरीय संदेश की युक्ति मनुष्य को भगवान की तरह दिखाने में बड़ा उपयोगी है। यह दिखाता है कि किस तरह मध्य–पूर्व की पौराणिक कथाओं को शामी परम्परा के मजहबों के तत्वों में उसके संस्थापकों द्वारा चतुराई से बदल दिया गया है।

ईश्वरीय संदेश का असली उद्देश्य

ईश्वरीय संदेश (वह्य) क्या है ? स्वयं को ईश्वर की तरह स्थापित कराने के उद्देश्य से किसी व्यक्ति द्वारा मनुष्य के अन्दर विद्यमान ईश्वर के भय की भावना का यह शोषण है। मनुष्य अज्ञात से डरा रहता है। वह विश्वास करता है कि प्रकृति की सभी घटनाओं के पीछे कोई ईश्वरीय शक्ति होती है। इसलिए वह भय से देवताओं की पूजा करता है ताकि उसपर उनकी कृपा हो जाय। मनुष्य की इस कमजोरी का लाभ उठाते हुए, कुछ ऐसे व्यक्ति, जिनमें प्रभुत्व प्राप्ति की प्रबल आकांक्षा होती है, ईश्वर के संदेश का बहाना बनाते हैं और पुराने देवताओं को हटाकर उनकी जगह अपनी पूजा और भक्ति कराने का उपाय करते हैं। इस युक्ति की गहराई से छानबीन की आवश्यकता है। मैं शामी मजहबों यहूदी, ईसाई और इस्लाम तक ही अपनी समीक्षा को सीमित रखूँगा।

ईश्वरीय संदेश की विधि

इन मजहबों के अनुसार ईश्वर किसी अच्छे व्यक्ति को अपना प्रवक्ता चुनता है जो परिणाम तक पहुँचाने के कर्तव्य से स्वत: ही कार्यभारित रहता है। सिद्धांत में, ऐसा व्यक्ति भगवान का सेवक होता है। उसको अपनी तरफ से कुछ भी करने का अधिकार नहीं होता। उसे नबी, रसूल या पैगम्बर कहते हैं। भगवान (अल्लाह) उसे अपना संदेश कई तरह से देता है – सीधा, जैसा दो मित्र आपस में बात करते हैं, जिब्रील फिरिश्ता के माध्यम से, उन्माद या स्वप्न में, प्रत्यक्ष दर्शन द्वारा या आकाशवाणी से। वह चाहे कोई माध्यम चुने, असली उद्देश्य

होता है उसके सर्वोच्च आसन को मान्यता दिलाना और मनुष्य को याद दिलाना कि उसके अस्तित्व का अर्थ है अल्लाह के सामने झुकना और उसकी प्रार्थना करना।

कुछ ईश्वरीय संदेश अपने संबंधों को भिन्न–भिन्न रूप में प्रकट करते हैं, जैसे यहूदियों के पुरातन संरक्षकों से संविदा (Covenant) के रूप में, बेबिलोनिया से निष्कासन के समय विकसित यहूदी पुरोहिती के रूप में, ईसा में ईश्वर–पुत्र होने और उनकी भक्त–मण्डली में ईसाई विश्वास के रूप में और अल्लाह के अन्तिम पैगम्बर मुहम्मद की मध्यस्थता की शक्ति के रूप में।

मसीहा का मीशन

मसीहा की अवधारणा लगभग पैगम्बर की अवधारणा के ही आसपास है। जब पैगम्बरों द्वारा स्थापित मजहब के पालन में गैर मजहबी लोगों द्वारा कपट, उत्पीड़न और अन्याय द्वारा बाधा पैदा कर दी जाती है, तथा गरीबी और गुलामी की जिन्दगी जीने पर विवश कर दिया जाता है, तब मसीहा पैदा होता है। वह उस परिस्थिति को उलट कर विश्वासियों का कल्याण और अविश्वासियों का विनाश करता है। यहूदी और ईसाई, मसीहा पैदा होने का स्वप्न देखते हैं। मुसलमान महदी या ईमाम के प्रकट होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

जब हम ईश्वरीय संदेश की युक्ति को ध्यानपूर्वक देखते हैं तब यह पता चलता है कि यह एक प्रभावशाली व्यक्ति की रणनीति है, जो मनुष्यों पर शासन करना चाहता है। मृत्यु के बाद भी लोगों की भावनाओं को प्रभावित कर अपनी पूजा और भक्ति कराना चाहता है।

यदि पाठक निम्नलिखित कथनों की निष्पक्षता और निष्ठापूर्वक समीक्षा करने को तैयार हों, तब उनको इस निष्कर्ष को स्वीकार करने में कोई असुविधा नहीं होगी।

ईश्वरोक्ति के विरुद्ध वाद (अल्लाह के वह्य के विरुद्ध मामला)

(१) अल्लाह अपना एकछत्र शासन स्थापित करने हेतु अपने कानून की घोषणा करता है और चाहता है कि आदमी उसका अक्षरशः पालन करे। यदि आदमी उसका पालन करता है तब वह स्वर्ग (जन्नत) में जाता है अन्यथा नर्क (दोजख) का भागी बनता है।

(ए). यदि अल्लाह मनुष्य का पूर्ण समर्पण चाहता और सृष्टि का उद्देश्य मात्र अपनी पूजा कराना होता, तब वह आदमी को भी प्रकृति के क्रिया–कलाप को संचालित करने वाले सामान्य नियमों जैसा ही बनाता।

(बी) मनुष्य का अस्तित्व स्वतंत्र विचार पर, अर्थात चुनाव करने और कार्य करने पर आधारित है। इस सिद्धान्त पर आदमी की रचना करने के बाद यदि अल्लाह आदमी से 'रोबोटिक' व्यवहार अपनाने की अपेक्षा करता है, तब उस को नहीं मालूम कि वह क्या कर रहा है और इसलिए अल्लाह कहलाने के योग्य ही नहीं है।

ईश्वरीय कानूनों की असंगति

(सी) ईश्वरीय नियम जो शाश्वत और अपरिवर्तनीय हैं, मनुष्य की समस्याओं को सुलझाने की जगह ईश्वर को ही महिमा मण्डित करते हुए, लगते हैं। मनुष्य की समस्याओं के समाधान के लिए नियमों को वर्तमान से संबंधित होना चाहिए न कि अतीत से। यही कारण है कि हर देश की अपनी विधायी पालिकाएँ हैं, जो लोगों की वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु नये विधान बनाती हैं और पुराने को स्थगित करती हैं या रद्द करती हैं।

वर्तमान पद्धति की अनदेखी करना और सदियों पुराने व्यवहारों और कानूनों के पालन पर जोर देना, पागलपन है। ऐसे कानूनों का पालन करना गुलामी प्रथा को लागू करना है। वास्तव में, वे आगे पालन के योग्य ही नहीं रह गये हैं। क्योंकि जब भी वे लागू किये जाते हैं पुराने कानूनों की गलत व्याख्या करके ही किये जाते हैं जिससे मूल कानूनों का ही खण्डन हो जाता है। यह पाखण्ड दैवी कानूनों की पवित्रता बनाए रखने के लिए किया जाता है, क्योंकि धर्म–प्रधान वर्ग के सदस्यो की प्रतिष्ठा, अधिकार और सम्पत्ति का यह स्रोत होता है।

स्वर्ग (जन्नत) और नर्क (दोजख) बनाम स्वतंत्र विचार

(डी) आदमी को दोजख से डराना और जन्नत के प्रलोभन का रिश्वत देना एक सस्ती चालबाजी है जो ईश्वरीय पवित्रता को दूषित करने वाली है। यह स्वतंत्र विचार के सिद्धांत की बिल्कुल विरोधी है।

ईश्वर बनाम मनुष्य

(२) चूकि ईश्वरीय संदेश का उद्देश्य ईश्वर को महिमा मण्डित करना भर है, इसलिए इसका इस्तेमाल मनुष्य को स्वेच्छा से आत्मोत्थान के लिए प्रेरित करने की जगह उसको परेशान, अपमानित और सम्मोहित करने के लिए किया जाता है।

(ए) यह स्पष्ट है कि ईश्वरीय संदेश ईश्वर के लिए ही आवश्यक है, आदमी के लिए नहीं, जिसका हित ईश्वर के हित के विपरीत है।

(बी) ईश–संदेश की आवश्यकता बुराई को दूर करने या मिटाने के लिए समझी जाती है।

यदि ईश्वर (यह्वे, गॉड या अल्लाह) सृष्टिकर्ता है तब वह बुराई का भी सृष्टिकर्ता है। यह उसका पाखण्ड नहीं कहा जायेगा कि बुराई की रचना कर मनुष्य को उससे सावधान करे? पुनः, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है कि दैवी कानूनों, पैगम्बरों या मसीहाओं ने कभी बुराई पर जीत हासिल की हो। इसके विपरीत सच्चाई यह है कि प्रत्येक पैगम्बर या मसीहा ने दूसरे देवताओं और गुरुओं को अस्वीकार कर और अपने प्रति अनन्य विनम्रता एवं आज्ञाकारिता की माँग कर मानव जाति में और भी विभेद पैदा कर दिया और इस प्रकार नफरत और जंग द्वारा बुराई को और भी बढ़ाया। फिर क्या यह पागलपन नहीं है कि वह सभी प्रकार के दुर्निवार्य प्रलोभनों को, जो मनुष्य को पतन की ओर ले जाते हैं, बना कर उससे बचे रहने की अपेक्षा करे?

पैगम्बर एक असंगति

(३) यदि ईश–संदेश का उद्देश्य बुराई को पराजित करना है तब माध्यम अर्थात् पैगम्बर मसीहा आदि का होना बिल्कुल ही आवश्यक नहीं है।

(ए) बुराई यहाँ सदा मौजूद रहती है। इसके दमन के लिए सबसे उपयुक्त यह होता कि ईश्वर सदा दृष्टिगोचर रूप में उपस्थित रहता ताकि लोग उससे सीधे सलाह ले सकते। उसकी उपस्थिति और उसके प्रत्यक्ष आदेश लोगों पर अत्यन्त बाध्यकारी और बुराई पर जीत के लिए दृढ़तापूर्वक कार्रवाई हेतु प्रेरक होते।

(बी) एक बार भी यदि लोग ईश्वर को देख पाते और उससे सम्पर्क कर पाते तब लोग सहजता से बुराई का त्याग कर उसके आदेशों का पालन करने लगते। इसके विपरीत, माध्यम, पैगम्बर या मसीहा मनुष्य होता है। वह खाता है, पीता है, नित्यकर्म करता है, घूमता है, बात करता है, सोता है, खुशी या गम अनुभव करता है, यौन तृप्ति करता है, बीमार पड़ता है उसे ईलाज की आवश्यकता होती है, इत्यादि। इन सभी तथ्यों के बावजूद वह दैवी होने का दावा करता है, तब उसका यह दावा संदेह

से परे नहीं हो सकता। इसका कोई प्रमाण नहीं है कि वह जो कहता है वह ईश्वर द्वारा प्रेरित है या उसका सीधा आदेश है। यदि लोग उसपर विश्वास नहीं करते हैं तो दोष ईश्वर का है जिसने अपने संदेश को देने हेतु संदेहास्पद और निम्न पद्धति का चुनाव किया। यदि वास्तव में संदेश उसका है तो उसे सीधे प्रकट करना चाहिए था।

ईश–संदेश अनिष्ट का स्रोत

(४) अल्लाह जितना पैगम्बर और नबी भेजता है लोगों के बीच उतना ही पांथिक आदेश, विद्वेष और घृणा के कारण विभेद और कलह बढ़ता है। इस प्रकार ईश–संदेश उनके मार्गदर्शन के लिए निरर्थक हो जाता है और अनिष्ट का स्रोत बन जाता है।

(ए) और यह तो और भी बुरा होता है जब कोई पैगम्बर घोषणा करता है कि वह अन्तिम पैगम्बर है और उसके बाद कोई पैगम्बर नहीं होगा। यदि उसकी आवश्यकता बुराई को खत्म करने के लिए है जो कि यहाँ सदा मौजूद रहती है तब पैगम्बरों की सदा आवश्यकता होगी। इस प्रकार अन्तिम पैगम्बर होने की घोषणा पैगम्बर की उपयोगिता पर ही प्रश्न–चिन्ह लगा देती है।

(बी) जो भी हो, अन्तिम पैगम्बरी का एक ज्यादा महत्वपूर्ण पक्ष यह होात है कि समय बीतने के साथ पैगम्बरों की शिक्षाओं की व्याख्या की आवश्यकता होती है ताकि उसका अर्थ स्पष्ट हो सके, जो पहले से उपलब्ध नहीं होता। इसे कई कारणों से किया जाता है : पहला, लिखित सिद्धान्त या धर्मग्रन्थ सभी समय और सभी अवसरों पर मार्गदर्शन करने में समर्थ नहीं होता। दूसरा, मजहब पृथ्वी पर न केवल सबसे बड़ा व्यापार है बल्कि शक्ति का भी सबसे बड़ा स्रोत है। इसलिए धर्मान्ध लोग विशेष रूप से मजहबी नेता सभी प्रकार की चालों से मजहबी विश्वास को बनाये रखने हेतु सचेष्ट रहते हैं। और अन्त में, प्रत्येक मजहब में कुछ व्यक्ति ऐसे होते ही हैं जो अपनी दैवी छवि बनाने की उत्कट इच्छा रखते हैं, जैसा उनके संस्थापक रखते थे; पर साहस और सामर्थ्य की कमी के कारण वे अपनी अलग दैवी दुकान नहीं चला पाते। इसलिए संस्थापकों के प्रति अपनी भक्ति का ढिंढोरा पीट कर अपनी दैवी छवि, और एक हद तक अपने को उनका प्रतिनिधि या उप

अधिकारी बनाते हैं। इस तरह वे अपना संबंध संस्थापकों से उसी प्रकार जोड़ते हैं जिस प्रकार संस्थापक अपना संबंध ईश्वर से जोड़ने का दावा करते हैं।

अब यह देखना आसान है कि किस प्रकार ईश–संदेश अपने घोषित उद्देश्य को पूरा करने में विफल है; क्योंकि पैगम्बर कम हो या बहुत उससे कोई मतलब नहीं सधता। न इससे ही फर्क पड़ता है कि पवित्र शिक्षाएँ लिखित हैं या जबानी। बहुत जमाने तक धर्मग्रन्थों के शब्द ठीक–ठीक मूल रूप में ही रह सकते हैं लेकिन उनकी आत्मा और अर्थ बदल जाते हैं और इस प्रकार वे मार्गदर्शन के योग्य ही नहीं रह जाते।

ईश–संदेश दिक्भ्रमित करने का स्रोत

(५) ईश–संदेश की तकनीकि पर आधारित प्रत्येक मजहब दावा करता है कि एक मात्र वही सच्चा है बाकि सभी झूठे हैं। ऐसे दस मजहबों में केवल एक ही सच्चा हो सकता है। चूकि नौ झूठे हैं इसलिए दसवाँ भी अवश्य ही झूठा होगा। ईश–संदेश वाले मजहब किस प्रकार मार्गदर्शक हो सकते हैं यदि उनमें सच्चा छाँट निकालना संभव ही न हो ? निश्चय ही यह दिक्भ्रमित करने का स्रोत है।

ईश–संदेश और भविष्य कथन

(६) ईश–संदेश सुनाना और भविष्य बतलाना, ये दोनों ही करने वालों के व्यवसाय लगभग एक ही समान, एक ही प्रकृति वाले हैं। ईश–संदेश सुनाने वाले अर्थात पैगम्बर, नबी, सद्गुरू आदि ईश्वर से अपनी निकटता जोड़ने के कारण दिव्य स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं। भविष्य बतलाने वाले, सदा अपने पिछलग्गुओं और ग्राहकों को आरम्भ से ही अपनी चतुर प्रस्तुति और दोमुँही बात बोलकर संतुष्ट करते रहे हैं। यह एक पाप है, जिसे वे पुण्य के समान दिखाने में सफल होते हैं। अपने कपट को छली शब्दों के जाल में सजा कर वे ऐसा प्रस्तुत करते हैं कि उनके चाहने वाले उनमें वह देखने लगते हैं, जो उनमें है ही नहीं।

(ए) चमत्कार दिखाना भी भविष्य कथन का अभिन्न भाग है। ये सब काल्पनिक बातें, अनुयायियों द्वारा गढ़–गढ़ कर अपने मजहबों के संस्थापकों का दैवी स्वरूप बनाने के लिए प्रस्तुत की जाती हैं और उनसे स्वयं को जोड़ कर अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाई जाती है। चमत्कार न तो किया

जा सकता है और न ही ईश्वरीय संदेश या सिद्धांत की गुणवत्ता में ही उसकी कोई उपयोगिता है। आज के इन्द्रजाल वालों को देखें, जो जादूगर कहलाते हैं। उनके प्रदर्शन कितने आश्चर्यजनक और अविश्वसनीय होते हैं। पर उनके चकित करने वाले प्रदर्शन कोई भक्ति के लिए भ्रम पैदा नहीं करते, ये मात्र भ्रमित करने वाले कौशल दिखलाते हैं।

(बी) विचारपूर्वक ध्यान देने पर, भविष्य कथन, नैतिकता और धर्मनिष्ठा की अवधारणा के लिए हानिकारक सिद्ध होता है। यदि भविष्य में घटने वाली घटनाओं का पूर्व प्रकाशन संभव है, मान लें १००० वर्ष बाद की, इसका मतलब है कि हर चीज पहले से निश्चित है और तब लोगों के लिए पुण्यात्मकता के लिए तपस्या करने या ईश–संदेश सुनने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है।

ईश–संदेश (वह्य) का वास्तविक उद्देश्य

(७) ईश–संदेश का असली उद्देश्य मनुष्य का उत्थान होना चाहिए, न कि ईश्वरीय महिमा–मंडन के लिए उत्पीड़न की धमकी और बढ़िया खान–पान के प्रलोभन द्वारा लोगों को गुलाम बनाना। अल्लाह जो मनुष्य की प्रतिष्ठा की कीमत पर अपनी ही पदोन्नति चाहता है, न उपकारी है, न सृष्टिकर्ता और न ही सर्वशक्तिमान।

(ए) ऐसा उपाय करने वाला, ईश्वर (अल्लाह) नहीं हो सकता। यह अल्लाह का संदेश सुनाने वाला पैगम्बर ही होता है, जो अपनी भक्ति कराना चाहता है। ऐसा क्यों? क्योंकि अल्लाह उसका कैदी है जो लोगों को पैगम्बर के माध्यम से अपना संदेश सुना कर धन्य हो जाता है। चूकि अल्लाह न देखा जाता है और न उससे मिला जाता है; इसलिए पैगम्बर जैसा बतलाता है उससे उसका भिन्न स्वरूप होने का सवाल ही पैदा नहीं होता। पैगम्बर के जो शब्द हैं वही सर्वप्रधान और सर्वशक्तिमान हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि "अल्लाह के संदेश वाले" सभी मजहबों के अनुयायी अल्लाह से अधिक पैगम्बर को ही इज्जत देते हैं। किसी आदमी को अपना पैगम्बर चुनकर अल्लाह उसे अपने समकक्ष दर्जा (ईश्वरत्व) प्रदान कर देता है क्योंकि अल्लाह और पैगम्बर के व्यक्तित्व अभिन्न रूप से जुड़ जाते हैं। निश्चित रूप से यह एकेश्वरवाद की अवधारणा को नष्ट कर देता है।

धर्मान्धता और वह्य (ईश–संदेश)

(८) अल्लाह का संदेश सुनाने वाले पैगम्बरों को पूरी मानव जाति को अपना संबोधन करना चाहिए था, जिससे प्रत्येक व्यक्ति का उससे संबंध होता। पर बात वैसी नहीं हुई। यहूदी ईश्वर (यह्वे) ने मानव जाति का रचयिता होने के दावे के बाद भी सिर्फ यहूदियों को ही प्रेरित किया। ईसाइयों के गॉड ने सिर्फ ईसाइयों को ही आशीर्वचन दिया और अविश्वासियों को नष्ट होने का शाप दिया और इस्लाम का अल्लाह काफिरों से नफरत करने (और उनकी हत्या तक करने की) आज्ञा दी।

अल्लाह का संदेश (वह्य) बनाम प्रगति

(९) अल्लाह का संदेश न केवल धर्मान्धता, असभ्यता और पांथिक नफरत का कारण है बल्कि अवनति, आदिम अवस्था और अंधविश्वास का भी स्रोत है। वैज्ञानिकों और अनुसंधानकर्ताओं के विषय में इनके विचारों से इसका स्पष्ट बोध होता है। गैलीलियो के साथ जो व्यवहार हुआ वह सामने है। न्यूटन और आईन्स्टीन जैसे मेधावी लोगों ने अपने खोजों के निष्कर्ष की तार्किक अभिव्यक्ति नहीं की। उंसका कारण, ईश–संदेश से उपजा अंधविश्वास ही था। आधुनिक प्रगति जो मनुष्य के महत्व को स्थापित करता है, ईश–संदेश के बंधन के विरुद्ध विद्रोह के कारण ही अस्तित्व में आ सका।

(ए) फिर, ईश–संदेश का मानव कल्याण के लिए रंच मात्र भी उपयोग नहीं है। क्या ईश्वर (या अल्लाह) ने कभी स्माल पौक्स (चेचक), कैन्सर या एड्स के निवारण हेतु कभी संदेश दिया? मनुष्य को अपने अस्तित्व रक्षा के लिए स्वयं मार्ग ढूँढना पड़ता है। वह जिस प्रकार अपनी उम्र बढ़ाने में सक्षम है उसी प्रकार जीवन की शाश्वतता की खोज करने में भी सक्षम है।

अल्लाह का संदेश (ईश–संदेश) और मानवीय समस्याओं की अनदेखी

(१०) ईश्वरीय संदेश को वास्तविक होने के लिए निश्चय ही उसे मनुष्य की मुख्य समस्याओं पर केन्द्रित होना होगा, जैसे :

(ए) गुलामी और

(बी) लैंगिक असमानता

लेकिन इसके बिल्कुल विपरीत ईसाई चर्च ने दास प्रथा को गॉड की ईच्छा के रूप में स्वीकृति दी। न तो मूसा ने और न ही मुहम्मद ने ही इसका उन्मूलन किया। बल्कि इसे और भी बुरा करते हुए औरतों को मर्दों की इच्छा का दास बना दिया। ईश–संदेश, शासक बनने का एक हथियार है। ईश–संदेश सुनाने वाला अर्थात पैगम्बर या नबी स्वयं को सर्वशक्तिमान ईश्वर का सेवक या प्रतिनिधि बन कर देवत्व ग्रहण कर लेता है। चूकि सभी शामी मजहब सृष्टिकर्ता ईश्वर की अवधारणा पर स्थापित हैं इसलिए कोई भी उसकी उपस्थिति की संभावना पर विचार अवश्य करेगा। जितना ही इस मान्य पक्ष पर विचार किया जाता है उतना ही यह अग्राह्य प्रतीत होता है। ऐसा क्यों ?

क्या सृष्टिकर्ता ईश्वर होता है?

सृष्टिकर्ता ईश्वर की कोई संभावना नहीं होती है।

१. ब्रह्माण्ड के आरम्भ में सृष्टिकर्ता ईश्वर के होने के विषय में सोचना कार्य–कारण सिद्धांत के अनुकूल नहीं है; क्योंकि ईश्वर को कौशल, शक्ति और बुद्धि में पूर्ण समझा जाता है, लेकिन हम जानते हैं कि प्रत्येक वस्तु सरल से जटिल, अपरिष्कृत से परिष्कृत और अपूर्ण से पूर्ण के नियम के अन्तर्गत अस्तित्व में आती है।

(ए) पूर्णत्व का विचार स्वत: एक अन्य प्रश्न खड़ा करता है : पूर्ण ईश्वर की रचना भी एक दूसरे सृष्टिकर्ता द्वारा अवश्य ही किया गया होना चाहिए; जो और ज्यादा श्रेष्ठ होगा।

(बी) कारण, सृष्टिकर्ता ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता है। इसकी स्वीकारोक्ति विश्वास पर ही सम्भव है, जो एक मार्गदर्शक न होकर सिर्फ ढाल होता है। मार्गदर्शक का काम भ्रम दूर करना, मुक्ति दिलाना और दृष्टि प्रदान करना होता है जबकि ढाल का काम तात्कालिक चोट से बचाव करना भर होता है, वह भी उचित हल के बिना और यह निराशा, उपहास और विनाश का द्वार खोल देता है।

मिश्रण और ईश्वरत्व

२. कोई पद्धति या कोई प्राणी कई अलग–अलग भागों से मिलकर बने होते हैं। ईश्वर भी एक प्राणी है इसलिए उसको भी बनाने वाले विभिन्न हिस्से होंगे। ये हिस्से भी अवश्य पहले से विद्यमान होंगे जिनसे वह

अन्तिम रूप ग्रहण किया। तब वह आरम्भ से ही पूर्ण नहीं हो सकता और न ही सृष्टिकर्ता हो सकता है क्योंकि वह स्वंय अनेक पदार्थों के समिश्रण से बना है।

(ए) इस संबंध में यह स्मरण करना चाहिए कि सभी शामी मजहब भौतिक ईश्वर की बात करते हैं। यहूदियों ने यह्वे (यहोवा) को देखा था जिसने मूसा से मित्र के समान बात की थी। ईसा ईश्वर के ही अवतार थे और इस्लामी ईश्वर अल्लाह सिंहासन पर बैठता है और फिरिश्तों द्वारा ढोया जाता है। एक भौतिक ईश्वर निश्चित रूप से अन्य भौतिक पदार्थों के समान अनेक पदार्थों के संयुक्त होने के बाद अस्तित्व में आया है।

ब्रह्माण्डीय नियम बनाम सृष्टिकर्ता ईश्वर

३. ब्रह्माण्ड का भौतिक अध्ययन दिखलाता है कि यह पूरी तरह मौलिक नियमों के अधीन है न कि किसी सृष्टिकर्ता की इच्छा के।

सृष्टिकर्ता ईश्वर और असामर्थ्य

४. सृष्टिकर्ता ईश्वर सभी प्रकार के अभाग्य और विनाश, निराशा और रोग, विषाद और पीड़ा, द्रोह एवं कपट, अंग–विच्छेदन और हत्या, चोरी और ठगी बलात्कार और नस्लवाद के लिए जिम्मेवार है। ये सभी बुराइयाँ उसी की इच्छा से निकलती हैं और इस प्रकार उसकी असमर्थता एवं अपूर्णता को प्रमाणित करती हैं।

सृष्टिकर्ता ईश्वर और उद्देश्य

५. यदि कोई सृष्टिकर्ता ईश्वर है तो सृष्टि का अवश्य ही कोई उद्देश्य होगा। निश्चित रूप से ईश्वरीय उद्देश्य का अनुमान करना संभव नहीं है।

(ए) कुछ लोगों का कहना है कि यह मनुष्य का ईश्वर से संयोग है। दो भिन्न आस्तित्वमान तत्वों का संयोग सम्भव नहीं; यह तभी सम्भव है जब दोनों की मौलिक तत्वता समान हो। यदि यह बात होती तो दोनों एक होते और इसलिए प्रथमत: ही उनको अलग नहीं किया जा सकता। इसलिए सृष्टिकर्ता ईश्वर का आस्तित्व नहीं होता।

(बी) कुछ लोगों का कहना है कि सृष्टिकर्ता ईश्वर ने आदमी को इसलिए पैदा किया कि वह उसकी पूजा करे आज्ञाकारी को स्वर्ग का आनन्द मिलेगा और अवज्ञाकारी नर्क की आग में जलाये जायेंगे।

ईश्वरीय होने की बात तो दूर की है, ऐसा ईश्वर सामान्य मनुष्य की योग्यता के स्तर पर भी खरा नहीं उतरता है। पुरस्कार और दण्ड की यह प्रक्रिया अन्यायपूर्ण एवं मनमानी है क्योंकि मनुष्य जैसा भी है उसी का बनाया हुआ है। जो भी हो, यह सृष्टि का उद्देश्य नहीं हो सकता क्योंकि मनुष्य में स्वतंत्र विचार का गुण होता है, जो कि चुनने या अमान्य करने की शक्ति है, और इस प्रकार सृष्टि की अवधारणा अपनी आन्तरिक वृत्ति से ही विरोधाभासी है।

(सी) ब्रह्माण्ड का जो भी उद्देश्य है ईश्वरीय इच्छा के तुल्य है और अन्य किसी भी चीज पर उसकी वरीयता है। ईश्वर की कृपालु, बुद्धिमान और पालनहार की प्रकृति में विश्वास करने के लिए पुजारी वर्ग जो सिखाता है उससे वह अत्यन्त स्वार्थी और आत्म केन्द्रित सिद्ध होता है क्योंकि उसका असली उद्देश्य अपनी इच्छा की पूर्ति होता है न कि मानव का कल्याण।

सृष्टिकर्ता ईश्वर बनाम पूर्णत्व

६. सभी शामी मजहब, ईश्वर के गुणों, स्वभाव और चरित्र का जो वर्णन करते हैं, वे सभी मानवीय मूल के हैं; वह दु:ख और आनन्द के अधीन होता है, हत्या और दया करने की इच्छा अनुभव करता है, शत्रुओं की निन्दा और मित्रों की प्रशंसा करता है, प्रेम और घृणा का व्यवहार करता है और अपने स्वभाव के अच्छे और बुरे पक्षों को प्रकट करता है। वह अवगुणों का संग्रह है और सहज ही में उत्तेजित होता है, उसमें स्थिरता, शान्ति और बुद्धि की कमी है, इस कारण वह पूर्ण या सृष्टिकर्ता नहीं हो सकता। वह और कुछ नहीं, सिवाय मनुष्य की कल्पना की उड़ान के।

सृष्टिकर्ता ईश्वर संदेश सुनाने वालों का हथियार

७. पैगम्बर या नबी, ईश्वर का उपयोग अपने प्रभुत्व के लिए, एक औजार के रूप में करते हैं। ईश्वर अपने को प्रकट करने के लिए व्यक्ति विशेष के माध्यम तक सीमित नहीं रख सकता है, जो सभी मानवीय दुर्बलताओं का आगार होता है। उसे प्रत्येक व्यक्ति के समक्ष अलग–अलग खुले रूप में स्वयं को प्रकट करना चाहिए यदि उसके संदेश का उद्देश्य मानव कल्याण

है न कि सिर्फ पैगम्बर या नबी का कल्याण।

सृष्टिकर्ता ईश्वर सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता है

८. सृष्टिकर्ता होने के लिए ईश्वर को सर्वशक्तिमान होना पड़ेगा। क्या वह अपनी हत्या कर सकता है ? क्या वह इस ब्रह्माण्ड के बिना कुछ कर सकता है? स्पष्टत:, वह नहीं कर सकता है। यदि वह कर पाता तो इस ब्रह्माण्ड को नहीं बनाता। यदि उसने वैसा अनावश्यक रूप से किया तब इस ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी है निरर्थक और बेकार है और तब इसका मतलब हुआ कि वह मूर्खतापूर्ण व्यर्थ का काम करना पसंद करता है। कोई मूर्ख सर्वशक्तिमान और बुद्धिमान नहीं हो सकता है। यह संसार इतना आश्चर्यजनक है कि अपने सृष्टिकर्ता की योग्यता में नहीं अँट सकता।

सृष्टि एवं बाध्यता

९. यदि यह क्रमबद्ध ब्रह्माण्ड एक सृष्टि है तब सृष्टि ईश्वर की सबसे बड़ी लालसा हैं, जो बाध्यता की हद तक पहुँच जाती है जिसमें बुद्धि, इच्छा और ज्ञान की कमी होती है। यह किसी नशा के आदी व्यक्ति द्वारा नशा के सेवन के समान होता है जो उसके बिना रह ही नहीं सकता।

ईश्वर निरपेक्ष नहीं हो सकता

१०. ईश्वर एक प्राणी है। इसलिए वह अपने आसपास के वातावरण से प्रभावित होता है, वह निरपेक्ष और सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता है। यदि वह एक प्राणी नहीं है, तब उसका अस्तित्व नहीं है। क्योंकि जिसका भी अस्तित्व है उसका किसी प्रकार का भी एक स्वरूप होता है चाहे वह कितना भी विरल क्यों न हो। सेमिटिक पुराण—कथाओं को ऊपर लाने के बाद अगले अध्यायों में मैं सेमिटिक मजहबों की अर्थात यहूदी, ईसाई और इस्लाम की जाँच करूँगा।

●

4.

यहूदी

यहूदी मजहब को ईसाइयत और इस्लाम दोनों की गंगोत्री समझा जा सकता है। ईसाइयत मूल यहूदी मत का अपसिद्धांत है। इस्लाम सदियों से यहूदी मत में आयी विकृति के कारण उसका संशोधित संस्करण के रूप में पैदा होने की बात करता है। ये सभी मजहब अरब प्रायद्वीप में पैदा हुए। शामी परम्परा से ऐक्यबद्ध होने के कारण स्वाभाविक रूप से वे समान उद्देश्य घोषित करते हैं, सोच की समान धारा प्रकट करते हैं और लक्ष्य प्राप्ति के लिए समान तरीके अपनाते हैं। वे ऊपर से देखने में भिन्न लग सकते हैं लेकिन सतह पर सभी एक समान हैं।

मजहबी काल्पनिक काएँ और धर्म—संस्थापक

इन मजहबों के शिल्पी के रूप में इनका संबंध मानवीय उत्थान से होना चाहिए था, पर मुख्यत:, प्रभुत्व प्राप्ति की अन्तर्प्रेरणा के अधीन हो, इनलोगों ने मनुष्य की भय और कृपा की आन्तरिक प्रवृत्ति को उत्प्रेरित कर स्वयं ईश्वरत्व की प्राप्ति की।

उनकी मौलिक शिक्षाओं का सार, धार्मिक क्रिया पद्धति, काम के ढंग और आशा और निराशा के परिमाण सभी मध्यपूर्व की पौराणिक परम्पराओं पर दृढ़ता से स्थापित हैं। पाठक को भविष्य में संदर्भ हेतु इसे अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। शामी परम्परा के ये सुधारक, यदि मैं इन मजहबों के संस्थापकों को उनके अनुयायियों के सम्मान के संकेत के रूप में कहूँ, मनुष्य थे। उन्होंने तत्कालीन देवताओं को हटाकर, अपने समय की काल्पनिक पौराणिक कथाओं को अंगीकार कर तथा अन्धविश्वास और ज़ोशीले कवित्व के सम्मोहन से सजा कर स्वयं पर देवत्व का आरोपण किया।

यह सिद्धान्त एक नये दृष्टिबोध का प्रतिनिधित्व करता है और संभव है यह रुचिकर प्रतीत न हो जब तक कि पाठक इस तर्क—वितर्क को ठंडे दिमाग

और हैतुक भाव से गहराई से विचार के लिए तैयार न हों, जिसके यह योग्य है। मैं यहूदी मजहब की समीक्षा से आरम्भ करूँगा, जो सभी शामी मजहबों की जड़ है।

यहूदी मत क्या है ?

प्रथमत: यह पेन्टाश्युक से संबंधित है, जिसमें ओल्ड टेस्टामेन्ट के पाँच ग्रन्थ हैं — जेनेसिस, एक्सोडस, लेमिटिकस, नम्बर्स और ड्यूटोरोनोमी। परम्परा से इसे मूसा से संबंधित बताया जाता है, किन्तु व्यवहार में यह तोरा (कानून या शिक्षा) पर आधारित है। इसमें पवित्र धर्मग्रन्थ, अलिखित परम्पराएँ, धार्मिक स्वीकृति कथन, नीतिगत घोषणाएँ, ऐतिहासिक संग्रह और यहूदी पुरोहिती व्याख्याएँ तक शामिल हैं। इस प्रकार, व्याख्याकारों की सुविधा और पसंद के अनुसार किसी चीज को सही ठहराने या खण्डन करने की सीमाओं का अनन्त विस्तार हो गया है।

मूसा की वंशावली और प्रशिक्षण

यहूदी मजहब को मूसा द्वारा स्थापित होने के कारण मूसा का मजहब भी कहते हैं। मूसा के माता–पिता मिश्र में बसे यहूदी समाज की एक जाति ''लेवी'' के सदस्य थे।

अमराम और जोकेबेद का पुत्र मूसा को इतिहास के एक छल ने फराओ की पुत्री के आँचल में मिश्र के राजघराने में पहुँचा दिया जहाँ उसे राजकुमार की तरह लाया गया। वहाँ कानून बनाना, लिखना, मजहब, सामान्य प्रशासन और युद्ध जैसी मिश्र की कुलीन कलाओं में उसे दीक्षित किया गया। उससे भी बढ़कर, फीलीस्तीन और सीरिया के एक भाग पर मिश्र द्वारा शासन किये जाने के कारण राजकीय दस्तावेजों से ही उसने वहाँ के इतिहास और भूगोल का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया। बाइबिल के हिब्रू को, जिनका नेतृत्व मूसा द्वारा किया गया था, हबीरू, या हपीरू के रूप में जाना जाता था। मिश्री डेल्टा के पूर्वोत्तर भाग के निकट वे 'गोशेन' जनपद में रहते थे। ये हिब्रू या हबीरू कौन थे?

हिब्रूज का मूल

जब इजराइली याकूब ने मिश्र में प्रवेश किया था, उस समय उसके दल में कुल सत्तर लोग थे। (एक्सोडस १:५) लेकिन जब वे लोग चार सौ तीस वर्ष बाद मिश्र से वापस लौटे (एक्सो. १२:४०) तब औरतों और बच्चों को छोड़कर

सिर्फ मर्दों की संख्या लगभग छ: सौ हजार थी। (एक्सो १२:३७) पत्नियों–बच्चों सहित कुल संख्या का आकलन करने पर यह २००००० तक पहुँचती है; यद्यपि विद्वान समालोचकों ने इसे घटा कर १५,००० कर दिया है।

जैसा दावा किया जाता है, हिब्रू कोई जातीय समुदाय नहीं था। इस शब्द से वैसे लोगों का अर्थ प्रकट होता है, जिनका अपना कोई राज्य नहीं था। उनको लुटेरा और घुमन्तू समझा जाता था। वे अपनी जीविका निम्नस्तरीय काम, मजदूरी द्वारा कमाते थे। उनकी संख्या के समान ही इस हिब्रू शब्द की परिभाषा भी सर्वमान्य नहीं है।

मेरा झुकाव इस सोच की ओर है कि मिश्र से वहिर्गमन के समय इनकी संख्या पाँच लाख रही होगी लेकिन वे अपने को यहूदी या इसराइली नहीं कहते थे। इसके पर्याप्त कारण थे :

१. पहला, मिश्र के दस्तावेजों में इजराइल का कोई जिक्र नहीं है।
२. दूसरा, इकहत्तर लोगों के लिए (यूसुफ सहित, जो पहले ही से मिश्र में था) यह सम्भव नहीं था कि कठोर गुलामी की स्थिति में वे इतनी बड़ी संख्या में होते। उनकी मृत्यु दर कठिन परिश्रम, कुपोषण, रोग और मिश्री शासन के नरसंहार की नीति के कारण अधिक रही होगी।
३. तीसरा, जैसा नीग्रो लोगों का इतिहास दर्शाता है, श्वेत अमेरिकी अक्सर ही गुलाम औरतों से प्रणय संबंध बनाते थे। इस प्रकार आधुनिक काले लोग नाम के ही काले रह गये हैं, वे मिश्रित नस्ल के हो चुके हैं। यहूदियों के मामले में यह उससे भी अधिक सत्य है। उन्हें उस काल की बदतर गुलामी की परिस्थितियों को झेलना पड़ा था जब मानव जाति की नैतिक बोधगम्यता अभी शैशवावस्था में थी।
४. अन्त में, वहिर्गमन करने वाले लोग यहूदी नहीं रह गये थे क्योंकि वे कैनन (फीलीस्तीन) और सीरिया के विजित क्षेत्रों से, मिश्री फराओं द्वारा लाये गये विभिन्न जातीय समुदायों के गुलामों के वंशज थे। एमेनहोतेप II (१४५०–१४२५ ई०पू०) अपने नौ वर्षीय सैनिक अभियान में ८९,६०० युद्ध बन्दियों को जीत कर लाया था। उससे गुलामों की संख्या में असामान्य वृद्धि का पता चलता है जो अन्तत: यहूदी या हिब्रू के रूप में जाने गये।

मिश्र के भवन–निर्माण में उनकी अत्यन्त आवश्यकता थी। गुलाम मजदूरों का महत्व तब प्रतीत होता है जब हम शिलाखण्डों की कटाई, गढ़ाई,

ढुलाई और जोड़ाई के काम पर ध्यान देते हैं। मिश्र का एक सामान्य मंदिर २३००००० शिलाखण्डों का होता था जिसमें प्रत्येक का वजन ढाई टन था। मिश्र की फौजी कार्रवाई के अनेक कारणों में यह भी एक कारण था। तो भी फीलीस्तीन और सीरिया के मूल का होने के कारण ये गुलाम या हिब्रू सेमिटिक ही बने रहे। इसलिए प्रतिज्ञात देश (Promised land) कैनन कोई नया देश नहीं था बल्कि यहूदियों की अपनी ही मातृभूमि थी। उनका वहाँ वापस आना वैसा ही था जैसा १८०० वर्षों बाद २०वीं शताब्दी में आना।

यहूदियों की तरफ मिश्रियों का रुझान

उनके अतीत पर और अधिक बात करने के बदले मैं अब उन्हें सुगमता की दृष्टि से यहूदी या इजराइली ही कहूँगा। ऐसा लगता है कि उनकी व्याकुलता के पीछे मुख्य कारण था, मिश्रियों द्वारा उन पर भरोसा नहीं किया जाना, जो उन्हें अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा समझते थे; क्योंकि अपने अल्प प्रवास के दौर में मिश्र के प्रति उनमें राष्ट्रभक्ति नहीं देखी गई जैसा ओल्ड टेस्टामेन्ट से स्पष्ट होता है। (एक्सोडस ११:१०)

मूसा का चमत्कार

यहूदियों के एक दृढ़निश्चयी, संग्रही, विकसित और आत्मविश्वासी जाति के रूप में उभरने का श्रेय उनकी अपनी इच्छा को कम और मूसा की विलक्षणता को ज्यादा जाता है।

मूसा का चमत्कार अपने लोगों की मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक समझ में निहित है, साथ ही उनकी कमजोरी को ताकत में, अस्थिरता को दृढ़ता में और हठ को सुविचार में बदल देने के उपायों की व्यवस्था करने में है।

मूसा जानते थे कि उनके लोग कठिन परिश्रम और अपने मिश्री मालिकों की निरन्तर क्रूरता से कठोर बन गये हैं। कोमलता न तो उनकी संस्कृति का कभी भाग थी और न बाद में ही कभी उनमें उसकी इच्छा उपजी। सबकी तरह, उनका भी मुख्य संबंध अस्तित्व रक्षा से था, जिनकी नियति भय और बलात्कार, हत्या और क्रूरता के अधीन बने रहना बन गई थी। उनपर थोपे गये अनुशासन के प्रति उनमें कोई वास्तविक लगाव नहीं था। क्योंकि उसका उद्देश्य उत्पीड़कों द्वारा उनका शोषण और यौन दुराचार से आनन्द लेना भर

था। उद्देश्य की एकता या सामाजिक लगाव जो अन्तर्बोध या सम्मिलित रूप से उत्तम लक्ष्य प्राप्ति के प्रयास के क्रम में उपजता है, उनके लिए अपरिचित था। फिर भी उनमें स्वतंत्र और सुखी मनुष्य होने की इच्छा और सामाजिक वैभव की धूमिल आकांक्षा विद्यमान थी जिसका जड़ उनकी लाचारी और दासत्व में निहित था। उनकी इस समझदारी को बल मिला था उनकी पलायन की इच्छा और इस सच्चाई से कि वे सभी आरम्भ में फीलीस्तीन और सीरिया से आये थे। अपने लम्बे प्रवास के दौरान इनलोगों ने सम्भवत: एक सामान्य साम्प्रदायिक भाषा और संस्कृति विकसित कर ली थी, जो दासत्व की परम्परा से उपजे निम्न मूल्यों पर आधारित थी। यह इस चकित करने वाले निष्कर्ष पर ले जाता है कि यहूदी फीलीस्तीन के मूल निवासी थे जो अपनी पहचान खो चुके थे और अपनी मौलिक मातृभूमि की विजय के लिए उत्प्रेरित हुए थे।

यहूदी चरित्र और उर्बरता

उत्सुकता, सौन्दर्य की खोज और सर्वोत्तम पाने हेतु संघर्ष की इच्छा, उनकी सोच के भाग नहीं थे। उन्होंने वास्तविकता की कठिनाई से बचने के लिए अज्ञानता का ढाल ही पसंद किया और विचार और जाँच को अपनाने से दूर ही रहे। वे बौद्धिकता में बौने थे जो सरलता से दस फीट ऊँचा अनुभव कर लेता है और गुण के लिए दोष, उद्योगशीलता के लिए झुँझलाहट और चातुर्य के लिए भोलापन की भूल करता है। यह मानसिक झुकाव शिक्षा, औचित्य के मूल्य में दृढ़ विश्वास, प्रभुत्व और आत्मसम्मान की कमी से पैदा होता है।

दैनिक जीवन में दु:ख झेलने की स्थायी परिस्थिति के अभ्यास ने, सुरक्षा की ढाल का रूप ले लिया था, जो भीरुता के विरुद्ध एक रुकावट का काम करता है और उत्पीड़क का प्रतिरोध करने या उसे चुनौती देने के लिए सोये हुओं की आत्मा को उद्वेलित कर सकता है। मूसा के अधिकार पर सवाल उठाने वाले हिब्रू के साहस ने उन्हें अवश्य ही आश्वस्त भी किया कि यहूदी—गुलामी की राख के नीचे, आजादी की खुशियाँ अधीरता से प्रज्वलित होकर आतिशबाजी में बदलने वाली हैं।

महान मूसा की बुद्धि ने अपने लोगों की कमजोरियों को पहचाना जिनमें महानता की सम्भावना विद्यमान थी। कैसे ? उन्होंने जान लिया था कि राज्य विहीन और मूर्तिपूजक बने इन लोगों में मिश्र के प्रति या उनके किसी देवता

के प्रति कोई श्रद्धा नहीं है। उनका मष्तिष्क खाली और लचीला है; उनकी हताश अनभिज्ञता को एक ऐसी आचार संहिता की आवश्यकता थी, जो विश्वास पर आधारित हो, जो कारण या जाँच की अनुमति न दे और अंधविश्वास से प्रेम रखे। उन्होंने चमत्कार और पारलौकिक कामों के असंख्य किस्सों से उनको सम्मोहित कर दिया।

मूसा की नीयत

इसमें मूसा की नीयत क्या थी ? बेशक, वह पहले से ही राजकुमार थे, लेकिन एक अज्ञात कुल और बिना अधिकार के। उनकी विशाल बुद्धि, अति विशाल अहमत्व और दीर्घकाय आकांक्षा ने एक साहसी और संकटपूर्ण कार्य की ओर प्रेरित किया जो साधारण राजकुमार की पहुँच के बाहर की बात थी। ऐसे सपने को सच बनाने के लिए एक महत्वाकांक्षी, दृढ़ संकल्प और दूर दृष्टि वाले राष्ट्र को जन्म देना आवश्यक था। इसलिए उन्होंने उपराज्याध्यक्ष के मेसोपोटामियन सिद्धांत को अपनाया। यह पूरा मौलिक नहीं था क्योंकि यह किसी न किसी रूप में मध्यपूर्व में पहले से प्रचलित था, लेकिन इस पर जोर देकर सामूहिकता की भावना को स्थापित करना उसका अपना था।

उपराज्याध्यक्ष (वॉयसराय) का मेसोपोटामियन सिद्धांत

मेसोपोटामिया में प्रचलित विश्वास के अनुसार राजा देवता नहीं होता था, बल्कि उसका प्रतिनिधि होता था। देवता ही कानून बनाने वाला था, राजा सिर्फ देवता के कानून को लागू करता था। राजा देवता का प्रतिरूप था लेकिन उसका अपना कोई अधिकार नहीं था। प्रसिद्ध हम्मूरावी अपने कानूनों को नगर के प्रमुख देवता मरडुक से प्राप्त करता था। देवता के पास अधिकार होना मात्र सैद्धान्तिक था क्योंकि यह राजा ही था जो अपनी इच्छानुसार देवता के नाम से, कानून गढ़ता था और साधिकार लागू करता था। हिब्रू लोगों के लिए राजप्रतिनिधि के सिद्धांत का चुनाव मूसा के असामान्य सूझ–बूझ का परिणाम था, क्योंकि यह उनलोगों की मनोवैज्ञानिक प्रकृति के अनुकूल था। फराओ के समान जो कानून से ऊपर था और सदियों से उनके दुःख का कारण था, उनके अन्दर देव–राजा में कोई आस्था नहीं थी। मूसा जैसा राजप्रतिनिधि, जो उनके ही समान देव–प्रजा में एक था और जो समान रूप से दैवी कानूनों के अधीन था, सहजता से स्वीकार्य था। न तो उनके अंदर विधि–निर्माण की

प्रक्रिया के निरीक्षण की उत्कण्ठा थी न मूसा की ईमानदारी पर प्रश्न खड़ा करने का कोई कारण था।

वास्तव में, राजप्रतिनिधि की युक्ति मूसा के बिल्कुल अनुकूल थी। इसने भला–बुरा के परिणाम की जिम्मेवारी लिए बिना ही कानून बनाने और उनपर शासन करने की दैवी शक्ति प्रदान कर दी। यदि कुछ गलत हुआ तो यह देव की गलती थी, वे स्वयं देव कहलाये बिना ही दैव अधिकार से सम्पन्न हो गये। मूसा का कौशल अंधविश्वासी हिब्रू मष्तिष्क के शोषण में निहित है। मूसा ने जलती झाड़ी के प्रसंग का वर्णन किया (एक्सो ३:२) जिसमें कोई हानि नहीं उठानी पड़ी। यह मूसा के दिमाग का कमाल था जिसने यह महसूस किया कि एक नये भगवान को प्रस्तुत कर इस तरह की अलौकिक घटना से जोड़ा जाना चाहिए जो खुद को अब्राहम, इसाक और जैकब का भगवान घोषित करे, फिर भी वह भगवान प्रचलित हिट्टिटे तौर तरीकों को देखते हुए अपना नाम प्रकट नहीं करता है और घोषित करता है कि मैं वही हूँ जो हूँ।

अति चतुराई से प्रत्यक्षतः शक्ति की बागडोर द्वारा शासन की सामान्य इच्छा से अपनी अरुचि प्रकट करना वे नहीं भूले। मूसा ने (एक्सो ४:१०–१४) भगवान से कहा कि उसकी इच्छा हकलाहट और वक्तृत्व कला की कमी के कारण दैवी राजप्रतिनिधि बनने की नहीं है। वह मात्र इसलिए स्वीकार करना पड़ा कि उनके रुझान से भगवान बहुत कुपित हुए। इसलिए मूसा के लिए कोई विकल्प नहीं बचा था, उन्हें भगवान का राजप्रतिनिधि बनना पड़ा और घोषित करना पड़ा कि भगवान ने मुझको अपने लोगों के पास भेजा है।

राज्य विहीन हिब्रू लोगों के लिए अपना राष्ट्र, अब तक की सबसे प्रिय वाणी थी। यह मिश्र के समान अकथनीय पीड़ादायक राज्य नहीं; बल्कि दूध और शहद से पूर्ण राज्य था। (एक्सो ३:८)

यहूदी श्रेष्ठतर जाति (नस्ल)

चुने हुए लोग श्रेष्ठतर नस्ल के होने के कारण यह उम्मीद करते थे कि उनका चुनावकर्ता उन्हें मिश्र से चमत्कारिक ढंग से बाहर निकालेगा, इसलिए उनको नेतृत्व देने के लिए स्वामी उनके समक्ष दिन में बादल के खम्भे और रात में प्रकाश के खम्भे में गया। (एक्सो १३:२१–२२)

यह्वे और फराओ के बीच की स्पर्धा

मिश्र के देव–राजा फराओ और नव अंगीकृत इजराइल की संतानों को अपना पराक्रम दिखाने के लिए यहूदियों का भगवान यह्वे, फराओ के साथ कठिन प्रतिस्पर्धा में उतरा। बहुत सारे अलौकिक कामों को करने के बाद, उसने जानबूझ कर फराओ के दिल को कठोर बना दिया (एक्सो ७: ३–४, एक्सो ९:१२ एक्सो १०:२७) ताकि वह इजराइल की संतानों को जाने से रोक दे। अपने चमत्कारिक कामों को बढ़ाने के लिए –

(ए) उसने आरोन (हारुन) के डंडे को साँप में बदल दिया।

(बी) उसने मिश्र के तमाम जल को खून में बदल दिया; मछलियाँ मर गईं और नदियाँ दुर्गन्ध से भर गईं।

(सी) उसने मिश्र की जमीन को मेढ़कों से भर दिया।

(डी) उसने धूल को जूँए में बदल दिया जिससे मनुष्य और पशु दोनों पीड़ित हो गये।

(ई) उसने फराओ उसके नौकरों, उसके लोग और सभी मिश्रवासियों के घरों पर मक्खियों का झुण्ड भेजा।

(एफ) उसने मिश्रवालों के सभी पशुओं को मार दिया जैसे घोड़े, गदहे, ऊँट, बैल, भेंड़ आदि।

(जी) उसने मिश्र के सभी चूल्हों की राख को फोड़े–फफोलों में बदल दिया जिससे सभी जादूगर और मिश्रवासी प्रभावित हुए।

(एच) उसने गरज और ओलावृष्टि भेजी, जमीन पर आग फैल गई और भारी वर्षा ने चारों ओर भयानक बाढ़ ला दिया सिर्फ वही स्थान बाकी बचे थे जहाँ इजराइल की सन्तानें रहती थीं।

(आई) तब उसने मिश्रवालों के विरुद्ध विनाशक टिड्डियों का झुण्ड भेजा।

(जे) जहाँ यहूदी रहते थे, वहाँ घने अंधकार के कम्बलों से पूरा मिश्र को ढँक दिया। यह घटना क्रम तीन दिनों तक चलता रहा।

गलत व्याख्याएँ

इन काल्पनिक कथाओं में विश्वास करने वाला या तो मतिहीन होगा या पूर्ण प्रच्छालित मष्तिष्क का। मुसलमानों ने भी पैगम्बर मुहम्मद के बारे में ऐसे

ही चमत्कारों का आविष्कार किया है। यहूदी उन्हें अतार्किक कह कर खारिज कर देते हैं, लेकिन जब यह मूसा के संबंध में आता है तब वे उसकी सत्यता में अक्षरश: विश्वास करते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि उनका तर्क उनके जन्म से ही अति पक्षपात पूर्ण संस्कार द्वारा निर्धारित है। यहाँ तक कि भौतिक और रसायन विज्ञान में दक्ष यहूदी भी अंधविश्वास की भूल–भुलैया से मुक्त होने की स्थिति में नहीं होते और जोर देते हैं कि बाइबिल की ये घटनाएँ ऐतिहासिक सत्य हैं। उदाहरण के लिए, वे यह कहते हैं कि नदियों के खून से भरे होने और मछलियों के मरने की चर्चा उस काल की ओर संकेत है जब इथियोपिया में अत्यन्त भारी वर्षा के कारण लाल मिट्टी का कटाव हुआ। इससे नदी का रंग बदल गया और उसकी तेज धारा ने लाल शैवाल को भी बहा दिया।

क्या बात है ! ओल्ड टेस्टामेन्ट लाल पानी और लाल शैवाल के विषय में नहीं बल्कि वास्तविक खून और वास्तविक मछली के विषय में कहता है। आश्चर्य की बात है कि आखिर यह्वे को यह अभिनय करने की आवश्यकता ही क्यों पड़ी जबकि वह सर्वशक्तिमान होने का दावा करता है और प्राकृतिक घटनाओं को कराने की पूर्ण सामर्थ्य रखता है। फराओ को, बार–बार अपने लोगों को जाने देने के लिए कहने की जगह यह ज्यादा सम्मान जनक होता कि वह फराओ और उसकी सेना को नष्ट कर देता, ताकि उसके चुने हुए लोग आसानी से चले जाते। कितनी शर्म की बात है कि उनको चोरों की तरह भागना पड़ा। उनको युद्ध करते हुए अपने लक्ष्य तक पहुँचने की शक्ति और साहस प्रदान करना और भी अधिक सम्मानजनक होता। सबसे बढ़कर, यह्वे द्वारा जानबूझ कर फराओ के दिल को कठोर बनाना (एक्सो ७:३, ९:१२) ताकि वह हिंसक तरीके से इजराइलियों को जाने से रोक दे, पूरे प्रकरण को बेजोड़ हास्यास्पद बना देता है।

मूसा का कौशल और यहूदी राष्ट्रीयता

निकट पूर्व में लगभग प्रत्येक समुदाय में यह परम्परा थी कि वे अपने सामुदायिक जीवन को किसी खास देवता के साथ अपने पूर्वज या प्रधान से नाता जोड़कर स्थिर कर लेते थे। मूसा ने अनुभव किया कि उनकी असंगठित जनता को एक संगठित समुदाय में बदलने की तत्काल आवश्यकता है, जो एक अनन्य देवता द्वारा संभव है, जो दूसरे किसी की तुलना में उनकी

देखभाल विशेष रूप से करेगा; क्योंकि चुना हुआ होने की अनुभूति प्रदान करने का यह एकमात्र उपाय था। यह्वे का सम्पूर्ण मानव जाति का सृष्टिकर्ता होने का दावा खोखला है क्योंकि यहूदियों के प्रति उसका विशेष झुकाव है। मूसा ने उसे इजराइल का भगवान चुना था, मात्र उसकी क्रूरता के लिए, जिसने अपने लोगों को सैनिकत्व प्रदान किया ताकि वे अपनी प्रतिज्ञात भूमि (Promised Land) जीत सकें। तथाकथित ''समुद्र का गीत'' (एक्सो १५: १–८) और ''डेबोरा का गीत'' (जजेज ५) में लड़ाकू यह्वे की प्रशंसा की गई है। हिब्रू लोगों की दासता की मनोवृत्ति को ध्यान में रखते हुए जो बिना मीन मेख निकाले स्वामी के आदेश–पालन की होती है, मूसा ने यहूदीवाद की नींव रखी; जिसमें यह्वे के प्रति अंधविश्वास कायम कर, यह्वे और इजराइल की संतानों के बीच वही संबंध कायम किया जो एक जमीन्दार और आसामी का होता है। प्रारम्भिक काल में रक्त–संबंध यहूदी राष्ट्रवाद का भाग नहीं था, यह बहुत बाद में अनन्य दैवी उन्माद के कारण विकसित हुआ। हू–ब–हू वही चीज हिट्टिटे राजा और उसकी प्रजा के बीच की संधि में (१४५० से १२०० ई०पू०) विद्यमान थी, ऐसा विद्वानों का विचार है।

प्रभुत्व प्राप्ति की मूसा की चाह

हमलोग ओल्ड टेस्टामेन्ट में पढ़ते हैं कि यह्वे ने मूसा से आमने–सामने मित्र की तरह बात की थी। (एक्सो ३३:१०–२०, ड्यूटोरो ३१:१५) हम यह भी देखते हैं कि यहूदी लोगों ने यह्वे को देखा था जब वह उनकी उजाड़ स्थिति में उनके पास आया था। यह उसे भौतिक और गोचर अस्तित्वमान में बदल देता है। अगर यह सत्य है, तो वह अभी क्यों नहीं मिल सकता है जबकि आज मनुष्य जाति के लिए, जिसमें यहूदी भी शामिल हैं, उसकी अति आवश्यकता है। सच्चाई यह है कि वह तब भी अगोचर और अस्तित्वहीन था जैसा आज है। दैवी भावना के सिद्धान्त पर, अपने को उसका राजप्रतिनिधि नियुक्त करने और यहूदी राष्ट्र का निर्माण कर भय और पक्षपात की भावना के उपयोग से उस पर शासन करने के लिए, मूसा ने समझ–बूझ कर यहूदीवाद की नींव रखी थी।

प्रसंविदा (Covenant)

स्वयं को मध्यस्थ के रूप में स्थापित कर महान मूसा ने मनुष्य और भगवान के मध्य एक संविदा आधारित संबंध का प्रतिपादन किया और इसे

प्रसंविदा (Covenant) नाम रखा। अपनी नई पद्धति की चुनौती से आश्वस्त होने के लिए उन्होंने घोषित किया कि ऐसी प्रसंविदा यह्वे और यहूदी पुरखों जैसे नूह, अब्राहम, इसाक और याकूब के बीच पहले से ही रही है। वास्तव में उन्होंने पुराने प्रसंविदा का सुन्दर ढंग से वर्णन करते हुए एक तरंफ भय और दूसरी तरफ कृपा के दो तरफा प्रभाव पर जोर दिया। सीधी भाषा में इसे यों कह सकते हैं कि यह्वे इजराइल की संतानों पर कृपापूर्वक पक्षपात करेगा यदि वे उससे डरते रहेंगे और उसके समक्ष विलाप, चापलूसी और अध:पतन द्वारा उसकी पूजा करते रहेंगे।

पूजा क्या है ? पूजा का मतलब है यह्वे के कानूनों का पालन करना जो शाश्वत है और मानव जीवन के सभी पक्षों को नियन्त्रित करते हैं; जैसे किस चीज में विश्वास करना है, कैसे सोचना है, टहलना, बात करना, सोना, पहनना, खाना, पीना, दूसरों से व्यवहार करना इत्यादि। ये गुलामी के लक्षण और मष्तिष्क–प्रच्छालन के चिन्ह हैं जो लोगों को रोबोट में बदल देते हैं जिसको एक स्वीच दबाकर नियन्त्रित किया जाता है।

एकरारनामा और भय एवं पक्षपात की क्रिया–पद्धति

अब हम लोग देखें कि किस प्रकार एकरारनामा मनुष्य के भय एवं पक्षपात की क्रिया–पद्धति का शोषण करता है।

(ए) भय को क्रियाशील करने के लिए एकरारनामा माँग करता है।

एक यहूदी को हृदय के अन्तिम छोर से यह्वे को निश्चित रूप से प्यार करना चाहिए (डियुट ५–२५) और अपने बच्चों के हृदय में भी धीरे–धीरे इसे प्रवेश कराना चाहिए।

मूसा अपने लोगों को कहते हैं कि मालिक यह्वे (ड्यूट २८:१५–६७) नष्ट करने वाली आग है और नफरत करने वाला भी, जो इजराइल की संतानों से सम्पूर्ण आज्ञाकारिता की माँग करता है। यदि वे तनिक भी उससे विचलित होंगे तो वह उनपर भयंकर पीड़ादायक विपत्ति डालने की शपथ ले चुका है। जिसमें जानलेवा बीमारियाँ, भौतिक बिनाश, गुलामी, गृह विहीनता, विदेशी अधीनता और वे सभी अपमानजनक उत्पीड़न शामिल होंगे, जहाँ तक आदमी सोच सकता है। और आगे यह्वे खुशी–खुशी अवज्ञाकारी यहूदियों पर सम्पूर्ण विनाश डाल देगा।

(बी) एकरारनामा बिलकुल सही तरीके से कृपा (पक्षपात) के लिए मनुष्य की

प्यास (आकांक्षा) को याद करता है :

यदि यहूदी निर्धारित तरीके से यह्वे की आज्ञाओं का पालन करेंगे तब वह (ड्यूटो, अध्याय ७) इन सारी विपत्तियों को यहूदियों के दुश्मनों पर डाल देगा और उनसे नफरत करेगा।

उसके बाद एकरारनामा को बल पहुँचाने के लिए और इसे व्यावहारिक बनाने के लिए यह्वे कुछ मधुर वाक्यों को इससे जोड़ता है और अपने भक्त संतानों को बतलाता है कि वह कौन सी कृपा या (पक्षपात) कर सकता है :—

१. वह उन्हें आश्वासन देता है कि वह विश्वासी भगवान है और अपने एकरारनामें को भक्त यहूदियों की हजारों पीढ़ियों तक बनाए रखेगा, जो "सभी लोगों में अधिक कृपा पात्र" होंगे और उनमें या उनके पशुओं में कोई बाँझपन नहीं होगा; क्योंकि वे भगवान के पवित्र लोग हैं जिनको उसने अपने खास लोगों के तौर पर चुना है।
२. वे अवश्य ही सांसारिक सम्पत्ति से भरे होंगे। (ड्यूटो २८: ८,११)
३. यह्वे प्रतिज्ञा करता है (जेने २२:१७) कि यहूदी नस्ल बहुत ज्यादा बढ़ेगी।
४. यह्वे यहूदियों को कई देशों पर शासन करायेगा (ड्यूटो १५:६) लेकिन उन पर कोई विदेशी शासन नहीं करेगा। वह यहूदियों को सभी विरोधी राष्ट्रों को जीतने योग्य बना देगा (ड्यूटो ७: १९—२४) और उनका सम्पूर्ण विनाश कर डालने हेतु उन्हें अपने चुने हुए लोगों के हाथ में सौंप देगा। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहेगी जब तक कि एक आदमी भी वैसा न रह जाय जिसमें उनसे मुकाबला करने की शक्ति हो। उसके आगे यह्वे उन्हें सिरमौर बनाने की प्रतीज्ञा करता है न कि पिछलग्गू। (ड्यूटो २८:१३)

यहूदी एकरारनामें की प्रकृति

यह ध्यान देने की बात है कि इस एकरारनामें में मनुष्यता, नैतिक गुणों और मृत्यु के बाद के जीवन की कोई चर्चा नहीं है। यह सिर्फ एक सांसारिक प्रसंविदा है जो भौतिकवाद पर आधारित है। इससे स्पष्ट पता चलता है कि जो भी यहूदी को धनी और शक्तिशाली बनावे, वही शक्ति है।

मूसा और यह्वे (यहोवा)

जहाँ याकूब इसराइल की संतानों का पिता है, वहीं मूसा यहूदी राष्ट्र का संस्थापक। उनकी राष्ट्रपिता की यथार्थता असंदिग्ध है। पर उनकी आज्ञा का पालन किये जाने और पूजे जाने की तीव्र इच्छा को नजरअंदाज किया गया।

उन्होंने स्वंय को ईश्वर नहीं; बल्कि ईश्वर का नौकर घोषित किया, पर इस प्रकार कि ईश्वर तक सिर्फ उसके माध्यम से ही पहुँचा जा सकेगा। ईश्वर के कानून के तौर पर मान्य कानून वास्तव में मूसा द्वारा बनाये गये कानून हैं और बाइबिल में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जिनसे पता चलता है कि मूसा ईश्वर (यह्वे) से अधिक बुद्धिमान और अच्छा स्वभाव के व्यक्ति थे, जो उसे झिड़क सकते थे और उस पर हावी हो सकते थे। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह प्रत्यक्ष राजप्रतिनिधि मूसा ही स्वयं यह्वे थे। कैसे ?

यह्वे का आगमन

(ए) कहानी जैसे ही आगे बढ़ती है मूसा यह्वे और अपने लोगों के बीच, उनके अनुरोध पर, माध्यम का काम करते हैं और इसलिए नहीं कि वह स्वंय अधिकार चाहते हैं।

जब लोगों ने गरज, चमक, संगीतमय ध्वनि और पहाड़ के धुँए द्वारा यह्वे के यशस्वी आगमन को देखा (एक्सो २०:१९) तो लोगों ने मूसा को सुनने की प्रतिज्ञा की, लेकिन उन्होंने यह्वे को लोगों से बोलने ही नहीं दिया क्योंकि यह उनकी मृत्यु का कारण हो सकता था।

इससे स्पष्ट होता है कि मूसा अन्य लोगों से भिन्न पदार्थ के बने थे; वह प्रतापी यह्वे के समक्ष बिना किसी नुकसान के ठहर सकते थे लेकिन अन्य लोगों की उसके सम्पर्क से अवश्य मृत्यु हो जाती। पुनः मूसा को अधिकार था कि वे यह्वे को लोगों से बात करने से मना कर सकते थे।

मूसा और यह्वे के बीच प्रतिस्पर्धा

(बी) ढाले गये बछड़े की यहूदियों द्वारा पूजा करना यह्वे की नफरत को बढ़ा देता है। यह छोटे प्रेमी के अधिकार के रुझान को बहुत बढ़ा हुआ दिखाता है, जो अपने प्रतिद्वन्द्वी से डरा हुआ है कि कहीं वह पिछड़ न जाय। बहुत चतुराई से मूसा इस अवसर को यह प्रदर्शित करने के लिए इस्तेमाल करते हैं कि यहूदी उसके लोग हैं, यह्वे के नहीं। यह्वे क्रोध से मूसा को सामने से दूर हट जाने की आज्ञा देता है। क्रोध में वह यहूदियों का त्याग कर देता है और उन्हें "मूसा के लोग" कहता है जिनको उसने मिश्र से बाहर निकाला और जो लोग स्वयं भ्रष्ट हो गये। (एक्सोड ३२:७) फिर भी, मूसा की बुद्धिमानी इस अवसर पर प्रकट होती है और वह कहता है कि यहूदी यह्वे के लोग हैं और उसी ने उनको मिश्र से बाहर निकाला ताकि पर्दे के पीछे वह स्वंय बना रहे।

पर, कहानी को यहीं रुकने नहीं देता है। क्रोध से उबलता हुआ यहवे इजराइल की संतानों को नष्ट कर देना चाहता है। मूसा इस मौके को बिना खोये यहवे को अपमानित करने और अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने में इस्तेमाल करता है। वह यहवे को कड़ाई से कहते हैं कि आप अपने ही लोगों के साथ दुष्टतापूर्ण व्यवहार करना चाहते हैं और उन्हें लज्जित करते हैं कि भला मिश्रवाले क्या कहेंगे। मूसा ईश्वर (यहवे) को आदेश देते हैं कि इस बुराई से रुकिये और पश्चाताप कीजिए (एक्सो ३२:१२—१४) यहाँ ईश्वर आदमी के सामने समर्पण करता है। क्या ही ईश निन्दक रुझान है। फिर भी यहूदी दावा करते हैं कि वे एकेश्वरवादी लोग हैं। यहाँ मूसा अपनी स्थिरता, ठंडापन और गुणवत्ता प्रकट करते हैं जो यहवे की प्रचण्डता, गरम स्वभाव और दुष्ट प्रकृति के विरुद्ध है। इस प्रकार वे स्वयं को नियंत्रक के रूप में प्रस्तुत करते हैं जो आगे रहकर पीछे से नियंत्रित करता है।

(सी) मूसा की चौथी किताब, नम्बर्स कुछ अन्य ही कहानी कहती है, जब यहूदी प्रतिज्ञात देश की निन्दा कर पुन: मिश्र वापस लौटना चाहते हैं, यहवे का क्रोध जो सतह पर हल्के विरोध की प्रतीक्षा में सदा मौजूद रहता है, पुन: फूट पड़ता है। यहूदी का भगवान, यहवे एक बार फिर अपने लोगों के चलते आग बबूला होता है और उनको नष्ट कर देने की धमकी देता है। मूसा फिर आगे आते हैं और यहवे को लज्जित करते हैं। यहवे पहले की तरह ही मूसा की बात मान लेता है। (नम्बर्स १४: ११—२०)

मूसा ईश्वरत्वपूर्ण

(डी) मूसा चालीस दिन और चालीस रात के बाद अपने स्वामी (यहवे) के साथ अपने लोगों के पास लौटे। यहूदियों ने देखा कि उनका चेहरा चमक रहा था। वे उससे बात करने में भयभीत थे। लोगों के भय को दूर करने के लिए उनको अपना चेहरा ढकना पड़ा। (एक्सो ३४:३०,३३) यह महसूस करना चाहिए कि यहवे का भी वैसा ही प्रकाशित चेहरा है। (एक्सो ३३३:२०)

राज्य प्रतिनिधित्व (उपराज्याधिकार) का शामी सिद्धान्त

राजप्रतिनिधित्व का सिद्धान्त शामी संस्कृति की एक पहेली है। नायक अपने निजी विचार या सिद्धान्त को स्थापित करने की घोषणा के बदले यह बहाना बनाता है कि वह जो भी कहता या करता है वह सिर्फ अलौकिक सत्ता

का मात्र आदेश पालन करता है। इस प्रकार वह लोगों को इस बात की प्रतीति कराता है कि उसकी अपनी कोई नीयत या झुकाव नहीं है। लोग आसानी से इसे स्वीकार कर लेते हैं; विशेष रूप से तब, जबकि राज्याधिकारी की शिक्षाएँ और आदेश सांसारिक और दैवी पुरस्कार के दृढ़ आश्वासन की घोषणा करते हैं।

चूकि अलौकिक सत्ता का स्वरूप वही बनता है, जैसा उपराज्याधिकारी या (पैगम्बर) उसे बनाता है क्योंकि लोगों द्वारा सीधे न तो उसे देखा जा सकता है और न ही उससे सम्पर्क किया जा सकता है। इसलिए ईश्वर और पैगम्बर एक ही और वही व्यक्ति होता है।

यहूदियों के लिए मूसा के कानूनों का महत्व

ईश्वर का राजप्रतिनिधि अति अहंकार वाला होता है, और स्वंय की पूजा कराने की तीव्र आकांक्षा रखता है। वास्तव में, कानून प्रस्तुत करने वाले की दैवी कानूनी आज्ञाओं का अक्षरश: पालन कराना ही पूजा का एक रूप है। यह आश्वस्त होने के लिए कि वह अनन्त काल तक पूजा जाता रहे, मुसा ने एक राष्ट्र का निर्माण किया, जिसकी पहचान ऐसे कानून पर आधारित थी, जो शाश्वत, अखण्डनीय और अपरिवर्तनीय था।

मूसा के कानूनों का मूल्य इस प्रकार आँका जाना चाहिए :

(ए) मूसा के कानूनों का उद्देश्य

(बी) यहूदी राष्ट्रवाद से मूसा के कानूनों की प्रासंगिकता

(सी) विधि—संहिता के रूप में मूसा के कानूनों की प्रकृति

(ए) मैंने पहले ही कहा है कि मूसा के विधान का उद्देश्य स्वयं को पूजे जाने की सर्वोच्च सम्भव स्थिति प्राप्त करना था। मैंने राजप्रतिनिधि के रूप में उसका वर्णन करते हुए इसकी व्याख्या की है कि चूकि यहवे को न ढूँढा जा सकता है और न सम्पर्क किया जा सकता है इसलिए मूसा जो यहवे को डाँटने और उसपर प्रभुत्व जमाने में सक्षम है, स्वंय ही राजप्रतिनिधि के खोल में, यहवे है।

(बी) जो भी हो, अभी तक इस कथन के दूसरे भाग को मैंने नहीं छुआ है वह है कानूनी आधार पर यहूदी राष्ट्रीयता की नींव रखना। इस बिन्दु को समझना तब तक संभव नहीं है जबतक हम इस महत्व को न अनुभव करें कि मूसा का कानून स्वंय से ही संबद्ध है वे सभी लोग जो यहूदी कानूनों

का अक्षरश: पालन नहीं करते हैं और इन सिद्धान्तों से मतभेद रखते हैं अभिशाप के भागी होंगे। (ड्यूटो २७:२८)

न सिर्फ कानून अपने प्रत्येक अल्प विराम, पूर्ण विराम और शब्द के साथ यहूदी के लिए बाध्यकारी है बल्कि यह शाश्वत भी है। (ड्यूटो २७:२९) उत्थान और पतन, खुशी और गम, मान और अपमान वास्तव में सम्पूर्ण यहूदी भाग्य, कानून के प्रति आज्ञा–पालन या अवज्ञा पर निर्भर है। ड्यूटोरोनोमी का अध्याय ८ इसे पूरी तरह स्पष्ट करता है।

इस परिचय के बाद अब मैं वैधानिक यहूदी राष्ट्रवाद का वर्णन करूँगा।

यहूदी का वैधानिक राष्ट्रवाद

१. मूसा यहूदी पुरखों – नूह, अब्राहम, इसाक और याकूब से यह्वे (ईश्वर) के अनन्य एकरारनामें को जोड़कर उसे यहूदी ईश्वर बना देता है। स्पष्टत: वह अन्य राष्ट्रों में कोई रुचि नहीं लेता है।

यदि यहूदी यह्वे के एकरारनामें का पालन करते हैं तो वह उन्हें अन्य सभी राष्ट्रों के ऊपर कर देगा और उन्हें अपना खजाना जैसा समझेगा। (एक्सो १९:५)

२. उसका एक मात्र नहीं तो कम से कम सर्वाधिक संबंध यहूदियों से है। क्यों? क्योंकि उसने सारी मानव जाति में उन्हें ही चुना है। यही कारण है कि वे सर्वोत्तम, विशेष, पवित्र और वरदानी हैं।

३. यहूदी कानून ढीठ गैर यहूदियों पर अन्तिम जीत का आश्वासन देता है, उन्हें थोड़ा–थोड़ा करके चुनी हुई नस्ल (यहूदियों) को सौंप दिया जायेगा ताकि उनका सम्पूर्ण विनाश किया जा सके और उनकी किस्मत यहूदियों की बपौती होगी। यहूदी और गैर यहूदी के बीच वास्तविक संबंध गुलाम–मालिक और गुलाम की होगी।

४. यहूदी कानून ''कैनन'' को इसराइल की संतानों के लिए प्रतिज्ञात भूमि (Promised Land) या वैधानिक गृह देश (Legal Home Land) घोषित करता है।

५. चूकि ईश्वर (यह्वे) व्यक्तिगत रूप से मिश्र गया और उन्हें प्रतिज्ञात भूमि पर लाया, अत: यह स्पष्ट रूप से यहूदियों का घर है। उन्हें गैर यहूदियों (फीलीस्तीनी) से समझौता की मनाही की गई है। उन्हें वहाँ से बाहर निकाल दिया जाना चाहिए। (एक्सो २३:३२–३३)

६. यहूदियों को अपनी नस्ली शुद्धता बनाये रखने के लिए गैर यहूदियों से शादी नहीं करनी चाहिए। (एक्सो ३४:१२–१६) अन्तत: इस कानून को इतना कठोर बनाया गया कि यहूदियों को न सिर्फ अपनी गैर यहूदी पत्नियों को तलाक दे देना चाहिए बल्कि उनसे पैदा हुए अपने ही बच्चों को भी अस्वीकार कर देना चाहिए। (एजेरा १०:२–२४)

७. नस्ली शुद्धता बनाये रखने के लिए किसी जारज को यह्वे के इस समूह में उसकी दसवीं पीढ़ी तक को भी शामिल नहीं करना चाहिए। (ड्यूट ४:५–६)

८. यहाँ तक कि विदेशी भूमि पर भी उन्हें भिन्न समुदाय के रूप में संगठित होना चाहिए ताकि वे मूसा के कानून का पालन कर सकें। (ड्यूटो ४:५–६)

९. यहूदियों में निष्पक्ष भाईचारा स्थापित करने के लिए उन्हें यहूदी स्त्री या पुरुष को बंधक रखने से मना किया गया है। एक दूसरे पर शासन कर उनसे काम लेने की मनाही की गई है। दूसरी ओर उनका गुलाम निश्चय ही गैर यहूदी होना चाहिए, और जहाँ यहूदी का शासन हो वहाँ पैदा हुए किसी भी गैर यहूदी को यहूदी की बपौती या सम्पत्ति समझा जाना चाहिए। (लेव २५:४३–४६) इस साम्प्रदायिक सम्बन्ध की भावना को पुष्ट करने के लिए एक यहूदी को दूसरे यहूदी से सूदखोरी की मनाही की गई है। (एक्सो २२:२५)

१०. यहूदीवाद को कानून का केन्द्रीय तत्व बनाने और उसके द्वारा यहूदी स्वप्न को केन्द्रित करने के लिए ओल्ड टेस्टामेन्ट जेरूसलम को पवित्र शहर घोषित करता है, जहाँ यह्वे का निवास है।

यहूदीवाद का यही रहस्य है जो प्रत्येक यहूदी को सिखाता है कि इजराइल उसका वास्तविक घर है। इसलिए, चाहे वह कहीं पैदा हुआ हो इसराइल वापस लौटने के लिए सदा चिन्तित रहता है। (इसीयाह ४:३, ५२१)

(सी) क्या मुझे यहूदी–विधान को इसके राष्ट्रीय कानून की भावना से समीक्षा करनी चाहिए जो वैधानिक कार्रवाई और मुकदमों आदि के लिए होता है ?

यह आवश्यक नहीं है क्योंकि यहूदी कानून, किसी भी दैवी कानून की तरह विश्वास पर आधारित है, कारण पर नहीं। इस प्रकार यह कुछ ऐसा है जिसे पूज्य तो बनाया जा सकता है पर लागू नहीं किया जा सकता

है। उदाहरण स्वरूप–

१. इसका संबंध सुधार और न्याय की तुलना में, अधिकतर बदला लेने से है। (एक्सो २१:२४–२६)

२. यह शनिवार (सब्बाथ) को पूर्ण विश्राम की आज्ञा देता है और लकड़ी चुनने जैसे उल्लंघन पर भी मृत्यु दण्ड का आदेश देता है। (नम्बर्स १५:३२) ईसा मसीह को ईश–निन्दा का अभियुक्त, सब्बाथ में लोगों का उपचार करने के कारण, बनाया गया था।

आधुनिक काल में कम से कम 50% यहूदी शनिवार को अपने व्यावसायिक कार्यों के कारण मजहबी दण्ड का भागीदार बनेंगे।

३. यह पुत्र को पत्थर मार–मार कर मौत की नींद सुला देने का आदेश देता है, जो अपने माँ–बाप की आज्ञा का पालन नहीं करता है। (ड्यूटो २१:१८–२१)

यदि इस कानून को कड़ाई से लागू किया गया होता तो कितने यहूदी बच्चे जीवित बचते?

यह्वे (यहोवा) का स्वभाव

चूकि यहूदी राष्ट्रवाद यह्वे के कानूनों पर आधारित है (जैसा मूसा और पैगम्बरों द्वारा दावा किया जाता है), यहूदीवाद का तब तक मूल्यांकन नहीं किया जा सकता जब तक कि यह्वे के स्वभाव का सही मूल्यांकन नहीं होता है। यह अपने मनोवैज्ञानिक असर के कारण एक अति भावनात्मक विषय है, फिर भी यह सूक्ष्म परीक्षण से बच नहीं सकता है क्योंकि सत्य की खोज करने वालों के लिए यह मौलिक महत्व का विषय है।

हमलोग यह्वे पर आगे विचार करें :

यह्वे

यह्वे (ईश्वर) ने जब धरती पर दुराचार की स्थिति को देखा तो बहुत दु:खी हुआ और उसने मनुष्य को जन्तुओं, जानवरों और पक्षियों सहित नष्ट कर देने का विचार किया। वह उनकी सृष्टि पर पश्चाताप में पड़ गया। पर नूह पर उसकी कृपा हुई। (जेने ६:५–८)

ईश्वर (यह्वे) का अनुताप सृष्टि के संबंध में, उसके रुझान को तय करता है, जो पूरी तरह नकारात्मक है। दूसरा, उसमें सही प्राणियों की सृष्टि की सामर्थ्य का अभाव है। इससे उसके कठोर स्वभाव का भी पता चलता है –

मनुष्य के पापों के लिए पशु–पक्षी और कीड़ों को मारने की क्या जरूरत ! यह यह्वे के अतार्किक और साधारण मष्तिष्क की ओर भी संकेत करता है। यदि आदम की संतानें दुष्ट थीं तो नूह की संताने अच्छी कैसे हो गईं। सबके बावजूद नूह आदम का ही वंशज था और इसलिए उसी जाति का था।

सच्चाई यह है कि इस प्रकार की पौराणिक कथाएँ जो खून, मनुष्य की दुष्टता और उसके विनाश से संबंधित हैं, मध्य पूर्व में मूसा के आगमन से बहुत पहले से ही प्रचलित थीं। उसने केवल उनको अपनी रचनात्मकता में मिला लिया था।

यह्वे पुरातन पुरुष

ईश्वर (यह्वे) एक प्रकार का बूढ़ा आदमी है वह भूल सकता है और आसानी से याद नहीं कर पाता है। इसलिए जब नूह के साथ एकरारनामा स्थापित किया, उसने अपने धनुष को बादलों में टिका दिया ताकि जब भी वह उस पर देखता था उसको एकरारनामें की याद आ जाती थी। (जेनेसिस ९:१३–१६)

अब्राहम के विषय में जो यहूदियों और अरबों का समान पूर्वज हैं, बाइबिल में वर्णन और भी दु:खद है। मुसलमानों का कहना है कि यह तोड़ा–मड़ोरा गया और झूठा है, लेकिन अपने पुरखों के प्रति अत्यधिक पूज्यभाव रखने वाले यहूदियों ने इससे कभी इनकार नहीं किया।

अब्राहम और आत्मगौरव

कहानी इस प्रकार है :

१०० वर्ष की अवस्था में, अपनी पत्नी सराह से, अब्राहम को इसाक नाम का एक पुत्र पैदा हुआ। एक मिश्री दासी, हगर ने भी इसमाइल नाम के पुत्र को जन्म दिया। सराह इसमाइल को तुच्छ समझती थी क्योंकि वह दासी का पुत्र था और उसने इसाक के बराबर दर्जा देने से भी इनकार कर दिया। ईश्वर ने सराह का पक्ष लिया और इसमाइल से छुटकारा पाने की सलाह दी। ईश्वर के समक्ष आत्म गौरव हेतु अब्राहम ने वही किया, जैसा कहा गया था। उसने हगर के साथ बच्चे को बीरशेवा के उजाड़ में नष्ट होने के लिए छोड़ दिया। (जेनेसिस २१:१२–१४) यह कहानी यहूदी परम्परा के अनुकूल है; वे स्वयं को श्रेष्ठ नस्ल का समझते हैं और इस प्रकार गैर यहूदियों को हीन। इसमाइल ने इस नस्ली दर्शन का वर्णन किया है। यह अरबी दृष्टिकोण को भी पुष्ट करता

है : उनके रखैलों से उत्पन्न बच्चे पत्नियों से उत्पन्न बच्चों के बराबर दर्जा कभी नहीं पा सके।

इस्माइल एक बच्चा था, निर्दोष बच्चा। ईश्वर कैसे इतना पक्षपाती और अनुचित हो सकता है, जिसने इसाक और इस्माइल दोनों को बनाया? और स्वंय अब्राहम को ही क्या कहा जाय ! क्या कोई सदय पिता अपने छोटे बच्चे के साथ किसी भी परिस्थिति में ऐसा कर सकता है? ईश्वर के प्रति इस प्रकार की आज्ञाकारिता आज्ञाकारी की स्वार्थी प्रकृति को प्रकट करती है जो अपने बड़े को खुश करने के लिए किसी भी सीमा तक जा सकता है। यह सच्चाई कि अब्राहम ईश्वर को खुश करने के लिए इसाक की भी हत्या करना चाहता था इस विन्दु को प्रमाणित करता है। पुन:, ईश्वर जो अपने अहम् को तुष्ट करने के लिए इस प्रकार की आज्ञाएँ देता है, पूजा करने के योग्य नहीं है; क्योंकि, पहली बात, उसके आदेश यह प्रमाणित करते हैं कि वह अतृप्त अहम् वाला है, दूसरी बात, उसके आदेश बुराई और अनुचित का उदाहरण प्रस्तुत करने वाले हैं और इस प्रकार मानव जाति को भ्रष्ट बनाते हैं; और अन्तिम बात, जब वह विश्वासियों की परीक्षा लेने के लिए ऐसा करता है तब स्पष्टत: वह उनके दिमाग को नहीं जानता है और इस प्रकार वह घोषित सर्वज्ञ के गुण से रहित है।

यह्वे चोरों का संरक्षक

यह्वे यहूदियों को हर कीमत पर संरक्षण देता है, ठगी, बेईमानी और लूट में भी। यही कारण है कि यहूदी धर्मगुरुओं की कुछ व्याख्याएँ यह बताती हैं कि यदि गैर यहूदी से अपने लाभ के लिए कोई यहूदी कोई चालबाजी करता है तो यह पाप नहीं है।

जैसे, यहूदी मिश्र छोड़ने के लिए तैयार हैं, यह्वे मूसा को आज्ञा देता है कि वह अपने लोगों से कहे कि अपने पड़ोसियों से बहुमूल्य चीजें जैसे गहने और हीरा उधार माँगें, यह्वे मिश्रवासियों के दिलों को नरम बना देता है जो उधार दे देते हैं और तब वे उसे लेकर उनकी आँखों में धूल झोंककर निकल जाते हैं। यह्वे इस चोरी की स्वीकृति प्रदान करता है क्योंकि वही इसका आयोजक है। (एक्सो ११:२ और १२:३५—३६)

ईर्ष्यालु ईश्वर (यह्वे)

यहूदी ईश्वर यह्वे ईर्ष्या से भरकर डाह और अत्यधिक बदले की कार्रवाई से खुश होता है : वह यहूदियों को चेतावनी देता है कि दूसरे देवताओं की पूजा नहीं करनी है क्योंकि वह ईर्ष्यालु ईश्वर है और पिता के पाप के लिए उसके

बच्चों की चार पीढ़ियों तक से बदला लेता है। (एक्सो २०:५ और ३४:१४) यही कारण है कि नम्बर्स (२१ : ५—९) में हम पाते हैं कि यह्वे सर्प—परियों को यहूदियों के पास रोटी और पानी की कमी की शिकायत के लिए भेजता है।

यहूदी दावा करते हैं कि उन्होंने मानवीय सुसंस्कृति के आधार के रूप में एकेश्वरवाद को स्थापित किया, लेकिन यह्वे अकेला ईश्वर होने का दावा नहीं करता, क्योंकि वह अन्य देवों पर गाली के साथ आक्रमण करने से मना करता है (एक्सो २२:२८) वास्तव में यह्वे इजराइल का भगवान है (यद्यपि उसमें सृष्टिकर्ता की शक्ति होने का दावा किया जाता है। (एक्सोडस २४:१०)

यह्वे एक भौतिक सत्ता

यहूदी ईश्वर दृश्यमान और भौतिक अस्तित्व वाला है; वह चलता है और बात करता है; (एक्सोडस २४:१०—११; ३३:८—११) उसकी आत्मा है। (एक्सो २६:११) उसमें मानवीय लक्षण हैं; जैसे घृणा और प्रेम, नीचता और उदारता, करुणा और निष्ठुरता आदि।

न्याय की भावना का अभाव

यह्वे में न्याय की भावना का सर्वथा अभाव है, वह लोगों को किसी विशेष सिद्धान्त के तहत पुरस्कृत या दण्डित नहीं करता है। यह पूरी तरह 'रहब' की कहानी से लिया गया है। (जोश ६:१७)

एक वेश्या और उसके सहयोगियों की उनके आचरण पर बिना ध्यान दिये, एक अच्छे काम के लिए रक्षा की जा सकती है लेकिन बिना किसी व्यक्तिगत छानबीन के ही पूरे नगर के विध्वंस को चिन्हित किया जा सकता है, सभी तानाशाहों की भाँति, यह्वे के शब्द ही कानून हैं और 'कारण' इसका भाग नहीं है।

यह्वे इच्छा का दास

यह्वे सामान्य मनुष्यों की तरह ही इच्छा करता है और सपने देखता है। एक साधारण आदमी अपनी इच्छा को नियन्त्रित कर सकता है या छोड़ सकता है, लेकिन यह्वे नहीं। उसके लिए इच्छा वैसी ही है जैसे पतिंगा के लिए दीपक, मधुमक्खी के लिए फूल, जीवधारियों के लिए हवा और मछली के लिए पानी।

उसकी सर्वोच्च आकांक्षा प्रेम किये जाने और पूजे जाने की है। उसके अस्तित्वमान होने का एकमात्र कारण यही है और यही वह कारण है जिसके

चलते उसने मानव जाति और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना की। ऐसी गहन इच्छा उसे एक पक्षीय दृष्टिकोण और अत्यन्त स्वार्थी अहम् प्रदान करती है। इससे स्पष्ट होता है कि उसके भक्तों की संख्या जब कम होती है, वह स्वयं को उपहास का पात्र अनुभव करता है और उसकी संहारक उत्तेजना, लोगों पर बदले के रूप में उतरती है, जो प्रचण्डता, अधर्म और भ्रष्टता से पूर्ण होती है।

आराधना, व्यवहार का सबसे निम्न तरीका

आराधना साधारणत: एक विनीत मृदु वाणी है जिससे रोकर, पड़कर और रेंगकर किसी के समक्ष, जो अविनीत, आत्मकेन्द्रित और मानसिक रूप से अव्यवस्थित है, स्वंय को दीन–हीन प्रकट करना है। आत्मपतन अपनी ही पवित्रता, सम्मान और गौरव के लिए पाप है। वह ईश्वर जो मनुष्य को पतित बनाता है प्रशंसनीय नहीं हो सकता। यह आराधना को निकृष्टतम इच्छा के रूप में प्रस्तुत करता है जो दिव्यत्व की बराबरी अहंकार सहित अन्य समकक्ष पापों से करता है।

मूसा ने घोषणा की कि स्वामी (यह्वे) ने उन्हें अपने कानूनों को घोषित करने का आदेश दिया है। वास्तव में, उन्होंने ने दो शिलालेख पट पाने का दावा किया जिसमें यह्वे के अपने हाथ से लिखे कानून थे। सच्चाई यह है कि वे स्वयं ही साधिकार और सुयोग्य कानून–निर्माता थे। जब उन्हें मिश्र की राजधानी में लाया गया था वहाँ लिखना कुलीन कलाओं में एक उत्तम कला के रूप में मान्य था और कानून बनाना सर्वाधिक पवित्र पुरोहिती कर्म समझा जाता था। यहूदी पुरोहिती, मूसा के भाई आरोव (हारून) के वंशजों के हाथ में चले जाने और ओल्ड टेस्टामेन्ट में उनकी वाचालता से, यह अनुमान पुष्ट होता है कि मूसा लेखक और विधि–विशेषज्ञ था। फिर भी उसने स्वयं को प्रतिनिधि घोषित करना ही सही कदम समझा, यह्वे नहीं।

क्यों? क्योंकि वह जानता था कि मिश्र का एकेश्वरवादी प्रधान पुजारी अखनातून का स्वर्गीय तामझाम और सांसारिक प्रतिष्ठा पर समान अधिकार था। इसलिए क्यों न उसी मार्ग को अपनाया जाय जो ज्यादा प्रभावी और लाभदायक है। उसने जिन लोगों का नेतृत्व किया वे असंयमित और उत्पीड़ित लोगों की भीड़ थी, जिसने फराओ की क्रूरता, छल और उत्पीड़न को झेला था जिसने उनको मनुष्य के सामान्य जीवन के स्तर से भी नीचे ला दिया था इसलिए पुन: वैसे ही अन्य ईश्वर की आज्ञा का पालन वे नहीं कर सकते थे।

उसके अलावा मेसोपोटामिया में पहले से ही ईश्वर का प्रतिनिधि राजा की प्रथा प्रचलित थी। यह घोषित करता था कि भगवान ही असली शासक है, राजा तो मात्र उसका राजप्रतिनिधि, प्रबन्धकर्ता और सेवक है।

यूहीदियों का मिश्री मूल

मूसा को यह अच्छी तरह मालूम था कि इन मिश्री गुलामों को प्रभावी ढंग से एकता के सूत्र में पिरोये बिना प्रतिज्ञात भूमि जीती नहीं जा सकती थी। इन गुलामों को आरम्भ में विजेता फराओ द्वारा सीरिया और फीलीस्तीन से जीत कर लाया गया था। इस प्रकार जिन्हें यहूदी के तौर पर जाना गया वे और कोई नहीं बल्कि फीलीस्तीनी ही थे जिनकी सामाजिक पहचान उनके मिश्री मालिकों द्वारा धूमिल कर दिया गया था।

मूसा के कानून का उद्देश्य

मूसा के कानून का सम्पूर्ण उद्देश्य एक ऐसी राष्ट्रीयता के निर्माण का था, जो अलौकिक ईश्वरीय सत्ता के प्रति पूज्य भाव पर आधारित हो; ऐसी सत्ता जो कठोर भी हो और डरावना भी फिर भी निष्ठावान विश्वासियों और तत्पर आज्ञाकारियों के प्रति महती कृपाकारक भी हो। चूकि सभी ईश्वरीय व्यापार मूसा के राजप्रतिनिधित्व के द्वारा ही सम्पन्न होना था इसलिए सीधे नेतृत्व से अधिक बुद्धिमतापूर्ण पीछे से संचालन करना ही था क्योंकि कोई गलती होने पर उसका दोष ईश्वर या लोगों पर डाला जा सकता था, जबकि मध्यस्थ के रूप में स्वयं को ही श्रेय का दावेदार बनाया जा सकता था।

यह्वे, मूसा के कानूनों की रचना

वास्तव में न सिर्फ यहूदियों का राष्ट्रवाद वरन् यहवे के अस्तित्व की रचना भी मूसा के कानून की ही उपज है। मैं मूसा की प्रतिभा की सराहना करता हूँ क्योंकि उन्होंने जो कुछ भी किया, अच्छे उद्देश्य के लिए। असहाय, निराश और बेघर गुलाम लोगों को स्वतंत्रता और आत्मोन्नति का अवसर प्रदान करना कोई छोटा काम नहीं था। विरानगी में भटकने की लम्बी कहानी इस प्रक्रिया का अभिन्न भाग है। चालीस वर्षों तक मूसा ने अपने लोगों को एक विशेष प्रकार के जीवन के लिए प्रशिक्षित किया और दृढ़ बनाया जो अन्तत: यहूदीवाद के रूप में जाना गया। तीसरी पीढ़ी तक, हम पाते हैं कि इसराइल

की संतान एक अनुशासित सैनिक समूह में ढल कर विजेता की हैसियत से कैनान में बस चुकी थी।

विश्वास और असामाजिकता

धर्मपरायण यहूदीवाद अंधविश्वास का एक सटीक उदाहरण है, जो बुद्धि को विकृत कर देता है, हैतुक भाव का विरोधी बन जाता है और अन्ततः विश्वास और कार्य की विसंगति की ओर ले जाता है। साधारण भाषा में कहें तो यह ऐसा जीवन जीने की ओर ले जाता है जो सिद्धान्त और वास्तविक काम के बीच परस्पर विरोध पर टिका रहता है जबकि मनुष्य अपने सामाजिक क्रिया–कलाप में वास्तविकता की ही अपेक्षा करता है। इस प्रकार वह अवचेतन रूप से भ्रमजाल की दुनिया में रहने लगता है। परिणामस्वरूप, जीवन बनावटी विश्वास की निरन्तर प्रक्रिया में फँसकर व्यक्तित्व के विखराव तक पहुँच जाता है। चूकि विश्वासी व्यक्ति दूसरों के साथ अपने व्यवहार में सच्चाई के प्रदर्शन के योग्य नहीं रह जाता, वह एक अहम् विकसित कर लेता है, जो बेईमानी, पाखण्ड और पलायन पर आधारित होता है तथा वैकल्पित रूप से उसमें अपने विरोधियों के विनाश की इच्छा उपजती है। इस मनोवृत्ति की पहचान का चिन्ह भय है जो विश्वासियों में अविश्वासियों के प्रति निम्न भाव रखने को उकसाता है। यह उन्हें समाज से कटे रहने के लिए विवश करता है, समुदाय के अंदर अलग समुदाय बन जाता है या अपनी दुष्टता और प्रभुत्व की सुसज्जित योजना द्वारा बाकी समुदाय पर अपनी दादागिरी चलाता है। इसकी आवश्यकता अपनी पहचान खो देने के भय के कारण होती है, चाहे वह कितना ही बदरुप या अमानवीय क्यों न हो और उसका इरादा असामाजिक तरीकों से इसे मजबूत बनाने और झूठे दिखावे की होती है। संक्षेप में कहा जाय तो अंधविश्वास, सामाजिक व्यवहार और सामाजिक मेल–मिलाप की भावना को नष्ट कर देता है।

भारत के शुद्र और यहूदी

विश्वास व्यक्तित्व को विशेष साँचे में ढालता है। उदाहरण के लिए, भारत के शुद्रों ने अपने विश्वास के आधार पर जन्म से ही अपनी हीनता को स्वीकार कर लिया और स्वेच्छा से सम्पूर्ण अमानुषिक अपमान को, बिना किसी आह और विरोध के चुपचाप झेला। यहूदी विश्वास निज श्रेष्ठता की

भावना पर आधारित थी जिसने बाकी सम्पूर्ण मानव समुदाय को ही अपने से नीचे स्तर का सक्रिय रूप से देखने हेतु प्रेरित किया। आत्मगौरव की अनुभूति ने उनमें अस्थाई रूप से राष्ट्रीय समझ, सामाजिक एकता और उच्च नैतिक निष्ठा प्रदान की, जो चुनी हुई नस्ल के उनके दावे से मेल खाता था। किन्तु ऐसे दर्शन के स्वाभाविक नतीजे ने शीघ्र ही व्यवहार के मनोवैज्ञानिक स्वरूप को उत्पन्न किया, जो सम्मानित जीवन के लिए हानिप्रद था। इसने उनकी राष्ट्रीय समझ को प्रेतात्मिक भ्रम और धर्मोन्माद में, सामाजिक एकता को स्व आयोजित विखराव की प्रक्रिया में और उनकी नैतिक निष्ठा को विदेशी घृणा की आँधी में बदल दिया जिसके कारण उन्हें बार–बार गैर यहूदी देशों में मुठभेड़ की स्थिति में रहना पड़ा।

डेविड द्वारा यहूदीवाद में नवीन रचना

यह सच्चाई है कि एक राष्ट्र के रूप में यहूदियों को उनके नायकों ने गढ़ा था, जिन्होंने उनके मन में राजा के प्रति ईश्वर के अरोपण का भाव भी भर दिया। इसराइल का दूसरा राजा डेविड, जिसका मूसा के बाद दूसरा स्थान है, ने ईश्वर (यह्वे) और लोगों के बीच के एकरारनामे को उनके जनजातीय सरदारों के सहयोग से बदल कर स्वयं में देवत्व आरोपित किया और इस प्रकार अपने वंशजों में भी। स्वयं उसने ही, शासक और याकूब का वंशज होने के नाते यह्वे और इसराइल की संतानों के बीच के वास्तविक संबंधों के स्तर को धारण किया। डेविड ने यह्वे को ''माउन्ट जीयन'' पर्वत के ऊपर सिंहासनारूढ़ किया और स्वयं को उसके द्वारा राज्याभिषेक किया हुआ बताकर उसकी दाहिनी ओर अपना सिंहासन स्थापित किया। इस प्रकार अपने पर ईश्वरत्व का आरोपण कर ईश्वर का समान भागीदार बन गया। वास्तव में डेविड ने जीयन के तत्कालीन जेबुसाइट पद्धति को ही अपने लाभ के लिए अपनाया था।

मसीहा (सिंहासानारूढ़ डेविड की कतार के राजाओं की पदवी) उस मसीहा के समान ही बन गया, जिसकी, यहूदियों की प्रतिष्ठा को पुनर्स्थापित करने हेतु आने की प्रतीक्षा की जा रही थी, जैसी प्रतिष्ठा उन्होंने फीलीस्तीनियों का संहार कर प्राप्त की थी। डेविड के वापस लौटने को ईसा के साथ जोड़ा जाता है जो डेविड के वंश का होने के कारण 'ईश्वर–पुत्र' के रूप में मान्य हुआ। डेविड ने स्वयं को अलौकिक सत्ता के साथ जोड़ कर दैवी मध्यस्थ के

रूप में स्थापित किया। डेविड के देवता बन जाने से यहूदियों के एकेश्वरवादी होने का दावा अर्थहीन हो जाता है।

डेविड और बाथशेबा

डेविड मनुष्य था, देवता नहीं। इस सच्चाई का सैमुएल, अध्याय II में अच्छी तरह वर्णन किया गया है। अपने मकान के छत से उतरते समय उसने एक बहुत सुन्दर औरत बाथशेबा को देखा जो स्नान कर रही थी। उसके सौन्दर्य पर आसक्त हो वह मुग्ध होकर देखने लगा। उसकी कामातुर आसक्ति ने उसे इस सत्य को स्वीकार नहीं करने दिया कि वह हित्ताइट युरियाह की पत्नी थी। डेविड ने उसकी हत्या कर दी; बाथशेबा से शादी की, जिससे बुद्धिमान सोलोमन (सुलेमान) पैदा हुआ। अपने राज्य को अनेक भागों से जोड़ते हुए डेविड अनेक कबीलों से अपनी पत्नियाँ लाया। क्या एक देवता राज्य–कौशल का प्रदर्शन करता है ? इन औरतों की सुन्दरता, कोमलता और सम्मोहन ने उसे बहुत सुख पहुँचाया। पर यह भी सच है कि उनमें से अधिकांश बहुदेव–पूजक और परस्पर विरोधी सांस्कृतिक मूल्यों की थीं जिनके कारण बाद के दिनों में यहूदी राज्य बिखर गया। फिर, अत्यन्त सुन्दर युवती आविशाग की कहानी डेविड की मनुष्यता को प्रमाणित करती है। (१किंग १:१–४)

सोलोमन का गैर–यहूदी आचरण

डेविड (दाऊद) का पुत्र सोलोमन (सुलेमान) उससे भी आगे निकल गया। रखैलों की संख्या बढ़ाने का उसका असामान्य शौक था। उनकी संख्या बढ़कर ३०० तक पहुँच गई। यह संख्या उसकी ७०० पत्नियों के अतिरिक्त थी, जो विभिन्न मजहबों और राष्ट्रीयताओं से आई थीं। वह विशुद्ध यहूदी विश्वास को अपनाकर नहीं चल सका; क्योंकि उसने चेमोश और मिलकन, मोआबाइट और एम्मोनाइट देवताओं का मन्दिर बनवाया था। उनके धर्मस्थलों का निर्माण पूर्वी जेरूसलेम की पर्वत श्रृंखला पर किया गया था (१किंग ११:१–१३)। इस प्रकार ईष्यालु यहवे के चुने हुए लोगों पर सोलेमन ने शासन किया, जो मूर्तिपूजक था। फिर भी शक्तिशाली और हिंसक यहवे जो बार–बार क्रोध में उबल पड़ने की आदत से लाचार था, सोलोमन को दण्ड न दे सका। यही स्वाभाविक कारण था कि यहूदी राज्य समाप्त हो गया, वैसा यहवे के क्रोध के कारण नहीं हुआ था।

यहूदी राष्ट्र का पतन

डेविड और सोलोमन के अस्सी वर्षीय शासन में यहूदी नस्ल अपनी सर्वोच्च अवस्था में था। लेकिन इसे साम्राज्य नहीं कहा जा सकता है। सोलोमन के बाद यहूदी राज्य दो भागों में बँट गया, इसराइल और जुडा। इसराइल (इफ्रेम) उत्तरी राज्य, जिसमें दस कबीले थे और जुडा, जो पवित्र नगर जेरूसलेम के साथ ही जगमगा रहा था। यह विभाजन इसराइल की संतानों को, पारस्परिक सहिष्णुता और सहयोग की कमी के कारण, एक राष्ट्र के रूप में बने रहने के अयोग्य सिद्ध करता है। फिर भी दोनों राज्य दो शताब्दियों तक बने रहे। इसराइली शहर सुमेरिया ७२२ ई०पू० में असीरिया द्वारा जीत लिया गया और बाद में असीरिया की प्रदेश–पद्धति में अपनी पहचान खो दिया। कोई नहीं जानता है कि इन खो गये यहूदी कबीलों के वंशजों का क्या हुआ। कुछ असंगत कथन खोये हुए यहूदियों के वंशजों का सम्बन्ध संयुक्त राज्य अमेरिका के रेड इंडियन्स से जोड़ते हैं। ५९७ तक जुडा को बेबिलोनियनों द्वारा अधीन बना लिया गया। ५८९ के विद्रोह को कुचलने के लिए जेरूसलम के मंदिरों को जलाने और लूटने के साथ ही कठोर दण्ड दिया गया। यहूदियों द्वारा मातृभूमि से पलायन का युग इस दुःखद घटना के बाद से ही शुरू होता है।

डायसपोरा(प्रसार) और जेरूसलम

डायसपोरा यहूदियों के लिए दुःखद रहा। इसलिए नहीं कि वे जैसा अपने देश में करते थे उससे कुछ अधिक किया हो। पवित्र नगर जेरूसलम के प्रति उनमें लगाव ही, दुःख का मुख्य कारण था। यह साधारण पछतावा नहीं था। उनके मन में यहवे की सम्पूर्ण अवज्ञा के दोष की भावना गहरे पैठी थी, जिसके कारण उनका निर्वासन हुआ। पवित्रतम धर्मस्थल की रक्षा में नाकामी ने उनमें स्थाई कलंक का भाव भर दिया। फिर भी, यहूदी पैगम्बरों ने, जिनकी प्रतिष्ठा, सौभाग्य और प्रसिद्धि उनके भविष्य कथन पर निर्भर थी, इसराइल की संतानों को यह आवश्वासन दिया कि यह कलंक स्थाई नहीं है बल्कि यह सिर्फ उनके पश्चाताप करने और सुधरने तक ही है। उनकी श्रद्धा के पुरस्कार स्वरूप अपने घर जेरूसलम वापस होना उनकी अवश्यम्भावी नियति घोषित की गई।

(इजेकियल / जेरूसलम)

पुजारी इजेकिएल जो ५९७ के निर्वासन में ढोकर ले जाया गया था, को यहूदीवाद का संस्थापक समझा जाता है। उसने ५९३ में यह घोषित किया था कि यह्वे ने उसे अपना पैगम्बर नियुक्त किया है। वह न्याय और प्रतिज्ञा दोनों का पैगम्बर है। इसका अर्थ है कि यहूदी को दण्ड के बाद आनन्द का सौभाग्य प्राप्त होने वाला है। यहूदी के आनन्द का तात्पर्य घर अर्थात जेरूसलम वापस लौटना था जहाँ माउन्ट जीअन पर यह्वे सिंहासनारूढ़ था। मसीहाई संदेश का यही केन्द्र–विन्दु तत्व है। यही कारण है कि सभी देशों के यहूदी अनेक शताब्दियों बाद भी उस देश में अपने निवास को अस्थाई, मात्र कुछ काल के लिए ही अपना निवास समझते हैं। इसका असली तात्पर्य है कि यहूदी बाहर में अपने निवास को एक दण्ड समझते हैं। उन्हें विश्वास रहता है कि यह्वे उन्हें पुन: घर पहुँचाएगा, जैसे मिश्र और बेबीलोन से निकाल कर पहुँचाया था।

जीअन अर्थात जेरूसलम पवित्र नगर और यह्वे की दुल्हन है, जो लोगों का मालिक है, उसने उसकी मुक्ति का शपथ ले रखा है, थोड़े समय के लिए ही उसे भूला है, पर अपनी असीम कृपा से उसे मुक्त करायेगा। क्या यह्वे के लिए अपनी दुल्हन को भूल जाना उचित था ? उसने बार–बार उसका त्याग किया और विश्वासियों पर अभक्ति का दोषारोपण किया। नहीं, यहूदी निर्दोष थे। वे बिना दम के नहीं थे। वे अभक्त भी नहीं थे। किसी राष्ट्र ने उतने उत्साह और भक्ति के साथ स्वामी (यह्वे) की आराधना नहीं की जितना यहूदियों ने, फिर भी किसी राष्ट्र ने कभी यहूदियों के दक्षांश भी ईश्वरीय कोप नहीं झेला।

जेरूसलम और यहूदी भाग्य

किसी गैर यहूदी के लिए यह्वे एक भावना है, जिसकी पवित्रता और सर्वज्ञता का इसराइल की संतानों के शासक और पुजारी वर्गों द्वारा अपने फायदे के लिए खूब ढोल पीटा जाता रहा है। यह्वे के नगर (जेरूसलम) के प्रति यहूदी श्रद्धा में ही उनके प्रवास के देश के प्रति अश्रद्धा का स्रोत निहित है। वे अपने वर्तमान देश के प्रति वास्तविक भक्ति भावना का प्रदर्शन करने में विफल रहे हैं। उनकी भक्ति मात्र शाब्दिक ही रही है। यह दृष्टिकोण भयानक घृणा का कारण बना है, उतना शायद ही आदमी सोच सकता है। क्या कोई ऐसा देश है जहाँ वे पांटे और कुचले न गये हों और उनके साथ क्रूरता का व्यवहार न किया गया हो; जहाँ उन्हें छेड़ा न गया हो, उनका अंग–भंग और उनकी हत्या न की गई हो; जहाँ उनको छीना, लूटा और उत्पीड़ित न किया

गया हो; जहाँ उनका उपहास और तिरस्कार न किया गया हो तथा उन्हें असहाय न बना दिया गया हो ? विगत २५०० वर्षों के इतिहास में क्या कोई सदी गुजरी है जिसमें उनकी लड़कियों से बलात्कार न हुआ हो, जहाँ उनके बच्चों को जिस देश में वे रहे हैं भार न समझा गया हो; वे जानवरों से भी बदतर न समझे गये हों और जहाँ वे अपमानित न किये गये हों? मानवीय अधिकार न्याय, शिष्ट पड़ोसी और समान सामाजिक स्तर के अधिकार से उन्हें वंचित करना गैर यहूदी समाज का सामान्य दृष्टिकोण बन गया जो आगे मजहबी पूर्वाग्रहों के कारण और भी प्रज्वलित हुआ। ईसाई राज्यों में ईसा के हत्यारों के रूप में उनका तिरस्कार किया गया और मुस्लिम देशों में उन पर कोई कृपा नहीं दिखलाई गई क्योंकि वे निन्दित लोगों के समुदाय के सदस्य थे।

फिर भी, मेरे लिए यह न्यायपूर्ण नहीं होगा यदि मैं इसमें यह न जोड़ूँ कि यहूदियों ने ये सभी उत्पीड़न और अपमान अच्छी भावना और अपने ईश्वर के प्रति भक्ति भावना के कारण ही सहा है। उनकी अपने आदर्शों के प्रति भक्ति का इतिहास में कोई जोड़ नहीं है। इसकी तो स्तुति की जानी चाहिए, फिर भी मैं उसकी प्रशंसा करने में झिझकता हूँ। क्यों ? क्योंकि यह अंधविश्वास पर आधारित है, विवेक पर नहीं; क्योंकि यहूदी मष्तिष्क निज श्रेष्ठता की बाइबलिक गल्पों के प्रभाव में लकवाग्रस्त हो गया है और क्योंकि यहूदियों की प्रत्येक पीढ़ी के अविवेकी दृष्टिकोण में उनकी संतानों के विनाश का बीज निहित हैं। इन कथनों की सच्चाई इस तथ्य से प्रकट होती है कि यह्वे इसराइल की संतानों की संख्या आसमान के तारों या पृथ्वी की धूल के समान बढ़ाने में नाकाम रहा। क्या एकरारनामें के अपने पक्ष को उसने पूरा किया? मुझे इसमें संदेह नहीं, कि यहूदियों ने दूसरे किसी राष्ट्र की तुलना में अपने मजहबी सिद्धान्तों का अधिक भक्ति, उत्साह और निष्ठा से पालन किया और इस प्रकार अपने पक्ष की शर्तों को पूरा किया।

इतिहास इस तथ्य को सत्यापित करता है कि यहूदियों ने धर्मान्धता अर्थात् बाइबिल के आदेशों का अक्षरश: पालन करने के कारण ही इतना दु:ख उठाया। मैं संक्षेप में यह दिखाऊँगा कि यहूदियों की सामाजिक स्थिति में सुधार तभी होना शुरू हुआ जब उनमें से कुछ लोगों ने विवेक को अपने विश्वास का आधार बनाना शुरू किया। दुर्भाग्य से अभी भी उनमें से अधिकतर विवेक को स्वीकार करने को तैयार नहीं है, लेकिन पूर्ण राजनीतिक अधिकारों की व्यवहारिकता उन्हें विवेक सम्मत दृष्टि प्रदान करने में सक्षम होगी।

यहूदी बिल

यह विचित्र भले ही लगे, पर यहूदी मुक्ति का संबंध सीधे यूरोप में हुए सुधार के परिणाम स्वरूप ईसाई सिद्धान्तों से यूरोपियन दिमाग की मुक्ति से जुड़ा हुआ है। दी (ब्रिटिश) प्लांटेशन ऐक्ट १९ मार्च १७४० पहला बिल था जिसके द्वारा अमेरिकन उपनिवेशों में यहूदियों को "सम्राट के अधीन साम्राज्य के अंदर स्वाभाविक जन्मी प्रजा" के रूप में मान्यता मिली। "यहूदी बिल" जो १७५३ में लागू हुआ, सिर्फ एक वर्ष बाद ही लन्दन के ब्रिटिश व्यापारियों के जोरदार विरोध के कारण निरस्त करना पड़ा था।

यहूदियों से यूरोपियन घृणा का कारण

यह बिल इसलिए रद्द करना पड़ा कि यूरोप के अन्य देशों के समान ही ब्रिटेन में भी इनके विषय में एक सामान्य धारणा बनी हुई थी कि यहूदी एक एशियन नस्ल है जो खतना कराते हैं इसलिए ये ईश्वरीय अभिशाप के योग्य हैं, इनका ईश्वराधना का तरीका भद्दा है और गैर यहूदियों के प्रति इनका दृष्टिकोण असामाजिकतापूर्ण है। ये उत्तराधिकार से प्राप्त भ्रष्टाचरण वाले लोग हैं जो राज्य के अंदर राज्य बनाते हैं, बाहर के अपने प्रवासी देश के प्रति इनकी कोई निष्ठा नहीं होती है, और ये लम्बी दाढ़ी रखने और लम्बा कुर्ता पहनने के कारण हास्यास्पद दिखाई देते हैं। आधुनिक यहूदियों ने अपने धार्मिक सिद्धान्तों में परिवर्तन भले ही न किया हो, लेकिन अपना वाह्य स्वरूप निश्चय ही सुधार लिया है। उनके पूर्वजों ने ऐसे यहूदी की कल्पना नहीं की होगी, जो हल्के बाल, नीली आँखें और गुलाबी रंग–रूप का हो।

मानव अधिकारों के प्रति फ्रांस की घोषणा

१७८९ तक फ्रांस नागरिक स्वतंत्रता के सक्रिय नायक के रूप में सामने आया। असमानता के उन्मूलन और मनुष्य के दिमाग को मानवीय बनाने के लिए जो अमानुषिक विकृति का शिकार बन चुका था, जैसे नस्ली पूर्वाग्रह, धार्मिक उन्माद, पांथिक विद्वेष, व्यक्तिगत अधिकारों का हनन, अन्याय आदि, फ्रांस के समर्पण ने उदारवादी राजपत्र का विस्तार किया, जिसे "मानवाधिकार और नागरिक" के नाम से जाना गया और जिसका उद्देश्य यहूदी समुदाय को सामाजिक प्रतिबंधों और उत्पीड़न की श्रृंखला से मुक्त कराना था। फिर भी,

यहूदी पर संदेह इतना गहरा था कि यूरोपीय समाज में उनकी स्वीकृति अनुकम्पा पर नहीं बल्कि अनेक कठिन प्रश्नों द्वारा जाँच पर आधारित थी, जिसे यहूदी समुदाय के विशिष्ट लोगों की सभा में उठाया गया था, जो २९ जुलाई १८०६ को सम्राट नेपोलियन बोनापार्ट के आदेश पर बुलाई गयी थी।

यहूदी जाँच के लिए प्रश्नों का संक्षेपण इस प्रकार है :–

१. क्या यहूदी एक साथ एक से अधिक पत्नियाँ रखने में विश्वास करते हैं ?
२. क्या यहूदी तलाक में विश्वास करते हैं, विशेष रूप से तब जबकि फ्रांस का कानून इसकी इजाजत नहीं देता?
३. क्या वे ईसाइयों से अन्तर्विवाह में विश्वास करते हैं?
४. क्या यहूदियों द्वारा गैर यहूदी फ्रांसीसियों को पराये लोगों का भाई–बन्धु समझा जाता है?
५. फ्रांस में जन्मे और फ्रांसीसी नागरिक समझे जाने वाले यहूदी, क्या फ्रांस को अपना देश समझते हैं? क्या वे इसकी रक्षा करेंगे, और फ्रांसीसी कानूनों का पालन करेंगे?
६. क्या यहूदी को अन्य यहूदी से सूद लेना मजहबी कानून द्वारा वर्जित है?
७. क्या यहूदी कानून परायों से सूदखोरी की अनुमति देता है?

यहूदी प्रतिक्रिया

यहूदी समुदाय के प्रसिद्ध लोगों की सभा ने जो उत्तर दिया वह मूसा के कानूनों के विरुद्ध था, जिसमें विज्ञान, बचाव और बिल्कुल ही नयी व्याख्या का समावेश था। उदाहरण के लिए सूदखोरी के विषय में उनका कहना था कि हिब्रू शब्द "नेशेख" का अनुवाद "सूदखोरी" ठीक नहीं किया गया है। इसका अर्थ किसी प्रकार के लाभ से है केवल सूद से नहीं और इस प्रकार वर्तमान अर्थ अपनी प्रासंगिकता खो चुका है। तब क्या उन्होंने झूठ बोला या धोखा दिया ? बिल्कुल नहीं। इतिहास के लम्बे दौर में पहली बार उन्होंने इसे महसूस किया कि कठोरता से काम भले ही निकल जाये पर मृदुता से ही स्थायित्व आता है। उनके उत्तर बुद्धि, समझौता और अपने विश्वासों और जीने के तरीके में सुधार की इच्छा पर आधारित थे। इस बदलाव ने उनके

जीवन को पूरी तरह बदल दिया और उन्नीसवीं सदी का सबेरा उनके ज्ञान के क्षेत्र को जगमगा दिया जो अज्ञानता के अंधकार, जैसे धर्मभीरुता, धर्मोन्माद और सामाजिक रुकावट आदि से ग्रसित था। वही लोग जिन्हें यहूदी बस्तियों में रहने के योग्य समझा जाता था अपने लिए बड़ी–बड़ी गगनचुम्बी इमारतें तैयार करने लगे और विज्ञान, कला एवं साहित्य के क्षेत्र में बड़ी–बड़ी उपलब्धियाँ अर्जित की। सौभाग्य का यह अचानक प्रस्फुटन यह्वे की कृपा का फल नहीं था बल्कि पश्चिमी राष्ट्रों के उदार दृष्टिकोण का फल था जिसने जीवन के हर क्षेत्र में लम्बे डग भरे थे। इस सच्चाई का सीधा प्रमाण इस तथ्य में निहित है कि पूरब के यहूदी अभी भी उसी बौद्धिक धरातल पर हैं, जहाँ उनके पूर्वी पड़ोसी। जहाँ उनकी देन पश्चिमी सभ्यता के लिए अति मूल्यवान है वहीं उनमें पथप्रदर्शक तत्व की कमी है। उनकी उपलब्धियों की आत्मा और दिशा को पश्चिम की स्वतंत्र, उदार और मानवीय विचारधारा ने निर्धारित किया है। उनकी अपनी परम्पराओं ने उनके लिए दु:ख, अपमान और लम्बी दासता छोड़कर और कुछ भी प्रदान नहीं किया। वे एक शेखीबाज समुदाय हैं और दावा करते हैं कि उन्होंने ही पश्चिम को सभ्य बनाया। बाइबिल ने पश्चिम को सभ्य नहीं बनाया बल्कि पश्चिम ने बाइबिल को मानवीय बनाया, जिसने ४०० वर्षों तक अन्तर्राष्ट्रीय नरसंहार के पाप हेतु पूर्वाग्रह और धर्मोन्माद द्वारा क्रूसेडों की कार्रवाई को उकसाया था।

यह्वे के साथ यहूदी एकरारनामा की प्रकृति

निश्चय ही यहूदियों के लिए एक चीज उनका अपना है, वह है धन और शक्ति से प्रेम। यह्वे से उनकी संधि का सारा उद्देश्य यही है जो नैतिकता, मोक्ष (पापों से मुक्ति) और स्वर्ग के विषय में कुछ नहीं कहता, बल्कि सिर्फ सांसारिक उपलब्धियों तक सीमित रखता है। यही कारण है कि वे धन में दैवी विश्वास रखते हैं और अपना पूरा जीवन धन जोड़ने में ही लगा देते हैं जो उन्हें बहुत बड़ा व्यापारी और उद्योगी बना देता है। यहूदी को पैसा गिनने से अधिक और किसी चीज में आनन्द नहीं आता है। धन पर अधिकार ही यहूदियों को शक्तिशाली बनाता है और शक्ति अपनी जागृति में नि:सारता, हठ और निर्दयता लाती है और अहंकारी प्रवृत्ति, शक्तिशाली को, दूसरों में स्वंय

से नीचा होने का भाव भर देती है। यह भाव उनमें बचपन से ही प्रवेश कर जाता है। यह उनके विश्वास का एक भाग है जो निज श्रेष्ठता की भावना पर आधारित है।

सम्पत्ति के आधार पर अपने को श्रेष्ठ समझना एक बात है, लेकिन जब यह इस विश्वास से पैदा होता है कि वह ईश्वर की चुनी हुई नस्ल है और उसके साथ धन का भी आधार होता है, तब यह एक सनक में बदल जाता है; तब यह ''मिस्टर श्रेष्ठ'' को पूरी तरह आत्मकेन्द्रित और वास्तविकता से दूर कर देता है। खेद के साथ कहना पड़ता है कि ईश्वरप्रदत्त श्रेष्ठता की भावना एवं व्यक्तिगत धन का संयोग, जो झूठा और आडम्बरपूर्ण जीवन–पद्धति की ओर ले जाता है, यहूदियों के विनाश का कारण बना है। यह तथ्य बीसवीं सदी के दौरान स्वत: स्पष्ट हो गया जब नाजियों द्वारा उन्हें उत्पीड़ित किया गया। इसका क्या कारण था? नाजी–ईर्ष्या या यहूदी–अहंकार या दोनों?

यहूदी अस्पृश्यता

इस बात पर बहुत जोर दिया जाता है कि नाजी व्यवहार बहुत अमानुषिक और घृणित था, क्योंकि उसने औरतों और बच्चों को यातना देने हेतु अधीन बनाया और पश्चिम से यहूदियों का मूलोच्छेद करने का प्रयास किया, यह सही है। इसके लिए मैं नाजियों से अतिशय घृणा करता हूँ। लेकिन मैं जर्मन लोगों की निन्दा में, बिना अंतर किये हुए नहीं लग सकता, जिन्होंने विगत २००० वर्षों से मानवीय विशेषताओं को प्रकट किया है और सुधार द्वारा तथा विज्ञान, साहित्य और कला की नवीन पद्धतियों द्वारा सभ्यता के विकास में अत्यधिक योगदान किया है। अतिवादी राष्ट्रवाद के नारों द्वारा थोड़े समय के लिए उनके भटकाव को छोड़ दें तो वे लोग धर्मभीरु लोग रहे हैं और उन्होंने नस्लवाद को कभी नहीं अपनाया। यह सच्चाई कि ज़र्मनी पवित्र रोमन साम्राज्य का हिस्सा था और कोई भी ईसाई राष्ट्रीयता का व्यक्ति जर्मन सम्राट बन सकता था, वास्तव में, एक उपलब्धि थी, जो उच्च सांस्कृतिक परम्परा की ही देन थी। उनकी राष्ट्रवाद बाद की घटना है, जबकि यहूदी राष्ट्रीयता ३००० वर्ष पुरानी नस्ली श्रेष्ठता पर आधारित है, जिसकी स्वीकृति स्वंय ईश्वर (यह्वे) द्वारा प्रदत्त है। उनकी भौतिक और आध्यात्मिक शुद्धता बनाये रखने

के लिए यहूदी विधान आदेश देता है कि गैर यहूदी लोगों से अलग रहें और उनके द्वारा बनाया भोजन नहीं करें। यह अस्पृश्यता हिन्दू जाति व्यवस्था का मौलिक आदेश है जिसने ब्राह्मण नाम के एक छोटे समुदाय को जन्मना सर्वोच्च सामाजिक प्रतिष्ठा प्रदान की और जन्मना अपवित्र शुद्रों की निम्न स्तरीय बड़ी संख्या को पैदा किया। ब्राह्मणों ने भारत के निम्न वर्गों के साथ ठीक वही दृष्टिकोण अपनाया जैसा यहूदियों ने वैधानिक तौर पर गैर यहूदियों के साथ किया। मुझे आश्चर्य होता है, कहीं यहूदी ब्राह्मण जाति की ही शाखा तो नहीं है।

खेद के साथ कहना पड़ता है कि हिट्लर के सिद्धांत और कार्यों को आकार मिला था :

(ए) यहूदी दर्शन से और

(बी) यहूदी ऐतिहासिक आचरण से

यहूदी दर्शन

मौलिक यहूदी दर्शन कहता है कि ईश्वर इतिहास और प्राकृतिक घटनाक्रम से ऊपर है। उसने ईश्वरीय प्रेम के चिन्ह स्वरूप यहूदियों को चुना है। चूकि ईश्वर सबसे अच्छा का चुनाव करता है, इसलिए यहूदी लोग श्रेष्ठ नस्ल के लोग हैं। वे ईश्वर के लोग हैं। उनकी नियुक्ति ईश्वर (यह्वे) द्वारा ईश्वरीय इच्छा को पूरा करने के लिए इतिहास की धारा बदलने हेतु की गई है, जो और कुछ नहीं, वरन् यहूदी महिमा मंडन द्वारा ईश्वर का महिमा मंडन करना है, क्योंकि ईश्वर ने यहूदियों से एकरारनामा किया है कि वह यहूदियों को बाकी मानव जाति से श्रेष्ठता प्रदान करेगा। इसलिए इतिहास की सभी प्रमुख घटनाएँ यहूदियों द्वारा ही सम्पन्न होंगी, इस प्रकार उनके सपने, उनकी प्रतिष्ठा, उनका गौरव और उनकी श्रेष्ठता की पुष्टि होगी। आगे यहूदी ईश्वर यह्वे, एकरारनामें से बँधा हुआ है कि वह यहूदियों को गैर यहूदियों पर शासन करने में समर्थ बनाएगा और एक–एक कर दुश्मन और ढीठ राष्ट्रों को, यहूदियों द्वारा सम्पूर्ण रूप से नष्ट कर दिये जाने के लिए, सौंप देगा।

ईश्वर (यह्वे) से अपने विशेष संबंध और नस्ली श्रेष्ठता के प्रतीक स्वरूप, वे दावा करते हैं कि यह्वे ने व्यक्तिगत तौर पर उन्हें मिश्र से बाहर निकाला, चमत्कारों से फराओ को नरम बनाया और उनकी मुक्ति के लिए प्राकृतिक घटनाओं को आवश्यकतानुसार घटित कराया।

यह यहूदी दर्शन जो गैर यहूदियों के लिए अत्यधिक भद्दा और आक्रामक है, जो उन्हें हीन, जाहिल और अभागा समझता है और जिनका अन्तिम भाग्य यहूदियों की गुलामी की यातना झेलना है, यहूदी दार्शनिकों द्वारा सदियों से जोरशोर और हर्षोल्लास से घोषित किया जाता रहा है। जुडाह बेन सैमुएल हा–लेवी विश्वास करता था कि यहूदी इतिहास से ही ईश्वर का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। ब्रह्माण्डीय व्यवस्था के चिन्तन से नहीं। नचमन क्रोचमल उपदेश देता था कि यहूदी लोगों का ईश्वर से विशेष संबंध है, जो इसराइल का ईश्वर, यह्वे है। सैमुएल हर्स्य ने घोषित किया कि यहूदी इतिहास के प्रारम्भिक दिनों में ईश्वर ने अपने को चमत्कारों और आकाशवाणी के आश्चर्यों द्वारा प्रकट किया लेकिन अब वह स्वयं को यहूदी लोगों के अस्तित्व के रूप में प्रकट करता है। सोलोमन फार्मस्टेचर का विचार था कि जब ईसाइयत में यहूदी तत्वों का प्रभुत्व स्थापित हो जाय तब यहूदी हित के लिए उनका अलगाव त्याग देना उचित होगा।

यह गैर यहूदी विरोधी दर्शन है जो यहूदियों के लिए विष बन गया, जो अपने धर्म–सिद्धान्त के प्रभाव के कारण श्रेष्ठ नस्ल का होने में विश्वास करता है।

नाजी भी, जिन्होंने यहूदियों का उन्मूलन करने का निश्चय किया, जातीय श्रेष्ठता की बीमारी से, उनके कारण ही ग्रसित हुए। फिर भी उन्होंने अग्नि–दाह की भयंकरता से कुछ भी नहीं सीखा।

मैं अब ऐतिहासिक यहूदी आचरण पर विचार–विमर्श इस पुस्तक के सातवें अध्याय के लिए स्थगित करता हूँ कि –

(ए) यहूदी श्रेष्ठ (चुनी हुई) नस्ल है।

(बी)उन्हें ईश्वरीय अधिकार है कि वे इतिहास में सर्वोच्च स्थान पर रहेंगे और इसलिए सभी बड़ी मानवीय घटनाएँ उनके द्वारा ही घटित होंगी।

यही कारण है कि वे प्रत्येक संस्था में और सभी महत्वपूर्ण कार्यों में अपना नाम अंकित कराना चाहते हैं, उदीयमान गैर यहूदी की सफलता पर नाखुश होते हैं और उसे नीचे गिराने का षड्यंत्र करते हैं। यह स्पष्ट है कि इसी वजह से वे आडम्बरपूर्ण होते हैं और इतिहास की गति पर स्व नियन्त्रण की चाह में नारकीय अवगुणों से युक्त बन जाते हैं। मार्क्सवाद जैसा पागलपन से भरा सिद्धान्त और परमाणु बम जैसा संहारक हथियार मानवीय भाग्य को नियन्त्रित करने वाली यहूदी मूढ़ता के कारण ही पैदा हुए हैं।

ऐसा नहीं है कि वे अन्य नस्लों से अधिक प्रतिभावान हैं। उनका व्यवहार ईश–संदेश से तय होता है, जो उनमें श्रेष्ठ होने की भावना भर देता है तथा

उनको बचपन से ही एक ही बात की रट लगाने वाला, साहसी अत्याचारी और अहंकारी का प्रशिक्षण प्राप्त होता रहता है। उनको अपने दृष्टिकोण की कीमत प्रत्येक शताब्दी में चुकानी पड़ी है लेकिन वे अपनी किशोरियों के शील, बच्चों की सुरक्षा और मनुष्यता की प्रतिष्ठा की कीमत पर ईश–संदेश के भ्रामक हर्षोन्माद को ही वरीयता देते रहे।

●

5.

ईसाइयत

ईसाइयत ने मनुष्य की भय और कृपा की आन्तरिक, स्वत:स्फूर्त प्रवृत्ति का अनोखे ढंग से शोषण किया है। ईश–संदेश के प्रचलित सिद्धान्त के अनुसार ईसा के शब्द को ईश्वर का शब्द बताते हुए, जो सृष्टि के पूर्व से ही विद्यमान था, मनुष्य का नैसर्गिक धर्म घोषित किया गया है। मध्यकालीन पाण्डित्य ने विवेक और ईश–संदेश को संतुलित करने का प्रयास किया है। यहाँ तक कि अठारहवीं सदी में भी, ज्ञानोदय के धर्म–सिद्धांत ने ईसाइयत को विवेक सम्मत प्रदर्शित करने का प्रयास किया।

इन कथनों से और अधिक कौशल और सम्मोहन के साथ, पौराणिक कथाओं को कभी चित्रित नहीं किया गया। ईसाइयत पौराणिक काल्पनिक कथाओं का ही विस्तार है फिर भी इसके दैवी सम्मोहन ने अपने मुक्तिदाता के सम्मान के लिए लाखों ईसाइयों को स्वेच्छा से अपनी जान देने के लिए उत्प्रेरित किया जैसा दिये पर कीट–पतंग अपने को न्योछावर कर देते हैं।

ईसाई विश्वास के विषय

ईसाई पद्धति सर्वाधिक सुन्दर पौराणिक परिसंवाद है, जो ईश्वरीय प्रभा–मण्डल के भुलावे से युक्त है। इसके महत्वपूर्ण भाग इस प्रकार हैं – (१) सृष्टिकर्ता ईश्वर, (२) ईश–संदेश, (३) कुँआरी से जन्म, (४) त्रिमूर्ति, (५) कृपा और उद्धार, (६) पाप (मानव–प्रकृति), (७) परमेश्वर का राज्य (नर्क और स्वर्ग)

कुँआरी से जन्म (Virgin Birth)

सृष्टिकर्ता ईश्वर (Creator God) और ईश–संदेश (Revelation) पर पहले ही अपना विचार रख चुकने के बाद अब मैं तीसरा विषय अर्थात ''कुँआरी से जन्म'' पर वार्तालाप प्रारम्भ करूँगा। ईसा के जन्म से संबंधित कोई ऐसी सामग्री उपलब्ध नहीं है, जो उनके जन्म के रहस्य की खोज कर सके, क्योंकि

उन्होंने अपने जीवन से संबंधित न कोई विवरण लिख छोड़ा है और न ही तत्कालीन स्रोतों में उनके अस्तित्व से संबंधित कोई अभिलेख ही उपलब्ध है। उनके विषय में उपलब्ध ईसाई विवरण जो स्रोतों के समानान्तर विचारों, जैसे गोस्पेल्स ऑफ मैथ्यू, मार्क और ल्युक में मिलते हैं, ईसा को शूली पर चढ़ाने के कम से कम सत्तर वर्षों बाद और जॉन उसके तीन दशक और बाद, अस्तित्व में आये। यह भी कहा जाता है कि मैथ्यू, मार्क, ल्युक और जॉन सिर्फ नाम हैं क्योंकि वे ईसा की मृत्यु से करीब दो सौ वर्ष बाद चर्च और विश्वासियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लिखे गये थे।

वास्तव में, ईसा के अस्तित्व का साक्ष्य बहुत क्षीण है। उन्हें एक विद्वान व्यक्ति बताया जाता है। यदि सचमुच में जन समुदाय को प्रेरित करने की उनकी कोई योजना थी, तो उनका यह प्रथम कर्तव्य था कि वे इसे लिपिबद्ध करते लेकिन उन्होंने वैसा कभी नहीं किया। यह उन्हें एक काल्पनिक स्वरूप प्रदान करता है, जो ऐसे लोगों द्वारा तैयार किया गया था जिनका इससे हित साधन होता था। फिर भी ईसाइयत संसार में सबसे अधिक विस्तार पाया यह आश्चर्य ही है।

ईसा के माँ–बाप

यहूदी पारम्परिक आख्यानों द्वारा इस आकृति को और भी कलंकित किया गया है। उनके द्वारा ईसा को एक रोमन सिपाही पैन्थर का अवैध पुत्र बतलाया जाता है। लगता है, ओल्ड टेस्टामेन्ट को भी अति उत्साही यूनानी अनुवादकों द्वारा बदला गया है।

ईसा की व्याख्या करते हुए विद्वानों ने टिप्पणी की है कि हिब्रू शब्द ''अल्मा'' का ''कुँआरी'' अनुवाद ही यूनानी ओल्ड टेस्टामेन्ट में गलत किया गया है क्योंकि इसका सही अर्थ ''युवती'' है। ईसाई पादरियों द्वारा सभी मनगढ़ंत प्रयासों के बावजूद जिनकी अपनी पवित्रता ईसा की पवित्रता से जुड़ी होती है, हम ईसा के माँ–बाप की खोज यहूदियों पर ईश–निन्दा और भ्रष्टता जैसी हर बात के लिए दोषारोपण के बिना ही न्यू टेस्टामेन्ट के आधार पर कर सकते हैं। अध्याय एक, छन्द सोलह ईसा की वंशावली का वर्णन इस प्रकार करता है :

याकूब का पुत्र जोसेफ मेरी का पति था जिसने ईसा को जन्म दिया, जिसे ईसा मसीह कहा गया। मेरी की सगाई जोसेफ से हुई थी, जो बढ़ई था। चूकि

बिना अपवाद के प्रत्येक मनुष्य का पिता कोई मनुष्य होता है इसलिए ईसा का भी पिता कोई मनुष्य ही होगा। मेरी का कुँआरी होना बहुत व्यग्र करने वाला प्रसंग है। मार्क साफ–साफ कहता है कि जेसस, यूसुफ का पुत्र था और उसके अनेक भाई–बहन भी थे। यदि सभी बच्चों को पैदा करने के लिए मेरी को पति की आवश्यकता थी तो यह कैसे संभव है कि ईसा के लिए उसे किसी पति की आवश्यकता नहीं पड़ी? ईसाई पौराणिक कथा के अनुसार मेरी ईश्वर की दुल्हन थी पर उसकी शादी एक मनुष्य के साथ हुई थी। इससे स्पष्ट होता है कि उसमें कुँआरी बने रहने की क्षमता नहीं थी। ईश्वर ने भी उसके कुँआरी बने रहने की चिन्ता नहीं की। फिर भी ईसाई चर्च ने कुँआरापन का ही गीत गाया। (जॉन ६:४२) भी इसे पुष्ट करता है कि ईसा यूसुफ का पुत्र था। (ल्यूक २:४८) में मेरी ने स्वंय कहा है कि ईसा का पिता यूसुफ (Joseph) था। अगला छन्द निश्चय ही इसका खण्डन करता है, पर माँ का साक्ष्य ही विश्वसनीय और अंतिम माना जायेगा।

ईश–संदेश पर आधारित मजहब, सर्वाधिक बड़ा लौकिक व्यापार है जो सदा से विद्यमान है और इसकी सफलता पूरी तरह लोगों के मष्तिष्क–प्रच्छालन की शक्ति पर निर्भर करता है, जो शाश्वत जीवन, स्वर्ग में स्थान का आरक्षण और नर्क से बचाव के आश्वासन पर आधारित है। अलौकिक प्रकृति के ऐसे सम्मोहन, सामान्य मनुष्य की तार्किक सामर्थ्य से बाहर की चीज होते हैं। इसलिए देवत्व के व्यापारी को एक ऐसी पौराणिक आकृति की रचना करनी पड़ती है, जो अति विशाल हो, जिसमें महानता और ईश्वरत्व का पूरा समावेश हो, ताकि अलौकिक कृपा बिल्कुल सामान्य क्रिया जैसी दिखाई पड़े। वे इसे ऐसी सहजता से प्रकट करते हैं, जैसा बाज चिड़िया पकड़ने में, हाथी सीमेन्ट की एक बोरी ढोने में या ऊँट एक फरलाँग मरूभूमि पार करने में करते हैं।

कुँआरी से जन्म चमत्कारों का एक हिस्सा है जिनके विषय में, समझा जाता है, ईसा ने प्रदर्शित किया था; जैसे, समुद्र और हवा को डाँटना, भूत भगाना, बीमारी ठीक करना, मरे को जिलाना, अपने चेलों की उपस्थिति में रूप बदलना, रोटी के दो टुकड़े और मछली से हजारों लोगों को भोजन कराना और सबसे बढ़ कर, मृत्यु के बाद स्वयं जी उठना।

त्रिमूर्ति (Trinity)

यद्यपि ''ट्रिनिटी'' को ईसाई मत का मौलिक सिद्धान्त समझा जाता है, बाइबिल में इसकी मौलिकता का कोई साक्ष्य नहीं मिलता है। ईसाई इसे स्वीकार करने में अनिच्छुक दिखते हैं, पर यह हिन्दू धर्म की त्रिमूर्ति का ही बदला रूप है जिसका अर्थ है सत्य के तीन स्वरूप। (पुस्तक ''टैक्सेशन'' और ''लिबर्टी'' पृ० ३२ देख सकते हैं)

यह एक विकसित धारणा है। इसे चौथी शताब्दी ईसवी सन् के अन्त के पहले तक ईसाइयों द्वारा अन्तिम रूप नहीं दिया जा सका था। यह ''महान ईसाई आयोग'' की आज्ञाओं से ही निकला है जिसमें सारी दुनिया को पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम पर बपतिस्मा द्वारा धर्मान्तरित करने का अनुयायियों को आदेश दिया गया था। (मैथ्यू २८:१९) (११ कोर १३:१४) में, जिसमें सर्वोच्च रोमन धर्माधिकारी का आशीर्वाद प्राप्त था, ने भी इस सिद्धांत को बढ़ावा दिया था।

चूकि ईसाइयत यहूदीवाद की ही शाखा है, यद्यपि यहूदियों के अनुसार ईश निन्दक है, फिर भी इसे ओल्ड टेस्टामेन्ट के एकेश्वरवाद पर ही आधारित होना चाहिए था। कैप्पाडोसियन पादरियों ने अन्ततः इसको वर्तमान प्रचलित स्वरूप प्रदान किया, जो घोषित करता है कि ईश्वरत्व के तीनों अंग एक ही सार तत्व है। दूसरे शब्दों में पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा; एक ही ईश्वर के तीन प्रकार हैं। वे ईश्वर नाम के प्राणी से अलग चीज नहीं हैं।

ईसा मसीह और ईश्वरीय उपाधिकार (Viceroyalty)

अपने विश्वास की काल्पनिक पौराणिक कथाओं को तथ्यों के पुट से सजाने का, सदा ही, विश्वासियों का प्रयास रहता है, भले ही वे कितना भी कमजोर, असत्य और हास्यास्पद क्यों न हो। लेकिन एक स्वतंत्र सत्यान्वेषी उनके धर्मग्रन्थों की निष्पक्षता से जाँच का अधिकारी होता है। जब हम इस मार्ग का अनुसरण करते हैं, तब ईसा मसीह ''ईश्वरीय सत्ता के उपाधिकारी'' के सिद्धांत के अनुरूप ही दिखाई पड़ते हैं, जो स्वयं में ईश्वरत्व का आरोपण कर स्वयं को पैगम्बर या संदेश वाहक घोषित करता है। आगे हम देखें कि किस प्रकार ईसा ने इस प्रकरण को विकसित किया ''ईश्वर एक है और

सर्वशक्तिमान है'' के सिद्धांत का उन्होंने प्रतिपादन किया। (१ कोर ८:४)। हर चीज उसकी सामर्थ्य के अंदर है (मैथ्यू १९:२६) वह प्रेम स्वरूप है (१ जॉन :४:८)। यह घोषित करने के बाद, उसने मानव जाति को कहा कि ईश्वर चाहता है कि निष्ठा और भाव पूर्वक उससे प्रेम किया जाय। (मैथ्यू २३:३७)

ईसा का ईश्वर से क्या संबंध था ? (सेन्ट ल्यूक ११:४९) ईश्वरीय पद्धति की चर्चा करता है, जिसके अनुसार पैगम्बर और नबी को ईश्वर द्वारा, मानव जाति के मार्गदर्शन के लिए, भेजा जाता है। उदाहरण के लिए ईसा का पूर्वगामी जॉन एक पैगम्बर था (जॉन ३:२७—२८)। ईसा भी वही था (मैथ्यू २०—२३। लोग ईसा को ''नजारेथ का पैगम्बर'' कहते थे। वास्तव में ऐसा बाइबिल कहता है (जॉन ६:१४) कि ईसा पैगम्बर थे जो संसार में सत्य की स्थापना के लिए आये थे। उन्होंने स्वयं ही स्पष्टता से कहा कि ईश्वर ही मुक्तिदाता है, मैं नहीं (मैथ्यू २०:२३), जो भी मैं बतलाता हूँ वह ईश्वर के सिद्धान्त हैं, मेरे नहीं (जोन ७:१६); मैं पृथ्वी पर पिता की इच्छा पूरा करने आया हूँ (जॉन ६:३८) जो मुझसे बड़ा है (जॉन १४:२८)।

पैगम्बर और मनुष्य की हीनता का संबंध भी तब छिन्न—भिन्न होना शुरू होता है जब ईसा एक मनुष्य और पुत्र के रूप में अपने पर ईश्वरत्व का आरोपण करना शुरू करता है। उसका दावा है :

१. पिता द्वारा पुत्र को प्रत्येक चीज प्रदान किया गया। उसे बिना ईसा की सहायता के जाना नहीं जा सकता है। (मैथ्यू ११:२७)

२. पिता के प्रत्येक चीज को पुत्र के नाम से माँगना है और यह प्राप्त होगी। (जॉन १५:१६)

३. पिता, पुत्र को न्याय का सभी अधिकार देता है (जॉन ५:२२)

४. स्वर्ग और पृथ्वी की सारी शक्ति ईसा में समाहित होने का दावा किया जाता है जो शिष्यों को पिता, पुत्र और पवित्रात्मा के नाम से सभी राष्ट्रों को धर्मान्तरित करने का आदेश देता है। (मैथ्यू २८:१९)

५. सेन्ट जॉन, अध्याय एक, ईश्वर और शब्द के सिद्धान्त को आगे बढ़ाता है जो ईश्वर और ईसा के सह—अस्तित्व को निश्चय पूर्वक स्थापित करता है। अध्याय १०:३०, ईसा कहता है कि मैं और पिता एक ही हैं और छन्द ३८ इस दावा को पूर्णता प्रदान करता है।

६. अन्त में, ईसा, ईश्वर पर भारी पड़ता है और कहता है कि मुझे यशस्वी बनाइये क्योंकि मैं संसार के पैदा होने के पहले से ही आप के साथ हूँ।

७. उपराज्याधिकारी की युक्ति द्वारा जो पहले पैगम्बरी और पुत्रत्व धारण किया था, ईसा ने अपने पर ईश्वरत्व आरोपित कर लिया।

ईसा ने ईश्वरत्व कैसे प्राप्त किया

प्रभुत्व की चाह सम्पूर्ण समर्पण की माँग करती है; प्रेमासिक्त भक्ति और आत्म निम्नत्व (जिसे पूजा कहते हैं) आत्मसमर्पण की सर्वोच्च अवस्था है, जो ईश्वर को प्राप्त होती है। यही कारण है कि प्रभुत्व की प्रबल आकांक्षा वाले लोग स्वयं पर ईश्वरत्व का आरोपण करते हैं।

ईसा कहते हैं –

१. वह जो मेरे साथ नहीं है, मेरे विरुद्ध है (मैथ्यू १२:३०)

२. ईसा के साथ संबंध स्थापित करने के लिए लोगों के पास सिर्फ एक ही मार्ग है। वह मार्ग है अपने माता, पिता, पुत्र या पुत्री से भी बढ़कर ईसा को प्रेम करना। (मैथ्यू १०:३७) वह और भी आगे जाता है और मांग करता है कि उसका शिष्य होने के लिए अपने माँ, बाप, पत्नी, बच्चे, भाई, बहन और यहाँ तक कि अपने जीवन से भी घृणा करना आवश्यक है। (ल्यूक १४:२६)

विश्वासियों को रिश्वत

३. (पापों से) मुक्ति पाने का एक ही मार्ग है, अपने सभी संबंधों और सामग्रियों का परित्याग; इसके बदले में सौ गुना पुरस्कार और अनन्त जीवन प्राप्त होगा।

ईश्वरीय प्रेम का क्या यही रूप है! यह उन सबके आत्मत्याग और अवमूल्यन की वकालत करता है जिनका हमारे प्रेम और आदर पर स्वाभाविक दावा है और इस प्रकार सभी सांस्कृतिक और आत्मिक मूल्यों को पतित बना देता है। चूकि इसे करा पाना बहुत कठिन काम है इसलिए ईसा उनके मार्ग में, जो समान रूप से आत्मकेन्द्रित हैं और मुक्ति की चाह से कम पर नहीं रुक सकते हैं, अबाध प्रलोभन का उपाय करता है। वह सीधे और अपने शिष्यों के माध्यम से कहता है :

१. ईश्वर के लिए सच्चा काम ईसा में विश्वास करना है। (जॉन ६:२९)

२. जिन्होंने अभी तक देखा नहीं, पर विश्वासी हैं, वही परमेश्वर के आशीर्वाद के पात्र हैं। (जॉन २०:२९)

३. ईसाइयत में एक अन्न–कण भी विश्वास करने वाला व्यक्ति वृक्ष को उखड़ जाने और समुद्र में लग जाने की आज्ञा दे सकता है। (ल्युक १७:६)

यह स्पष्ट है कि ईसाई के लिए यह सबसे आसान काम है। क्या आज पोप सहित एक भी ईसाई है, जो ऐसा कर सकता है? चूकि एक भी ईसाई ऐसा करने में सक्षम नहीं है, ईसाइयत स्वयं ही इसे एक ठगी, और ईसाई विश्वास को एक पाखण्ड सिद्ध करता है जो आत्म प्रवंचना के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

अनुकंपा औा पाप–मुक्ति

अंधविश्वास के मूल्य और पवित्रता को आसमान की ऊँचाई पर स्थिर कर चुकने के बाद, उसके शिष्यों ने कानून और नैतिकता की जड़ पर चोट किया; इस तथ्य के बावजूद कि न्यू टेस्टामेन्ट मूसा के कानूनों और कार्यों की पवित्रता का आधिकारिक समर्थन करता है। उन्होंने परिपाटी को सरल बनाने के उद्देश्य से ऐसा किया, साथ ही अविश्वासियों और नास्तिकों को प्रलोभित करने हेतु शूली के सम्मोहक प्रपंच को विकसित किया ताकि वे विवेक का त्याग कर विश्वासी बन जायँ। इस दर्शन का मौलिक परिणाम यद्यपि आकर्षक है पर यह समझना आसान है कि काम करने के कष्ट को क्यों सहा जाय, जबकि सर्वोच्च विश्वास इच्छित लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। मनुष्य की इस मनोवृत्ति का यह भाग है जिसके अनुसार वह ऐसे अवसर को चाहता है जिसमें बिना कुछ किये ही पुरस्कृत होता रहे। मनुष्य को यदि सभी साधन बिना परिश्रम किये ही प्राप्त होते जायँ तो वह काम क्यों करेगा? इसलिए उसका झुकाव ऐसे मजहब के पालन की ओर होता है जो उसे बिना व्यावहारिक प्रयास के ही अमरत्व प्रदान करता है, जो आत्म अनुशासन और कठिन परिश्रम की माँग करता है।

विश्वास और अनुकम्पा द्वारा मुक्ति की प्रक्रिया के विषय में रोमन्स के अध्याय ४ और ५ में अच्छी तरह वर्णन किया गया है।

मैं निम्नलिखित की ओर ध्यान दिला सकता हूँ –

(ए) ईसाई कानून के अधीन नहीं; बल्कि कृपा के अधीन हैं। (रोमन्स ६:१४)

(बी) यदि तुम ईसा को अपना स्वामी स्वीकार करते हो तो तुम्हारी रक्षा की जायेगी (रोमन्स १०:९)

(सी) अनुकंपा तभी अनुकंपा है जब कि काम से उसका कोई जुड़ाव न हो। (रोमन्स ११:६)

(डी) एक अच्छे ईसाई का जीवन विश्वास पर आधारित है। (गैल ३:११)

(ई) नियम एक अभिशाप है और ईसा ने हमें इससे मुक्त किया है। (गैल ३:१३)

(एफ) नियम का बन्धन सही लोगों के लिए नहीं बल्कि दुष्टों के लिए है। (१ तिमोथी १:९–१०)

हिब्रूज के अध्याय ११ में विश्वासियों को सब कुछ पाने के आश्वासन को खूब अतिरंजित किया गया है।

अनुकम्पा के कार्य

आचार से छुटकारा, अनुकम्पा के ईसाई सिद्धान्त की रचना का सहभागी है। यह ईश्वरीय कृपा का पुरस्कार है जो विश्वासियों को मुक्ति प्रदान करता है। ईश्वर प्रदत्त अनुकम्पा ईसा में निहित है। उसके बाद मनुष्य अवश्य ही ईश्वर की ओर अभिमुख होगा और इस संबंध को बनाये रखने की जिम्मेवारी भी उसी की होगी। ईसाइयों द्वारा यह विश्वास किया जाता है कि ईश्वर की निस्तारण कृपा का निश्चय ही परम प्रसाद प्राप्त होगा, पर लोगों द्वारा ही इसका कोई विश्वसनीय आश्वासन नहीं है। क्योंकि ईश्वर का प्रसाद उन्हीं को प्राप्त होगा जिसे वह देना चाहे, यह उसकी कृपा पर निर्भर है और ईश्वर किसी नियम के बंधन में नहीं है। ईश्वर और आचार का बंधन? क्या पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि राजा या उसके द्वारा अभिषेकित शासक तानाशाह, स्वेच्छाचारी और विनाशकारी नहीं है ? वह गैर ईसाइयों के प्रति निष्पक्ष क्यों होगा? भारत के हिन्दू और चीन के बौद्ध जब नर्क में डाले जायेंगे तो उनको ईश्वर की निस्तारण कृपा नहीं मिलने की शिकायत का कोई अधिकार नहीं होगा क्योंकि वे गैर ईसाई परिवारों में पैदा हुए। स्पष्ट है कि ईसाइयों के लिए जो कृपा है गैर ईसाइयों के लिए वह अभिशाप है।

पाप (मानव–प्रकृति)

अनुकम्पा के सिद्धांत को जादुई आग्रह प्रदान करने हेतु ईसाई पादरियों ने मानव प्रकृति की असाधारण व्याख्या प्रस्तुत की है। (जेनेसिस १:२६) घोषित करता है कि ईश्वर ने मनुष्य को अपनी ही आकृति और समानता का बनाया और अन्य प्राणियों पर उसको श्रेष्ठता प्रदान की।

ज्ञान का वृक्ष

"ईश्वर (गॉड) ने अपने समान मनुष्य को बनाया," यहाँ इस बात पर जोर देने का अर्थ है, ईश्वर और मनुष्य में समानता दिखाना, कम से कम उनकी मौलिक प्रकृति में समानता दिखाना। यदि यह सत्य होता तो मनुष्य पथभ्रष्ट नहीं होता, भले ही उसका कोई विश्वास हो। फिर भी ईसाई पादरियों ने ऐसे दर्शन का अनुसंधान किया जो मनुष्य को स्वाभाविक रूप से बुराई प्रदान करता है और ईश्वर की अनुकम्पा के बिना उससे मुक्त होने में असमर्थ दिखाता है। बाइबिल की कहानी कहती है (जेनेसिस अध्याय २) कि ईश्वर ने पुरुष और महिला को बनाया और ईडेन के बाग में रहने के लिए नियुक्त किया, जहाँ दुःख, बीमारी और मृत्यु का नाम नहीं था। सबसे बढ़कर बात यह थी कि उन्हें जीने के लिए कुछ भी परिश्रम नहीं करना था। सब कुछ ईश्वर की कृपा से उपलब्ध था और सभी इच्छित चीजें प्राप्त थीं। ईश्वर ने बाग में भले–बुरे के ज्ञान का एक पेड़ उगाया और मानव जाति के आदि पुरुष आदम को इसका फल खाने से मना किया। अपनी पत्नी ईव द्वारा बहकाने से दोनों ने (१) मना किया हुआ फल खाया, और (२) मौलिक पाप किया जो मानव जाति के अनवरत दुःख का कारण बना, जैसे कृषि के लिए परिश्रम, बच्चा जनने का दर्द, रोग और मृत्यु। ईश्वर ने कृपा के तौर पर मानव जाति को पाप और शाश्वत मृत्यु से उबारने के लिए ईसा को भेजा।

जो भी हो, जब हम इस प्रसंग पर गहराई से ध्यान केन्द्रित करते हैं तब जेनेसिस (३:२२) में पाते हैं कि ईश्वर इस तथ्य से सावधान हो गया कि मनुष्य भले–बुरे के ज्ञान के कारण उसके समान हो जायेगा।

वर्जित फल और इसका सही अर्थ

१. यह स्पष्टता से दिखाता है कि ईश्वर ने मनुष्य को अपने समान नहीं बनाया क्योंकि "मनुष्य ईश्वर बन जायेगा" अगर वह वर्जित फल खा लेता है।

२. ईश्वर ने निश्चय ही मनुष्य को पशु बनाया जिसको अच्छा या बुरा का ज्ञान नहीं था। चूकि वर्जित फल ने मनुष्य को अच्छा या बुरा का ज्ञान दिया और इस प्रकार व्यावहारिक आचरण से उसको आत्मोन्नति का अवसर प्रदान किया, जिसका अर्थ है बुरे के परित्याग और अच्छे के अनुसरण की योग्यता, तब ईश्वर मनुष्य द्वारा ईश्वरत्व प्राप्ति की संभावना को देखते हुए ईर्ष्या से सचेत हो गया।

इसका मतलब हुआ कि वर्जित फल खाना सही काम था, क्योंकि इसने मनुष्य में नैतिक गुणों का समावेश कर दिया लेकिन अच्छे ईश्वर ने इसको 'पाप' नाम दिया। बाइबिल की व्याख्या को सही माना जाय तब भी मनुष्य इस आरोप से मुक्त है क्योंकि –

१. यह ईश्वर का दोष है कि उसने मनुष्य में इस विनाशक लोभ को उभाड़ा और उसे रोक नहीं सका।

२. ईश्वर मनुष्य को भ्रष्ट न होने वाली प्रकृति प्रदान करने के काबिल ही नहीं है।

३. चूकि ईश्वर दावा करता है कि उसने मनुष्य को अपनी आकृति और समान पसंद वाला बनाया इसलिए वह भी मनुष्य जैसा ही पथभ्रष्ट होने योग्य है।

४. मनुष्य की रचना ईश्वर की एक बचकानी क्रीड़ा है अन्यथा वह मनुष्य को ऐसी भंगुर प्रकृति नहीं प्रदान करता जो एक जाँच में ही खरा न उतर सका, और अवज्ञा कर बैठा।

प्रारम्भिक पाप

सृष्टिकर्ता ईश्वर ही सृष्टि का जिम्मेवार है, फिर भी ईश्वरीय मूर्खता का भार मनुष्य को ढोना पड़ता है। वर्जित फल खाने की घटना, जो सृष्टिकर्ता के सख्त आदेश की अवज्ञा थी, को प्रारम्भिक पाप कहा गया। ईसाई सिद्धांतों और पाप–मुक्ति के विश्वास की व्याख्या करते हुए सेन्ट पॉल ने अपने पत्र में रोमन लोगों को कहा कि प्रारम्भिक पापकर्ता आदम की संतान होने के कारण एक बच्चा अपने जन्म के समय भी ईश्वरीय क्रोध और कलंक का भागी होता है। इस कथन से मनुष्य की सदा स्वच्छ प्रकृति को प्रदूषित कर दिया गया। उसमें अपनी इच्छा और कौशल से बचने और बढ़ने की सामर्थ्य नहीं रही, उसकी एकमात्र आशा त्राता ईसा की कृपा ही रह गयी।

पाप–मुक्ति एक व्यापार

अगर सेन्ट पॉल ने यह स्मरण किया होता कि आदम ने इसलिए पाप किया कि उसमें पूर्ण आज्ञापालन की सामर्थ्य का अभाव था, जिसके कारण उसने जो किया उससे बचा नहीं जा सका, तो मनुष्य की किस्मत ज्यादा आसान हो गयी होती। अगर उसने कहा होता कि यह ईश्वर के लिए न्यायोचित नहीं था कि माँ–बाप के दोष के लिए उसकी हजारवीं पीढ़ी तक को दण्डित किया जाय, तो यह बात न्याय के पक्ष में होती, जिसकी हताश मानवता को बहुत आवश्यकता है। लेकिन ऐसे मंतव्य से ईसाइयत का ही खात्मा हो जाता और इन परिस्थितियों में सेन्ट पॉल दैवी उपदेशक के व्यापार से बाहर हो जाते। सब कुछ के बावजूद पाप मुक्ति के व्यापार से बढ़कर दूसरा कोई व्यापार नहीं है क्योंकि इसके ग्राहक सदा इस मायावी वस्तु की अतुलनीय ऊँची कीमत धन, खून और जीवन के रूप में, चुकाने हेतु इच्छुक रहते हैं और साथ ही ईश्वरत्व के व्यापारियों के सामने गिर कर रेंगने के लिए बेचैन रहते हैं।

शूली पर चढ़ाया जाना : मृत्यु के बाद पुनः जीवित होना

हमें याद रखना चाहिए कि पाप की ईसाई अवधारणा, ईश्वरीय आदेशों की अवज्ञा की सीमा को भी पार कर जाता है, क्योंकि यह मनुष्य को स्वयं ही पाप के अधीन कर देता है। इसलिए ईसाई सिद्धान्त ईसा को अवतार के रूप में प्रतिपादित करता है, अर्थात ईश्वरीय कृपा का मनुष्य के रूप में अवतरण। उनको शूली पर चढ़ाना, मानवीय आरम्भिक पाप के शमन और पुनर्जीवित होना मानव जाति (सिर्फ विश्वासियों) के पुनर्जीवन और पाप–मुक्ति के लिए था।

संतों की पुण्य की पिटारी

यह 'शूली पर चढ़ाने से शमन' की योग्यता ही है जिसने पाप से मुक्ति को संभव बनाया। पोप के स्तर पर पुण्य के दर्शन के कारण ईसाइयों को धन और जीवन के रूप में भारी कीमत चुकानी पड़ी है। चर्च ने यह विचार दिया कि यद्यपि मनुष्य पापी है, उसे ईश्वर ने कृपा प्रदान की है जिसे, अर्थात ईश्वरीय कृपा को वह अपने कार्यों से बढ़ा सकता है। इस प्रकार वह मरते समय तक मुक्ति के लिए आवश्यक पुण्य से भी अधिक प्राप्त कर सकता है।

'यह अतिरिक्त पुण्य उद्धारक लोगों के लिए आवश्यक नहीं है' का विचार पोप की विशिष्ट शब्दावली की रचना करता है जिसे ''सन्तों के पुण्य की पिटारी'' नाम से जाना जाता है। ऐसे लोग जिनके पास स्वयं का प्रारब्ध कम हो, पर पाप की पीड़ा से बचना चाहते हों, पोप–अधिकारियों को एक अनुपात में धन का भुगतान कर ''सन्तों के पुण्य के खजाने'' से कुछ प्रारब्ध (पुण्य) अपने लिए प्राप्त कर अपने पाप की किताब को संतुलित कर सकते हैं।

आध्यात्मिक लेन–देन : पाप मुक्ति

इस लेन–देन को ''इन्डल्जेन्स'' कहा गया। इसके लिए पापी को चर्च को अनुदान देना पड़ता था। इस आध्यात्मिक लेन–देन का सबसे पहले प्रभावी विरोध जर्मनी के मार्टिन लूथर ने किया। अनेक महिलाओं ने पाप–मुक्ति के आश्वासन को स्वीकार कर स्थानीय पादरियों के पास अपने शील को बंधक रख दिया। उनका (पादरियों का) अवैवाहिक जीवन उनके ही विनाश का कारण बना। ईसाइयों में रखैलपन की प्रथा का यह एक प्रमुख कारण था।

शूली की जाँच

यद्यपि सन्तों के ''पुण्य के खजाने'' का भण्डाफोड़ हो चुका है, प्रारम्भिक पाप–शमन और अनुग्रह हेतु ईसा की शूली से उपजे पुण्य पर अभी तक ईसाइयों द्वारा सवाल नहीं उठाया गया है।

हम लोग इस पर विवेक सम्मत विचार करें –

१. ईसा गॉड का मेमना है जो मानव जाति के पाप को ढो ले जाता है। (जॉन १:२९)

२. ईसा ने प्रत्येक मनुष्य के लिए मृत्यु को अपनाया (हेब्रूज २:९)

३. ईसा ने मनुष्य के पाप के लिए, अपनी जान दी और फिर हमारे पुनर्जीवन के लिए जी उठा (रोमन्स ४:२४–२५)

४. गॉड दुनिया को इतना प्यार करता है कि उसने उसकी रक्षा के लिए अपने एक मात्र पुत्र की बलि दे दी (जॉन ३:१६–१८)

५. गॉड अकेला है, ईसा ने जो मानव जाति के लिए अपने को समर्पित कर दिया, गॉड और मनुष्य के बीच मध्यस्थता करने वाला है। (तिमोथी २:५–६ और २०–२८)

६. गॉड का प्रिय पुत्र ईसा सृष्टि के पहले से है। (जॉन १७:२४)

७. गॉड ने ईसा के खून से मानव जाति का उद्धार किया। ईसा के लिए ही सृष्टि की रचना की गयी थी और ईसा में ही पूर्णत्व निहित था। (कोलोस १:१४–१९)

इन छन्दों की स्वतंत्र व्याख्या से यह स्पष्ट होता है कि :

१. जेसस गॉड का मेमना थे जिन्हें मनुष्यों के पाप के लिए शूली पर चढ़ाया गया।

२. चूकि उन्होंने प्रत्येक मनुष्य के लिए मृत्यु को अपनाया, उनकी श्रेणी कृपा करने वाले की हो गई।

३. ईसा को शूली पर मनुष्यों के अपराध के लिए चढ़ाया गया और उनका पुन: जी उठना न्याय के लिए था अर्थात हमारे पुनर्जीवन को संभव बनाने के लिए।

४. ईसा गॉड का एक मात्र पैदा किया हुआ पुत्र थे।

५. गॉड ने अपने पुत्र को शूली पर संसार की रक्षा के लिए चढ़ाया, क्योंकि उसे संसार से बहुत प्रेम है।

६. जो ईसा में विश्वास करता है वह कभी नष्ट नहीं हो सकता, वह सदा रहेगा।

७. ईसा मनुष्य का त्राता हैं क्योंकि उन्होंने उसी उद्देश्य के लिए अपना बलिदान दिया।

८. गॉड अकेला है, इसलिए कोई एक ही व्यक्ति गॉड और मनुष्यों के बीच मध्यस्थ हो सकता है, वह ईसा हैं।

९. ईसा संसार के पहले से हैं। गॉड ने पूर्व से ही अस्तित्वमान होने के कारण उन्हें प्रेम किया। गॉड ने सबकुछ की रचना ईसा के लिए ही की।

१०. वह गॉड का प्रतिरूप हैं और सारी पूर्णताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उपर्युक्त स्थापनाओं पर एक सरसरी निगाह ही ईसाइयत के महल को टुकड़ों में विखेरने के लिए काफी है :–

१. ईसा के संबंध में ''गॉड के मेमने'' की अवधारणा की बलि की पद्धति की मानवीय कमजोरियों के शोषण के लिए विकसित किया गया, जिसका तात्पर्य है कि देवताओं को तुष्ट और प्रसन्न तभी किया जा सकता है जब मनुष्य या पशु की बलि दी जाय।

यह रिवाज इतिहास के प्रारम्भ से ही सारी दुनिया में प्रचलित है। यद्यपि सभ्यता के विकास के साथ मानव बलि की प्रथा का अन्त हो चुका है, पशुओं की बलि की प्रथा अभी भी यथावत अनियन्त्रित ढंग से चल रही है, विशेष रूप से मुस्लिम देशों में।

(ए) शूली, उत्पीड़न और मौत का हथियार था, जिसका उपयोग दुष्टों जैसे गद्दार, खूनी, बलात्कारी, डाकू और वैसे ही अन्यों को समाप्त करने के लिए किया जाता था। इस प्रकार की अत्यन्त भयंकर यातना द्वारा सर्वाधिक पवित्र उद्देश्य की पूर्ति करना शूली पर ईसा की मृत्यु की कीमत को घटा देता है।

२. ईसा की मृत्यु अनुग्रह नहीं हो सकती क्योंकि उनकी मृत्यु मानव जाति के लिए नहीं हुई थी। ईसाई इसकी मान्यता विश्वास के कारण देते हैं न कि तथ्य के कारण। अध्याय १४ के छन्द ६०—६३ में "मार्क" स्पष्ट करता है कि ईसा को यहूदियों ने ईश—निन्दा के आरोप में दण्डित किया था। यद्यपि गवर्नर पोन्टियस पिलेट उनके निर्दोष होने में विश्वास करता था, यहूदी उनके दोष के प्रति इतने आश्वस्त थे कि उन्हें शूली पर चढ़ाने की पूरी जबाबदेही अपने ऊपर ले ली। (मैथ्यू २७:२५) उनके लिए यह सबसे बड़ी ईश—निन्दा थी। (जॉन १९:१७)

किसी काम के पाप या पुण्य का निर्धारण उसके पीछे की नीयत से होता है। यदि मैं स्वेच्छा से किसी आक्रमणकारी के हमले से देश की रक्षा हेतु सेना में भर्ती होता हूँ तो मैं देशभक्त हूँ, पर यदि मैं अपनी इच्छा के विपरीत भर्ती के लिए बाध्य होता हूँ तो मात्र एक सैनिक होता हूँ। यद्यपि दोनों एक ही उद्देश्य की पूर्ति करते हैं तथापि एक देशभक्त और एक सैनिक में वही अन्तर है जो सोना और पीतल तथा हीरा और कोयला में होता है। बाइबिल में इस सत्य का प्रमाण है कि ईसा ने स्वेच्छा से शूली पर चढ़ना स्वीकार नहीं किया था। वे शूली के त्रास से इतना काँप गये थे कि जमीन पर गिर पड़े और अपने पिता से इस पीड़ा से मुक्ति दिलाने की प्रार्थना करने लगे, यह जानते हुए भी कि यह पहले से ही होना तय है।

मेरा यह निश्चित मत है कि किसी काम की गुणवत्ता उसके कर्ता की नीयत से निर्धारित होती है। इस प्रसंग में यह और भी अर्थपूर्ण हो जाता है, क्योंकि बाइबिल की दृष्टि में इतिहास की प्रक्रिया पहले से ही निश्चित होती है।

पूर्व नियत (पहले से निश्चित किया हुआ)

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि ईसा को शूली पर चढ़ाना, गॉड द्वारा पहले से ही उनके भाग्य में लिख दिया गया था और इसलिए उनकी प्रार्थना इसे पलट न सकी। अब हम आगे के साक्ष्य पर एक दृष्टि डालें, जिसे इस विषय पर बाइबिल ने उपलब्ध कराया है —

१. गॉड प्रत्येक कण की गतिविधि को नियन्त्रित करने की सामर्थ्य रखता है और उसकी इच्छा के बिना एक पत्ता भी नहीं डोल सकता। (मैथ्यू ५:१८)

२. वह प्रत्येक चीज, जो ईसा के विषय में ओल्ड टेस्टामेन्ट में लिखा है, अवश्य पूरा होगा। (ल्युक २४:४४ और ल्युक १८:३१)

३. ईसा का जीवन तो पहले से ही निश्चित किया हुआ था लेकिन उन्होंने उसे शाप दिया जिसने गद्दारी की। (ल्युक २२:२२)

४. ईश्वरीय योजना का शूली अविभाज्य अंग था। (जॉन ४:३४)

५. दया और निन्दा गॉड की इच्छा पर निर्भर है (रोमन्स ९:१८)

६. किसी व्यक्ति के सिर के बालों की संख्या भी पहले से निश्चित होती है। (मैथ्यू १०:३०)

सबसे बढ़कर, ईसा को यह मालूम था कि उनके साथ विश्वासघात होगा, यह पूर्व लिखित है (मैथ्यू १७:२२—२३) और उस यहूदी को जानते थे जो विश्वासघात करने वाला था। (मैथ्यू २६:२१—२५) यहाँ तक कि उन्होंने पीटर को कहा कि किस प्रकार कौआ बोलने के पहले तीन बार तुम मुझे इनकार करोगे (जॉन १३—३८)

(सी) हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारी यह पृथ्वी जो ब्रह्माण्ड का एक भाग है, ख्याली पुलाव नहीं है। इसके सभी भौतिक नियम और हमारी व्यावहारिक जिन्दगी कारण से संचालित हैं; क्योंकि हम कल्पना को वास्तविकता जैसा नहीं मानते हैं। दुर्भाग्य से, फिर भी, हम मजहब के क्षेत्र में, अज्ञात के भय से सुरक्षा के रूप में, स्वंय को विश्वास की ढाल प्रदान करने के लिए, अतिशयोक्ति को संयत, अपवित्र को पवित्र और असम्भव को संभव जैसा स्वीकार कर लेते हैं। यह बनाया हुआ विश्वास होता है।

इतिहास की एक सामान्य घटना (ईसा को शूली) किसी विवेकशील व्यक्ति को संतुष्ट नहीं कर सकती कि यह आध्यात्मिक मुक्ति योजना की नींव

बन सकती है। पुन:, हमें स्मरण रखना चाहिए कि पूर्व निश्चित भाग्य, ईसाइयत का केन्द्रीय तत्व है। यदि हर चीज पूरी तरह पूर्व निर्धारित है तब कृपा और शूली की बात हास्यास्पद है। जो भी घटित होता है उसके लिए गॉड अकेले ही जिम्मेवार है, मनुष्य का इसमें कोई हाथ नहीं है। तब वह कृपा और पाप–मुक्ति के लिए क्यों नाक रगड़े!

दूसरी बात, वह गॉड जो प्रेम स्वरूप बताया जाता है, झूठा गॉड है यदि वह अपने ही निर्दोष पुत्र के प्रति इतना निर्दय है। यहाँ तक कि पिलेट एक निर्दोष व्यक्ति को शूली पर चढ़ाना नहीं चाहता था। यह दिखाता है कि पिलेट ईसाई गॉड की तुलना में कहीं अधिक न्यायी और दयालु था। पुन:, यदि गॉड अपने ही निर्दोष पुत्र के प्रति इतना निर्दय हो सकता है, तब वह मानव जाति से कैसा व्यवहार करेगा जिसका उससे रक्त संबंध नहीं है और फिर वह गलत करने वालों के साथ क्या करेगा ?

मध्य पूर्व के देशों में, ईसा के जन्म के पहले से ही पुनर्जीवन के अस्तित्व में होने की जानकारी थी, जैसा पीछे के एक अध्याय में कहा गया है। स्वयं को विश्वास द्वारा पुनर्जीवन का स्रोत घोषित करना कौशलपूर्ण षड्यन्त्र था, जिसे धर्मान्तरितों को जीतने के लिए तैयार किया गया था। मनुष्य को, सबसे बढ़कर मृत्यु का भय सताता है, ईसा में विश्वास के कारण शाश्वत जीवन की प्राप्ति सबसे बड़ा लाभदायक सौदा था, जिसकी मनुष्य कभी कल्पना कर सकता है। गॉड के लिए क्या यह ठीक था कि मानव जाति के लिए ईसा को दण्डित करे? ''ख'' की गलतियों के लिए ''क'' पर शंका करना गलत है। न्याय का यह तकाजा है कि प्रत्येक पुरुष या स्त्री को अपनी गलतियों के लिए स्वंय जिम्मेवार होना चाहिए।

पुनश्च, बदले के उद्देश्य से दण्डित करना एक प्रकार की बर्बरता की पहचान है। सुधारवादी दण्ड ही सभ्यता या देवत्व का भाग हो सकता है। ''ख'' के अपराध के लिए ''क'' को दण्डित करने से ''ख'' में सुधार की गुंजाइश नहीं हो सकती है, बल्कि उल्टे इससे उसमें अपराध करने की प्रवृत्ति को और प्रोत्साहन ही मिलेगा। इसलिए यह काम बर्बरता की श्रेणी में आयेगा। क्या गॉड बर्बर है।

पुनर्जीवन का असली अर्थ

यह विश्वास कि ईसा को शूली पर चढ़ाने के बाद वे पुन: जी उठे थे, स्पष्ट रूप से साबित करता है कि शब्द के वास्तविक अर्थ में उन्हें कभी शूली पर नहीं चढ़ाया गया। यदि उनकी मृत्यु का, पाप–मुक्ति से कोई भी संबंध होता, तो वे पुन: जी नहीं उठते; शूली अन्तिम रूप से उनके जीवन को समाप्त कर चुकी होती। पुनर्जीवन की गल्प–कथा साफ–साफ दिखाती है कि न तो गॉड दुनिया को इतना प्यार करता है कि वह इसकी रक्षा के लिए अपने एक मात्र पैदा हुए पुत्र की बलि दे और न ही इस प्रकार की बलि से पाप–मुक्ति का कोई संबंध ही है।

आध्यात्मिक व्यवसाय

इससे सुन्दर पौराणिक गल्प की कभी खोज नहीं हुई। यह आध्यात्मिक व्यवसाय के लिए अच्छा है, क्योंकि पाप–मुक्ति की आशा, विश्वासियों को पूजा की बेदी पर झुकने के लिए और अपनी गाढ़ी कमाई को गिरजाघर के पादरी के पैरों पर नैवेद्य के रूप में रखने के लिए प्रलोभित करती है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि ये पवित्र लोग गॉड को बिना कभी धन्यवाद दिये, ऐश्वर्ययुक्त महलों में विलासिता के साथ रहते हैं, जिसने अपनी निपुणता की शक्ति से इन्हें स्वाभाविक रूप से वह सबकुछ प्रदान कर दिया। इसके विपरीत विश्वासी, पुनर्जीवन के चमत्कार से अभिभूत इस जीवन में छल, कपट और दु:ख की बिना कभी कोई शिकायत किये, दूसरी दुनिया के मीठे सपने में खो जाते हैं।

क्या शूली और पाप–मुक्ति के बीच सचमुच कोई अनुरूपता है? यह मार्क के मृत शरीर को कैसे पूर्व स्थिति में ला सकता है यदि मैं अंथोनी की हत्या करता हूँ? यदि मैं, एक गैलन दूध पी जाऊँ तो यह प्यास से मरते हुए अर्थर को कैसे तृप्त करेगा? यदि मैं एक कोलोनी भर गरुड़ पालता हूँ तो इससे मुझे उड़ने की शक्ति कैसे प्राप्त हो जायेगी?

किसी कार्य को प्रभावी ढंग से सम्पन्न कराने के लिए निश्चय ही कार्य–कारण संबंध होना चाहिए; उदाहरण के लिए, मैं वायुयान का निर्माण कर उड़ सकता हूँ पर एक कोलोनी गरुड़ पाल कर नहीं।

यदि गॉड को पुत्र है तो उसका पिता, पर–पिता आदि भी होना चाहिए, ऐसा गॉड सर्वशक्तिमान और सृष्टिकर्ता नहीं हो सकता। ब्रह्माण्डीय क्रमबद्धता

की सम्पूर्ण उपेक्षा कर जो ईश्वरीय उद्देश्य की एक मात्र तालिका है सच्चा गॉड पाप–मुक्ति की योजना कैसे लागू कर सकता है।

आप उन्हें शूली पर नहीं चढ़ा सकते, जिन्हें आप बहुत प्यार करते हैं, विशेषकर तब जबकि वे बिल्कुल निर्दोष हों। सच्चा प्यार तो तब है जब कोई अपने प्रिय और सत्कर्मी पुत्र की रक्षा में अपनी जान दे दे। क्या गॉड को इस मार्ग को एकमात्र सच्चा मार्ग समझकर ग्रहण नहीं करना चाहिए था? क्या उसने अपने पुत्र को संसार की रचना के लिए, जो इतना दुष्टतापूर्ण, व्यर्थ और बदला लेने वाला है, बलि का बकरा नहीं बनाया? ऐसा गॉड विवेकपूर्ण, सम्मानीय और मुक्तिदाता नहीं हो सकता है।

विश्वास, कार्य का विकल्प नहीं हो सकता है। मैं विश्वास करता हूँ कि भोजन भूख को मिटाता है। क्या भोजन की तुष्टीकारक शक्ति में विश्वास, भूख के विनाशक प्रभाव से छुटकारा दिला सकता है? मुझे भोजन खरीदने के लिए पैसा कमाने हेतु कठिन परिश्रम करना पड़ेगा। सिर्फ इतना ही नहीं मुझे अपनी संरक्षा के लिए इसे पचाना भी होगा। विश्वास नहीं; बल्कि काम ही है जो आशा और नित्यता का आधार है।

ईसा की शूली को मुक्ति के एवज में कहना, एक कपट से भरा प्रश्न खड़ा करता है क्योंकि मुक्ति हेतु भुगतान सदा ब्लैकमेलर, अपहरणकर्ता, गुलाम–मालिक, चोर, कपटी और अत्याचारी को किया जाता है। क्या यह मुक्ति का धन गॉड को दिया गया? यह ईसा की पवित्रता को भी संकट में डालता है। मुक्ति–धन के रूप में अपनी जान दे कर उसने क्या पाया? और अन्त में, यदि मुक्ति–धन शैतान को दिया गया तब वह गॉड से ज्यादा शक्तिशाली है। तब गॉड दूसरे स्थान पर खिसक जाता है और इस प्रकार सृष्टिकर्ता, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ होने के योग्य ही नहीं रह जाता है।

यदि ईसा अनुग्रह है तब मध्यस्थता अप्रासंगिक हो जाता है; क्योंकि अनुग्रह, दया के लिए लागू होता है और मध्यस्थता न्याय के लिए।

चूकि गॉड संसार को इतना प्यार करता था कि संसार की रक्षा के लिए अपने पुत्र को शूली पर चढ़ा दिया, तब उसे संसार को ईसा के लिए बनाना ही नहीं चाहिए था। संसार का अस्तित्व निश्चय ही ईसा के पूर्व से है क्योंकि वही अनावश्यक था संसार नहीं। ईसा गॉड की प्रतिमूर्ति है और पूर्णत्व का

प्रतिनिधित्व करता है। क्या सचमुच ही वह वैसा है? सत्य यह है कि ईसा यदि कभी था तो मनुष्य था। यह कहना कि उसका पिता गॉड था या उसका कोई भौतिक पिता नहीं था, पूरी तरह प्राकृतिक विधान के प्रतिकूल है। आज तक कोई बिना पिता के पैदा नहीं हुआ, क्योंकि यह प्रकृति का नियम है। इसे ढँकने के लिए ईसाई दावा करते हैं कि ईसा मनुष्यरूप में स्वंय गॉड थे और संसार में बुराई को दूर करने हेतु अवतरित हुए थे। यह हिन्दू सिद्धान्त है जिसे अवतार कहते हैं और वैसे ही "ट्रिनिटी"; यह हिन्दू सिद्धांत त्रिमूर्ति का ही रूपान्तरण है, फिर भी ईसाइयों ने कभी भारत की कृतज्ञता नहीं स्वीकारी।

जब ईसाइयों को यह साबित करने के लिए कहा जाता है कि ईसा का भौतिक पिता नहीं था या वह गॉड का अवतार था, तो वे कहते हैं कि यह दार्शनिक सिद्धान्त नहीं विश्वास का विषय है। यह कहना पर्याप्त नहीं है क्योंकि हमारे सभी गम्भीर कारोबार, योजना और विवेचना, सदा कारण और साक्ष्य से निर्देशित होते हैं। इसे तो विश्वास के विषय में और भी वैसा होना चाहिए क्योंकि मृत्यु के बाद जीवन का सिद्धान्त, दूसरी किसी भी चीज से ज्यादा गम्भीर है। यह ठीक है कि कुछ चीजें पूरे निष्कर्ष के साथ सिद्ध या असिद्ध नहीं की जा सकती हैं, फिर भी वे विवेक सम्मत सूक्ष्म परीक्षण से नहीं बच सकती हैं। समस्या के बहुत छोटे भाग को ही विश्वास के आधार पर स्वीकार किया जा सकता है, जो सिर्फ वैसा भाग है, जो कारण द्वारा स्थापित नियमों के विरुद्ध न हो। इस प्रकार विश्वास, जब तक उसे बनाया हुआ विश्वास और विशुद्ध दिवा–स्वप्न न समझा जाय, बिना स्पष्ट कारण के विश्वास के योग्य नहीं रह जाता है।

दूसरी तरह से कहें तो विश्वास तथ्य के अधिक निकट और कल्पना से बहुत दूर की चीज है।

जब इस परीक्षण को लागू किया जाता है तब ईसा हर तरह से मनुष्य सिद्ध होते हैं। निश्चय ही हम ईसा के चमत्कारों में विश्वास को स्वीकार नहीं कर सकते हैं। यदि वे चमत्कार सत्य थे तब उनके प्रतिनिधि जैसे पोप, कार्डिनल्स, विशॉप्स आदि में भी उन्हें प्रदर्शित करने की सामर्थ्य होनी चाहिए थी। किन्तु यह बात नहीं है। इसलिए वे किसी गम्भीर वार्तालाप के भाग बनने योग्य नहीं है और तब मुझे पाठक का ध्यान कुछ तथ्यों की ओर आकर्षित करना पड़ेगा जो ईसा को मनुष्य सिद्ध करते हैं, गॉड नहीं। निम्नलिखित पर

विचार करें–

(ए) मनुष्य जैसा ही ईसा को मालूम था कि गलती करना मनुष्य का स्वभाव है। जब एक व्यभिचारिणी को पत्थर मार कर मौत की नींद सुलाया जाने वाला था, उन्होंने अपनी नाराजगी यह कहते हुए प्रकट की कि पहला पत्थर कोई पाप रहित व्यक्ति ही मारे। (जॉन ८:७)

(बी) अधिकांश मनुष्यों की तरह चापलूसी और प्रशंसा से ईसा को प्रेम था क्योंकि ''स्वामी'' कहलाना उन्हें प्रिय था। (जॉन १३:१३)

(सी) अन्य मनुष्यों से अधिक ईसा सम्मान चाहते थे और यहाँ तक कि गॉड से भी गौरवान्वित होने की आकांक्षा रखते थे। (जॉन १७:५)

(डी) ''मेरी'' अपने भाई लजारस की मृत्यु पर जब विलाप कर रही थी, ईसा भावातिरेक से स्वयं रो पड़े। (जॉन ११:३५)

(ई) ईसा ने यहूदियों के क्रोध को भड़का दिया। जब वे उसे पत्थर मारने चले, वह बच निकले। जब यहूदियों ने उन पर पत्थर मारने के लिए उठाया वह स्वंय छिप गये और मंदिर से बाहर चले गये।

ईसा.....(जॉन ७:१) यहूदी के रूप में नहीं चल सके क्योंकि यहूदियों ने उन्हें मार डालने के लिए ढूँढ़ा। वह प्रत्येक मनुष्य की तरह स्पष्ट ही दुःख और मृत्यु से भयभीत थे। गॉड ऐसी परिस्थितियों से निश्चय ही निःस्पृह है।

(एफ) जब वह भूखे थे और अंजीर के पेड़ पर कोई फल नहीं पाया तब क्रोध में उसे शाप दे दिया (मैथ्यू २१:१९) पेड़ों को शाप देना ईश्वरत्व का चिन्ह नहीं है, यह मनुष्य के स्वभाव को प्रकट करता है।

(जी) उसने डाँटा और शपथ खाई; पीटर को क्रोध से शैतान कहा (मैथ्यू १६:२३) और हेरोड को ''लोमड़ी'' कहा। शपथ खाना ईश्वरत्व का भाग नहीं बल्कि मनुष्य का स्वभाव है।

(एच) वह पक्षपाती स्वभाव के थे क्योंकि उन्होंने सिर्फ अपने अनुयायियों की भलाई के लिए प्रार्थना की। (जॉन १७:१९)

(१) जब पूछा गया कि क्या वह गॉड का पुत्र है तो उत्तर दिया यह वैसा है जैसा उनलोगों ने कहा। (ल्युक २२:७०)

(२) जब पिलेट (जॉन १८:३३) ने उससे पूछा कि क्या तुम यहूदियों का राजा हो तो उसने उत्तर दिया, ''तुमने वैसा कहा''। (ल्युक २३:३)

इतिहास ने इसे बिलकुल साफतौर पर अंकित किया है कि न तो यहूदियों ने उन्हें गॉड का पुत्र माना और न ही रोमन गवर्नर पिलेट ने उन्हें यहूदियों का राजा स्वीकार किया। शब्दों को, पूछने वाले के ही मुँह में रखकर, हर हाल में, सीधा उत्तर देने से इनकार किया। क्या सीधे प्रश्न से बचना और सुविधानुसार घुमावदार रास्ता अपनाना मानवीय स्वभाव नहीं है ? जब उनके शिष्यों की गंदगी की आदतों के विषय में पूछा गया (मॅथ्यू १६:२), ईसा ने जिस रूप में उनका बचाव किया वह अद्‌भुत था। स्वच्छता को ईवरत्व से जोड़ा गया है फिर भी ईसा, जो गॉड होने का दावा करता है, ने इस मान्यता को धारण नहीं किया। कोई भी आश्चर्य करेगा कि क्या वह पानी का प्रशंसक है।

(के) ईसा अपनी माँ के प्रति विनम्र नहीं थे। आश्चर्य है कि माँ के प्रति उनकी ऐसी धारणा क्यों बनी। वह व्यक्ति जो गॉड होने का दावा करे और मूसा के कानूनों में विश्वास करे, जो बच्चों को अपने माँ–बाप के प्रति आदर और सम्मान प्रदर्शन का आदेश देता है और फिर भी इन आदेशों की पूरी अवहेलना करे, तो आश्चर्य है। यद्यपि, हम उनके पिता के संबंध में सहमत होने में कठिनाई महसूस कर सकते हैं, पर ''मेरी'' निःसंदेह उनकी माँ थी। फिर भी उन्होंने ''औरत'' कह कर संबोधित किया, और दुत्कारा जैसे अपना मानने से इंकार किया। (जॉन १९:२६) यह आश्चर्यजनक है कि माँ स्वीकार करने के बाद भी आदर और विनम्रता का प्रदर्शन नहीं किया जैसे– ''माँ'' सम्बोधित कर।

(एल) लोगों को उन्होंने बार बार कहा कि मूसा के कानून उनके अनुयायियों के लिए बाध्यकारी है। इसलिए उनके लिए ईश्वरीय कानूनों का व्यावहारिक रूप से पालन कर उदाहरण प्रस्तुत करना आवश्यक था, लेकिन खुले रूप में उनका मजाक उड़ाया। ओल्ड टेस्टामेन्ट का उपदेश है कि यह्वे ही सिर्फ गॉड है और उसको कोई पुत्र नहीं है। यह धर्म–पुस्तकों की नींव है फिर भी उसने स्वयं को परिस्थिति

अनुसार गॉड या गॉड का पुत्र घोषित किया।

(एम) न्यू टेस्टामेन्ट में एक ऐसा कथा–प्रसंग है जिसे मैं व्यग्र करने वाला पाता हूँ; पर विश्वासियों के प्रति सम्मान–भावना के कारण मैं उसकी व्याख्या नहीं करूँगा। (जॉन १३:२१–२३) कहता है कि जब ईसा को शूली पर चढ़ाया जाने वाला था, वे मानसिक व्यग्रता के शिकार हो गये। उन्होंने अपने शिष्यों को कहा कि उनमें से एक उनके साथ विश्वासघात करेगा। जैसे ही इन शब्दों को कहा वह शिष्य, जिसे ईसा प्यार करते थे, ईसा के सीने पर अपना माथा रखकर पड़ गया।

उनके शिष्यों ने आश्चर्य किया कि वह कौन हो सकता है, लेकिन उनमें से किसी को भी होने वाले विश्वासघाती के विषय में, ईसा से पूछने का साहस नहीं हुआ। सीमोन पीटर ने, यह विचार करते हुए कि जो ईसा की छाती पर माथा रखकर सोया है, उसका ईसा से विशेष संबंध है, इस रहस्य को हल करने हेतु उसे इशारे से बुलाया। (जॉन १३:२४–२६)

उस व्यक्ति, जिसको बार–बार "शिष्य जिसे ईसा ने प्यार किया" कहा गया, को ही पूछने का साहस था, और उसने उत्तर भी दिया।

अध्याय २० में पुनः "शिष्य जिसे ईसा ने प्यार किया" का जिक्र है जब मेरी मैगडेलेन कब्र से पत्थर हटा हुआ पाती है। वह सीमोन पीटर से आगे दौड़कर सबसे पहले कब्र पर पहुँचता है, लेकिन, इसमें सबसे बाद में प्रवेश करता है। उसकी यह द्विविधा उसके डरपोक चरित्र को दर्शाती है।

जब ईसा पुनः जीवित हो चुके थे "वह शिष्य जिसे ईसा ने प्यार किया" स्वामी को देखने वाला पहला व्यक्ति था। आखिरी साक्षात्कार में पीटर ईसा से प्रिय शिष्य के बारे में पूछता है कि वह किस काम का था।

इस प्रसंग से प्रिय शिष्य की योग्यता साफ हो जाती है। ईसा ने इस शिष्य की ओर झुकते हुए ऐसा उच्चारण किया कि जॉन बार–बार उसे "शिष्य जिसे ईसा ने प्यार किया" कहता है।

ईसा अविवाहित थे और इस शिष्य को अपने सीने पर सोने दिया, जिसने ऐसे प्रश्न किये जिसे करने में दूसरे शिष्य भय खाते थे, आदि बातों पर विचार करने से एक मलिन आचरण की बू आती है। इस "प्रिय शिष्य" से ईसा का क्या संबंध था जैसा अन्य शिष्य कहा करते थे?

पाठक इसकी स्वयं व्याख्या करें मैं इस कथा–प्रसंग की व्याख्या करने का इच्छुक नहीं हूँ लेकिन इसे इस गम्भीर पुस्तक में नजरअंदाज करना भी गलत होगा।

गॉड का राज्य

गॉड के राज्य की अवधारणा को सम्भवतः पुनर्जीवन के सिद्धान्त का विस्तार कहना ज्यादा उपयुक्त होगा। मूल रूप से आरम्भिक ईसाइयत ने इसे यहूदी सिद्धान्त से लिया था और इसने दो संभावनाएँ व्यक्त की थीं। पहली, डेविड के घर से एक सांसारिक मसीहा पृथ्वी पर राज्य स्थापित करेगा जिसकी राजधानी जेरूसलम होगी। दूसरी संभावना स्वर्गिक मसीहा की थी जिसके अनुसार आदमी का पुत्र, स्वर्ग के राज्य का उद्घाटन करेगा, जिसमें पुनर्जीवन के बाद सदा के लिए चुने हुए साथियों को हिस्सा मिलेगा।

जैसे–जैसे समय बीतता गया दोनों संभावनाएँ एक दूसरे में मिल कर १००० वर्ष या मिलेनियम किंगडम की अवधारणा में बदल गई, जो इस नींव पर टिकी है कि यह राज्य विशेष अधिकार प्राप्त चुने हुए लोगों का होगा, विशेष रूप से बलिदानियों और उन सभी लोगों, जिन्होंने ईसाइयत की रक्षा के लिए अपना खून बहाया। वही लोग प्रशासनिक एवं न्यायिक पदों के अधिकारी होंगे और इस प्रकार राज्याधिकारी बनेंगे। सदियों से यही प्रलोभन ईसाइयों को प्रलोभित करता रहा है।

गॉड के राज्य की अवधारणा, स्वर्ग और नर्क के अति प्राचीन सिद्धान्त से प्रेरणा ग्रहण करता है। देवों और गुरुओं द्वारा मनुष्य की भय और कृपा की अन्तर्प्रवृति को उकसाकर अंधभक्ति के लिए तैयार करने हेतु उनका शोषण किया गया है।

ईसाई स्वर्ग क्या है?

स्वर्ग आनन्द और अति सुख का स्थान है, जो विश्वासियों को पुरस्कार स्वरूप प्राप्त होता है। यह वह स्थान है, जहाँ गॉड रहता है। (मैथ्यू ५:१२ और १६) यह नींव से लेकर ऊपर तक सोना और अन्य कीमती पत्थरों से बना है; जैसे, सूर्यकान्त मणि, नीलमणि, सिक्थस्फटिक, मरकत मणि, गोमेदक, लहसुनिया, हरितमणि, पुखराज एवं अन्य। न्यू टेस्टामेन्ट में स्वर्ग का आनन्द, नर्क की पीड़ा से एक समान संतुलित किया गया है। सब कुछ के बावजूद

लोगों को भय और कृपा दोनों से प्रभावित किया जाता है। ईसाई नर्क क्या है? यह आग और गंधक की झील है, जहाँ शैतान, उसके फिरिश्ते, झूठे पैगम्बर और गैर ईसाई दिन और रात उत्पीड़ित किये जायेंगे। (मैथ्यू ५:२२)

अन्तिम न्याय के बाद सभी गैर ईसाई नर्क में डाल दिये जायेंगे। स्वर्ग और नर्क की अवधारणा द्वारा, किस प्रकार ईसा अपने को गॉड बनाने के लिए मनुष्य की भय और कृपा की आन्तरिक प्रवृत्ति का शोषण करते हैं।

ईसाई

मैं ईसाइयत पर वार्तालाप में कहीं अधिक शामिल हो सकता हूँ, लेकिन समझता हूँ कि इसके मौलिक सिद्धान्तों को उजागर करने भर मैंने पर्याप्त कह दिया है। इस बहस को और आगे नहीं बढ़ाने का उससे भी महत्वपूर्ण कारण यह है कि दुनिया भर में ईसाई अत्यधिक सभ्य हो चुके हैं और ईसाइयत की बराबरी मनुष्यता से करने लगे हैं। वे सभी धार्मिक विषयों पर धैर्य एवं सहनशीलता के साथ तर्क–वितर्क के लिए तैयार रहते हैं और धर्म को व्यक्तिगत विषय समझते हैं। न तो वे अन्य लोगों के अधिकारों का अपहरण करने के लिए इसका उपयोग करते हैं और न ही दूसरों के उत्पीड़न और हत्या के लिए। यह एक उपलब्धि है और इसके लिए मैं खुले रूप से उनका स्वागत करता हूँ।

भला बनने का अधिकार

मैं जैसा विश्वास करता हूँ वह ठीक–ठीक यह है कि मजहब एक व्यक्तिगत विषय है और अन्य लोगों के जीवन में इसके कारण किसी प्रकार की भी छेड़छाड़ नहीं होनी चाहिए। इसें सहिष्णुता और पारस्परिक सम्मान का स्रोत होना चाहिए। इन परिस्थितियों में कोई व्यक्ति किसी भी मजहब को जिसे वह पसंद करे, चुनने का अधिकारी है।

●

6.

इस्लाम

मनुष्य की भय और कृपाकांक्षा की प्रवृत्ति का पैगम्बर मुहम्मद ने जिस सफलता से शोषण किया, वैसा कभी किसी ने नहीं किया। उन्हें पता था कि मृत्यु मनुष्य का सबसे बड़ा भय और अमरत्व सबसे बड़ी आकांक्षा होती है। उसने इन दो परस्पर विरोधी धारणाओं को जिस कौशल से प्रस्तुत किया, आज तक उसे किसी द्वारा पार नहीं किया जा सका। जिस प्रकार एक मरीज डाक्टर को देखकर चाहे वह रोग ठीक कर सके या नहीं, अपनी तकलीफ में राहत महसूस करता है; उसी प्रकार मनुष्य उस व्यक्ति द्वारा सम्मोहित हो जाता है, जो सभी मानवीय समस्याओं के अलौकिक समाधान का अधिकारी होने का दावा करता है। बचाव के उसके आश्वासन, आशा का संचार कर देते हैं। पैगम्बर ने स्वयं को ईश्वरीय दूत के रूप में प्रस्तुत कर लोगों की आशा को जगाया।

कभी समाप्त नहीं होने वाले जीवन की आशा में मनुष्य स्वयं को डूबने से बचाने के लिए विक्षिप्तता में कोई भी तृण पकड़ लेगा। लेकिन, जब तृण को शाश्वतता की पतवार के रूप में ईश–संदेश की चमकदार कोलाहल के मध्य प्रस्तुत किया जाता है, तब वह इसे ईमान (विश्वास) के लगाव के साथ पकड़ता है, जो 'कारण' और सामान्य क्रिया–कलाप के नियमों को चुनौती देता है। उसका विश्वास जितना ही मजबूत होगा, क्रान्तिदूत के प्रति उसकी अनन्य भक्ति उतनी ही अधिक होगी, पर मनुष्यता की कीमत पर। अनुयायियों की भावना के सम्बल से क्रान्तिदूत, आत्म गौरव की खोज में स्वयं को पैगम्बर या ईश्वर के अवतार के रूप में प्रस्तुत करता है।

राजप्रतिनिधित्व का महत्व

प्रत्येक पैगम्बर को लोगों के पर्याप्त विरोध का सामना करना पड़ता है, जिनकी स्वतंत्रता को नये आचार के नियमों को थोप कर, वह कुचलने का प्रयास करता है। वह स्वयं को ईश्वर का प्रतिनिधि घोषित कर अपनी

निर्दोषिता दिखाता है। वह दावा करता है कि उसके द्वारा जो भी संदेश सुनाया जाता है वह ईश्वर का है, उसका अपना नहीं। इसलिए उसमें किसी प्रकार की छेड़—छाड़ वह नहीं कर सकता है। लोगों द्वारा विवेक से इसमें विश्वास कर लेना कठिन होता है, क्योंकि वे जानते हैं कि प्रतिनिधि या पैगम्बर उनको सिर्फ अल्लाह में मात्र विश्वास के लिए ही नहीं कहता है, बल्कि बहुत जोर के साथ दबाव बनाता है कि जबतक वे लोग उसमें भी वैसा ही विश्वास नहीं करने लगते हैं, तब तक अल्लाह में उनके विश्वास का कोई अर्थ नहीं रह जाता है, क्योंकि मात्र अल्लाह में विश्वास से ही दोजख की आग से उनकी रक्षा नहीं होगी।

ईश्वरत्व का तरीका

प्रत्येक समुदाय में कुछ ऐसे लोग होते हैं, जिनमें उच्च नैतिकता, बौद्धिक और प्रबंधकीय योग्यताएँ होती हैं। पर वे सहज ही किसी चीज में विश्वास कर लेने वाले स्वभाव के होते हैं। उनकी यह विश्वासशीलता चहुँमुखी नहीं होती है। यह किसी विशेष प्रवृत्ति और ग्रहणशीलता की ओर झुकी होती है, जो उसके व्यक्तित्व को निर्धारित करती है। इस प्रवृत्ति या ग्रहणशीलता की ओर झुकाव किसी विशेष मत या इसके प्रस्तुतकर्ता की ओर किसी खास आकर्षण के भ्रम के चलते भी होता है। जब ऐसे लोग किसी नये मत को स्वीकार करते हैं तो देवदूत या क्रान्तिदूत के साथी की पदवी प्राप्त करते हैं और अपनी बौद्धिक, राजनीतिक और प्रबंधकीय क्षमता का उपयोग, अपने नेता में ईश्वरत्व का प्रचार करने के लिए करते हैं। ये भावनात्मक आग्रह में वृद्धि के लिए अलौकिक घटनाओं वाली कहानियों और चकित करने वाले चमत्कारों के साथ दैवी पुराणों की रचना करते हैं, जो सभी मजहबों की पहेली होती है। जैसे—जैसे समय बीतता है, नये शिष्यों का उदय होता है, जो अपने पर ईश्वरत्व का आरोपण चाहते हैं। उनमें अपने संस्थापक के समान नये मत को स्थापित करने का साहस और आन्तरिक कौशल का अभाव होता है। फिर भी वे उसी मार्ग का अनुसरण करते हैं जिसका उनके संस्थापक ने स्वंय को अल्लाह का प्रतिनिधि घोषित कर किया था। वे अपने को उसका लेफ्टिनेन्ट घोषित करते हैं। इनके उपदेशों में पहले से ही विश्वास करने वाले लोग इन्हें

सरलता से स्वीकार कर लेते हैं, बल्कि तीव्रतर उत्साह के साथ। इस प्रकार के नये गुरू अपने संस्थापकों की अद्‌भुत चमत्कारी शक्ति और कार्यों से भरी हुई और भी अलौकिक कहानियों का आविष्कार कर उनकी रचना करते हैं, ताकि लोगों के लिए वर्तमान भावनात्मक आग्रह को और भी बढ़ा सकें जो अपने मत के शतरंज के खेल में 'प्यादा' बने होते हैं।

मुहम्मद — मुक्ति का आधार स्तम्भ

अरब के पैगम्बर मुहम्मद ने चालीस वर्ष की अवस्था में स्वयं को अल्लाह का रसूल घोषित किया। सर्वशक्तिमान ने उन्हें लोगों को डराने के लिए चेतावनी देने वाला बना कर भेजा, ताकि वे उनमें विश्वास के साथ अच्छे काम भी कर सकें। सिर्फ अल्लाह में ईमान (विश्वास) और सही काम, उनको दोजख से बचाने में सक्षम नहीं थे; क्योंकि ईमान (विश्वास) को प्रभावी होने के लिए मुहम्मद में भी ईमान लाना आवश्यक था, जिसे अल्लाह ने, मार्गदर्शन के एकमात्र स्रोत के रूप में नियुक्त किया था। इसे ईश—संदेश (वह्य) द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता था, इसमें मनुष्य के बौद्धिक विवेचन और प्रयत्न की कोई सहभागिता नहीं थी।

''कह दो कि अगर सच्चे हो, तो तुम खुदा के पास से कोई और किताब ले आओ, जो इन दोनों (किताबों) से बढ़ कर हिदायत करने वाली हो, ताकि मैं भी उसी की पैरवी करूँ।..... बेशक अल्लाह बुरे लोगों को मार्ग नहीं दिखाता।'' (सूर:कससि २८:४९,५०)

यहाँ मुहम्मद में ईमान, अल्लाह से पहले होता है क्योंकि जो मुहम्मद में ईमान नहीं लाते वे बुरे लोग हैं, और अल्लाह वैसे लोगों का मार्गदर्शन नहीं करता; इस तथ्य के बावजूद कि बुरे लोगों को ही मार्ग दर्शन की आवश्यकता होती है।

दोजख और जन्नत की सच्चाई

मुस्लिम मत में अपनी सर्वोच्चता स्थापित करने के बाद, मुहम्मद के लिए दोजख की विश्वसनीयता स्थापित करना आसान हो गया। इसे स्पष्टता से स्मरण कर लेना चाहिए कि दोजख और वहिश्त (जन्नत) इस्लाम की वास्तविकताएँ है, लाक्षणिक वर्णन नहीं; क्योंकि उनका वर्णन भली—भाँति

दर्शाया हुआ है। इन स्थानों में पुरस्कार या दण्ड के रूप में प्रवेश अल्लाह की निर्दिष्ट प्रतिज्ञा है। मुहम्मद ने मनुष्य के भय एवं कृपाकांक्षा की स्वाभाविक प्रवृत्ति का अत्यन्त निपुणता के साथ कुरान में वर्णन किया है

''.....उसमें वे हमेशा रहेंगे और सबकुछ पायेंगे जिसकी वे चाहना करेंगे, यह अल्लाह का वादा है और (यह वादा) माँगने के लायक है।'' (सूर : अल फुर्कान २५ : १६)

दोजख का वर्णन

दोजख क्या है?

(ए) (वह) अल्लाह की भड़काई हुई आग है, (जो) दिलों तक की खबर लेगी। वे उसमें मुँदे (घिरे) होंगे, (आग के) लम्बे–लम्बे खम्भों में। (सूरतुल–हुमजति १०४:६–९)

(बी) ''यकीनन जिन लोगों ने हमारी आयतों से इनकार किया हम उनको जल्दी ही दोजख की आग में झोकेंगे। जब उनकी खालें जल (कर पक) जावेंगी, हम उनको दूसरी खाल से बदल देंगे ताकि (वह बराबर) अजाब का मजा चखते रहें। बेशक अल्लाह बड़ा जबरदस्त बड़ा हिकमत वाला है।'' (सूरतुन्निसाअि४:५६)

(सी) ''इसके बाद उसके लिए दोजख है और उसको पीप का पानी पिलाया जायेगा। वह उसको घूँट–घूँट पियेगा और उसको गले से उतारना कठिन होगा और मौत उसको हर तरफ से आती हुई दिखाई देगी और वह मरेगा नहीं (कि चैन पा जाय) और उसके पीछे दुखदाई सजा होगी।'' (सूरतुइब्राहीम १४:१६–१७)

(डी) ''.....तो जो लोग नहीं मानते (और मुन्किर हैं) उनके लिए आग के कपड़े ब्योंते गये हैं (यानी आग उनके बदन से ऐसा लिपटेगी जैसे कपड़ा) उनके सिरों पर खौलता पानी डाला जायेगा। जिससे जो कुछ उनके पेट में है और (उनकी) खालें गल जायेंगी। और उनके (मारने के) लिए लोहे के गुर्ज होंगे। (इस दोजख के दु:ख और) घुटन से जब निकलना चाहेंगे तो उसी में फिर ढकेल दिये जावेंगे। और (कहा जायेगा कि बस हमेशा) जलने की सजा का अजाब चखते रहो।'' (सूरतुल्हज्जि २२ : १९–२२)

(ई) दोजख में रहने वाले सेहुँड का पेड़ खायेंगे। सेहुँड़ का पेड़ क्या होता है? ''यह एक दरख्त है जो दोजख की जड़ में (से) उगता है। उसके गाभे जैसे शैतानों के सिर। सो यह (दोजखी) उसी में खायेंगे और उसी से पेट भरेंगे। फिर उस पर उनको खौलता हुआ पानी दिया जायेगा फिर इनको (दोजख की) ओर लौटना होगा।'' (सुरतुस्साफ्फाति ३७ : ६४–६८)

सेहुँड़ (थूहड़) का प्रकरण आगे ''सूरतुद्दुखानि'' में आगे पुन: चलता है (४४ : ४३–४८) : –

''बेशक सेहुँड़ का पेड़। (यह) पापी का खाना होगा, जैसे पिघला ताँबा (खौलता है उसी तरह) पेटों में खौलेगा; जैसे खौलता पानी ! (हम फिरिश्तों को आज्ञा देंगे कि) इसको पकड़ो और घसीटते हुए दोजख के बीचो बीच ले जाओ। फिर इसके सिर पर खौलता पानी का अजाब डालो।''

(एफ) कितने मुँह उस रोज उतरे होंगे, मेहनत उठाने वाले और थके–थके! दहकती हुई आग में दाखिल होंगे। उनको एक खौलते हुए चश्में का पानी पिलाया जायेगा। काँटों के झाड़ के सिवाय और कोई खाना इनको (मयस्सर) नहीं, जिससे न तो (जिस्म ही) मोटा हो और न भूख ही जाय। (सूरतुल्–गाशियति ८८:२ –७)

बदला के लिए दण्ड

सभ्य आदमी इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि दण्ड बदले के लिए नहीं बल्कि सुधार के लिए दिया जाना चाहिए; इस टिप्पणी को छोड़कर दोजख के वर्णन के विषय में किसी अन्य टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है। काफिरों के सुधार में अल्लाह की नहीं के बराबर रुचि है। वह बदले के लिए उत्पीड़ित करता है। फिर भी वह स्वयं को सबसे बड़ा दयालु, कृपा करने वाला, क्षमाकर्ता, भूलने वाला, भद्र और मृदुल आदि स्वभाव का बतलाता है। ये सब उसके बार–बार दुहराये जाने वाले गुण हैं, यद्यपि वह स्वयं को सर्वाधिक भयंकर भी बतलाता है। आप उस व्यक्ति को क्या कहेंगे जिसकी बदले की इच्छा बर्बरता की काल्पनिक उड़ान की सीमा को भी पार कर जाय। आप उस व्यक्ति को क्या कहेंगे जो उत्पीड़न से आनन्दित होता है और अति कठोरता से

हर्षोन्मत्त होता है? आप उस व्यक्ति को क्या कहेंगे जो दूसरों के दु:ख को देखकर हर्षित होता है?

अल्लाह की अस्थिरता

एक बात नि:संदेह सिद्ध होता है कि अल्लाह खुशी और नाखुशी से प्रभावित होता है। उस पर जब ईमान लाया जाता है तब खुश होता है और जब उस पर ईमान नहीं लाया जाता, अत्यन्त नाराज होता है। स्पष्ट ही, वह बहुत अस्थिर व्यक्तित्व वाला है, इसलिए पूजा और भक्ति के योग्य नहीं है।

ईस्लाम क्या है ?

इस्लाम का अर्थ है ''समर्पण'', अर्थात अल्लाह हर हालत में चाहता है कि मनुष्य उसके सामने झुके। मनुष्य की सम्पूर्ण आज्ञाकारिता के लिए, जब हिन्सा की धमकी से काम नहीं चलता है, तब अल्लाह रिश्वत देने के लिए तैयार होता है। यही कारण है कि वह मनुष्य को दोजख और जन्नत के चुनाव का विकल्प प्रस्तुत करता है। दोजख के वर्णन का अध्ययन करने के बाद अब हम जन्नत के वर्णन पर एक दृष्टि डालें।

जन्नत का वर्णन

(ए) ''सम्पूर्ण समर्पण'' के बदले में एक मुसलमान को जन्नत की पेशकश की जाती है :—

''बेशक अल्लाह ने ईमानवालों से उनकी जानें और उनके माल खरीद लिए हैं कि उनके बदले उनके लिए जन्नत है कि वे अल्लाह की राह में लड़ते हैं, मारते हैं और मारे जाते हैं.....'' (सूर:अत तौबा ९:१११)

(बी) जन्नत में जीवन उतना ही भौतिक होगा जितना यह पृथ्वी पर है। सूरज की तपती धूप और वृक्ष विहीन वातावरण में रहने वाले अरबों के लिए यह विशेष रूप में मोहित करने वाली स्थिति थी।

''जन्नत वाले अलबत्ता उस दिन मजे से दिल बहला रहे होंगे। वह और उनकी बीवियाँ साये में तकिया लगाये तख्तों पर बैठी होंगी। वहाँ उनके लिए मेवे होंगे और जो कुछ वे माँगें (वही मयस्सर होगा) (कुरान, या—सीन ३६:५५,५६,५७)

(सी) जन्नत में ईमान वालों (मुसलमानों) को क्या मिलेगा?

''.....उनकी रोजी मुकर्रर है। (यानी) मेवे; और इनकी इज्जत होगी, निअ़मत के बागों में, तख्तों पर आमने—सामने होंगे। इनमें स्वच्छ शराब का प्याला घुमाया जा रहा होगा। (और) सफेद रंग (वाली वह शराब) पीने वालों को मजा देगी। न उससे सिर घूमते हैं और न उससे मदहोश होकर बहकते हैं और उनके पास नीची निगाह रखने वाली बड़ी (बड़ी) आँखों वाली औरतें होंगी। गोया (आँखों के पर्दों से ढँके वह अण्डे हैं। (कुरान सूर: अस—साफ्फात ३७:४१—४९)

चौड़ी आँखों वाली सुन्दर औरतें

यह सुन्दर औरत का श्रृंगारिक कवित्वमय वर्णन है जिसका स्वाभाविक आकर्षण, उसकी शारीरिक मृदुता और हाव—भाव द्वारा बहलाने और ललचाने की विशेषता को और भी बढ़ा देता है। सचमुच में, चौड़े नयनों और मोती के समान नयनों से तीर चलाने वाली नव—यौवनाएँ (जन्नत की हूरें) मोहक दृश्य प्रस्तुत करती हैं, जिसका सपना तो बहुत देखा जाता है पर जो पृथ्वी पर शायद ही उपलब्ध होती हैं।

उन्नत उरोजों वाली कुमारियाँ

जन्नत की मोहकता ईमान वालों को आश्वासन के साथ ही और भी बढ़ाई जाती है।

''अलबत्ता परहेजगारों के लिए कामयाबी है। (यानी रहने को) बाग और (खाने को) अंगूर, और उठे सीने वाली कुँआरियाँ...'' (सूर : अननबा ७८ : ३१,३२)

जन्नत का एक दृश्य

(सूरतुर्रहमानि ५५:४६—७६) में, चौड़ी आँखों और कसे उरोजों वाली हुरों का और भी अधिक मोहक वर्णन किया गया है। संक्षेपण और अधिक स्पष्टता के लिए मैं इसके विषय—वस्तु की स्वतंत्र व्याख्या प्रस्तुत करता हूँ जन्नत अल्लाह की कृपा की पहचान है। यह वृक्षों, छायां, झरनों आदि से भरा हुआ आनन्द देने वाला बाग है जहाँ अल्लाह की मर्जी से जड़ाऊ तख्तों पर आराम किया जाता है और जहाँ तोड़ने के लिए बाग के फल पास ही लगे होते हैं।

अच्छी और सुन्दर हुर्रे जो लाल मणि और मूँगे के समान आकर्षक और सुन्दर होती हैं, कुँआरी भी होती हैं, उनको कोई आदमी या जिन्न पहले छुआ तक नहीं होता है। वे जन्नत के विश्रामगृहों में आकर्षक कालीनों और हरे गद्दों पर आराम फर्माती रहती हैं और उनके विश्राम स्थल हरे–भरे मैदानों के मध्य में होते हैं जहाँ फलों से वृक्ष लदे होते हैं जिसमें खजूर और अनार के पेड़ बहुतायत में रहते हैं।

जन्नत की गरिमा और भी चकाचौंध करने वाली होती है जब जन्नत के जीवन में शराब का उन्मादक भाग जुड़ जाता है।

''बेशक नेकनार (जन्नत में) आराम में होंगे। तख्तों पर बैठे देख रहे होंगे। तुम उनके चेहरे पर निअमतों की ताजगी देखोगे। उनको खालिस शराब मुहर की हुई पिलाई जायेगी। जिस (बोतल) की मुहर कस्तूरी की होगी; और इच्छा करने वालों को चाहिए कि उसी की इच्छा करें और उस शराब में तसनीम (के पानी) की मिलावट होगी। (तसनीम जन्नत का) एक चश्मा है जिसमें से (अल्लाह के) नजदीकी (बन्दे) पियेंगे।'' (सुरतुलमुतफ्फिफीन ८३:२२–२८)

चाँदी के प्याले और सुन्दर असंसारिक लड़के

जन्नत का आकर्षण, ईमानवालों को अद्‌भुत पुरस्कार का आश्वासन देने के लिए बढ़ता जाता है, जिसकी उन्हें प्रतीक्षा रहती है –

''तो अल्लाह .....उनको ताजगी और खुशहाली पहुँचायेगा। और जैसा उन्होंने सब्र किया उसके बदले में जन्नत और रेशमी कपड़े उन्हें दिये। वहाँ तख्तों पर तकिये लगाये बैठे होंगे। न वहाँ (तपन की) धूप ही देखेंगे, न कड़ाके की ठण्ड। और उन पर वहाँ (के वृक्षों की) छाया होगी और उनपर मेवों के गुच्छे भी नजदीक झुके होंगे। और उनके पास चाँदी के बरतनों और गिलासों का दौर चलता होगा, बिलकुल शीशे की तरह। शीशे भी (साफ चमकते) चाँदी के जो (एक अन्दाज की) नाप पर बने होंगे। और वहाँ उनको प्याले पिलाये जायेंगे जिसमें सोंठ मिली होगी। यह वहाँ एक चश्मा होगा जिसका नाम सलसबील होगा और उनके सामने हमेशा नौजवान रहने वाले लड़के फिरते होंगे कि जब तू उनको देखे तो समझे कि बिखरे मोती हैं। और जब तू देखे तो तुझे दिखाई दें निअमतें और महान राज्य (के सुख) उनके तन पर

बारीक हरे रेशम और गाढ़े रेशम के कपड़े हैं; और चाँदी के कंगन पहिने हैं, और उनका परवरदिगार उन्हें पाक शराब (दिव्य मदिरा) पिलावेगा यह तुम्हारा बदला है और तुम्हारी (दुनिया की) कमाई नेग लगी (यानी आज फूली फली)। (सूरतुद्‌–दहरि ७६:११–२२)

किशोरों की उपयोगिता

अमर्त्य किशोरों की उपस्थिति, जो समय की कडुआहट से मुक्त हैं, जानबूझ कर उनकी सुन्दरता का जिक्र करना, जिनकी तुलना छितराये हुए चमकीले मोतियों से की गई है और यह तथ्य कि वे दुल्हनों की तरह सजे हैं, उनकी वास्तविक उपयोगिता पर संदेह पैदा करते हैं। किशोरों की पुन: सूरतुत्वुरि ५२ में जिक्र आया है।

''वह आपस में वहाँ (शराब के) प्यालों की छीनाझपटी करेंगे, उस (के पीने) से न बकवाद लगेगी और न कोई गुनाह होगा और लड़के उनके पास आयें–जायेंगे गोया (यत्न से रखे) संजोये हुए मोती हैं।''

(सूर:अत–तूर ५२:२३–२४)

हुर्रों और लड़कों की बहुतायत

मुसलमान विश्वास करते हैं कि उनमें से प्रत्येक को बहत्तर हुर्रें दी जायेंगी। यहाँ शब्द ''उनका अपना'' यह दिखाते हैं कि सदा युवती रहने वाली कुँआरियों के साथ ही हर ईमान वालों को उनके लिए खास लड़के होंगे। यह भी ध्यान देना चाहिए कि ''पाप का कोई कारण'' नहीं होगा। क्या यह कथन शब्द के सामान्य अर्थ में है या इसका यह अर्थ है कि जन्नत में कुछ भी करने पर पाप नहीं लगेगा? यह व्याकुल करने वाला विषय है और तब यह और अधिक व्यग्र करता है जब बार–बार किशोरों की शारीरिक सुन्दरता को उछाला जाता है। जो भी हो, अच्छा यह होगा कि इसकी व्याख्या, ईमानवालों पर ही छोड़ दी जाय।

चूकि कुरान सिर्फ अरब वालों और मुसलमानों को ही सम्बोधित नहीं है वरन् यह पूरी मानव जाति को संबोधित है इसलिए कोई भी जन्नत या दोजख के संबंध में कुछ ऐसे प्रश्न उठा सकता है।

१ अल्लाह व्यग्रता के साथ चाहता है कि आदमी उस पर ईमान (विश्वास)

लावें और उसकी पूजा करें। ऐसा नहीं होने पर वह दोजख या जन्नत का विकल्प उन्हें प्रस्तुत नहीं करेगा। पहला भयादोहन (ब्लैकमेल) के लिए है जब कि बाद वाला रिश्वत के लिए, जो अपने आप में एक पाप है। निराश अल्लाह स्थिर स्वभाव का नहीं है और इसलिए सज्दा के योग्य नहीं है।

२. जन्नत एक प्रकार का प्रलोभन है जो यौन आमंत्रण पर आधारित है। इसकी घोर पातकता, इस तथ्य के कारण और भी बढ़ जाती है कि ईमान वालों को कोई कर्त्तव्य निर्धारित नहीं है, बल्कि हर समय वे मौज मस्ती में ही बिताते हैं। क्या अस्तित्व का लक्ष्य केवल यौन संतुष्टि है?

३. दोजख का वर्णन, दयालु और कृपालु होने के अल्लाह के दावे के विपरीत है।

दोजख और जन्नत की व्याख्या

पढ़े–लिखे मुसलमान यह कहते हुए इस विषय से बचते हैं कि दोजख और जन्नत का वर्णन प्रतीकात्मक है और इन्हें मनोवैज्ञानिक अनुभवों से संबंधित बताते हैं। यह सही नहीं हो सकता है क्योंकि मुसलमान विश्वास करते हैं कि कुरान का प्रत्येक शब्द अक्षरशः सत्य है। दूसरी बात कि कयामत के दिन वे हर किसी के शारीरिक रूप से जी उठने में विश्वास करते हैं। स्पष्टतः जिस प्रकार हम इस जीवन में भोजन और सेक्स की आवश्यकता का अनुभव करते हैं उसी प्रकार की आवश्यकता पुनर्जीवित शरीरों की भी होती है जिसकी पूर्ति जन्नत में की जाती है। यदि यह सत्य नहीं होता तो जन्नत की कोई आवश्यकता ही नहीं होती।

पुनः, उपमाओं, जैसे कोयला जैसा काला, दूध जैसा उजला आदि के साथ ही कुरान का वर्णन विस्तार में चित्रित किया गया है।

जन्नत की व्यवस्था अल्लाह का वादा है, इसलिए इसे वास्तविक होना ही पड़ेगा, लाक्षणिक होने से काम नहीं चलेगा। अन्यथा, वह ईमानवालों को मूर्ख बना रहा होगा।

सबसे बढ़कर बात यह है कि मुसलमान जन्नत के भौतिक अस्तित्व में विश्वास करते हैं और कुरान में उनके विश्वास का यही मुख्य कारण है। हुरों और लड़कों की प्रत्याशा के बिना मुसलमानों की संख्या नाटकीय ढंग से कम हो जाती।

मृत्यु के बाद के पुनर्जीवन में लोग दोजख या जन्नत के लायक क्यों होंगे? मुसलमान विद्वान तर्क देते हैं कि मनुष्य को विचार की स्वतंत्रता दी गई है ताकि वह अच्छा या बुरा का चुनाव कर सके इसलिए वह दण्ड या पुरस्कार का अधिकारी बन जाता है। यह सिद्ध करने के लिए कि इस्लाम ''कारण'' पर आधारित है वे पुनः तर्क देते हैं कि कोई व्यक्ति कयामत के दिन बिना निष्पक्ष न्याय के दोजख या जन्नत में नहीं जायेगा।

यद्यपि यह कथन कागज पर विवेक सम्मत दिखाई देता है, पर जब तार्किक आधार पर इसे जाँचा जाता है तब यह 'कारण' आधारित चमक खो देता है और साथ ही कुरान के अल्लाह की किताब के दावे को भी अविश्सनीय बना देता है। ''भला यह लोग कुर्आन पर गौर क्यों नहीं करते, कि अगर अल्लाह के सिवाय किसी और के पास से (वह आया) होता तो जरूर उसमें बहुत से भेद–विभेद पाते।'' (सूरतुनिसा ४:८२)

(मुताजिली और असारी)

और आगे बढ़ने से पहले विषय के बेहतर समझ के लिए बतला दूँ कि मुस्लिम विद्वानों ने ७५७ ई० के बाद से ही दार्शनिक व्याख्या की शुरुआत की। यह तर्क–वितर्क प्रचलन में आया कि कुरान शाश्वत है या रचित। मुताजिली (अलग होने वाला) वैचारिक शाखा ने कुरान की शाश्वतता से इनकार किया क्योंकि यह पूरी तरह भाग्य के पूर्व निर्धारण के सिद्धान्त पर आधारित था। खलीफा अल–मैमुन इस व्याख्या के प्रमुख सिद्धान्तकार थे। पर अबुल–हसन–अल–अशारी (८७३–९३५) ने बतलाया कि अल्लाह ही सर्वोच्च अधिकारी है और वह वही करता है, जो चाहता है। उसने सभी कार्यों और घटनाओं को पूर्व निर्धारित कर दिया है और जो कुछ भी अस्तित्व में है या भविष्य में होने वाला है, सबका कर्ता वही है।

कुरान की असंगतता

मुताजिली और अशारी दोनों परस्पर विरोधी ध्रुवों पर केन्द्रित थे। यदि कुरान को तर्क–वितर्क का आधार बनाया जाय तब अशारी सही हैं, लेकिन उनकी शुद्धता असंगतता पैदा करती है। निम्न प्रकरणों पर हम एक दृष्टि डालें :–

(ए) पूर्व निश्चितता और (बी) कयामत का दिन

(ए) पूर्व निश्चितता :—

''(ऐ पैगम्बर!) कहो कि ऐ अल्लाह! ऐ तमाम मुल्क के मालिक ! तू जिसको चाहे राज्य दे और जिससे चाहे राज्य छीन ले, और तू जिसको चाहे इज्जत दे और जिसे चाहे जिल्लत दे...तू हर चीज पर समर्थ है... .तू जिसको चाहता है बेहिसाब रोजी देता है।''

(सुरतु आलिअिमरान् ३:२६,२७)

वह जिसको चाहता है उस पर दया करता है। (३:६६)

''...अल्लाह जिसे चाहे उसे भटका दे और जिसे चाहे उसे सीधे रास्ते पर लगा दे।''

(सूर:अल अन्आम ६:३९,१२५)

''...अगर अल्लाह चाहता तो सब लोगों को (सीधी) राह पर चलाता।''

(सूर:अर—राद १३:३१)

''और कोई शख्स बिला हुक्म अल्लाह के मर नहीं सकता, वक्त मुकर्रर लिखा हुआ है।''

(सूरतु आलि अिमरान् ३:१४५)

अल्लाह और पाप

यह बिलकुल स्पष्ट है कि सब कुछ अल्लाह द्वारा पहले से ही निश्चित किया हुआ है। तब न्याय के दिन की क्या जरूरत? स्पष्टत: लोग जैसे भी हैं, सब अल्लाह के ही बनाये हुए हैं और अल्लाह ने ही जानबूझ कर पाप करने वालों का मार्गदर्शन करना भी रोक रखा है।

शैतान अल्लाह पर आरोप लगाता है

जब हम पाप और पुण्य के सिद्धान्त की जाँच करते हैं, तब पाते हैं कि एकमात्र अल्लाह ही पाप का सक्रिय कारण है। सृष्टि की पुराण—कथा में, जैसा अल हिज्र (२५—४०) में वर्णन है, शैतान इबलीस, खुले रूप में अल्लाह पर बहकाने का दोषारोपण करता है। वह अल्लाह को कुछ समय के लिए विश्राम के लिए कहता है ताकि कयामत के दिन तक वह बदला लेने के लिए लोगों को पथभ्रष्ट करता रहे। यह विचित्र बात है कि कृपालु अल्लाह शैतान के इस अनुरोध को मान भी लेता है ताकि लोगों से जहन्नुम को भरने में वह अल्लाह की मदद कर सके।

शैतान अल्लाह का एजेन्ट

शैतान को बुरा बनाने का ही अल्लाह का केवल सुविचारित काम नहीं है बल्कि इब्लीस, लोगों को पथभ्रष्ट करने के लिए उसके एजेन्ट का काम भी

करता है। ''क्या तुमने नहीं देखा कि हमने शैतानों को काफिरों पर छोड़ रखा कि वे उनको उभारते रहते हैं।'' (सूर:मरयम १९:८३) फिर भी परम दयालु अल्लाह उसी अध्याय में घोषित करता है कि ''वह बुरा कर्म करने वालों को झुण्ड के झुण्ड जहन्नुम में दाखिल करेगा।''

न्याय का दिन

क्या पुन: जी उठने वाले लोगों पर अभियोग चलाने का कोई कारण शेष बचता है? अभियोग चलाना जब तक निष्पक्ष न हो तब तक वह मात्र एक अभिनय और अन्याय का स्रोत होता है। क्या यह ठीक है कि किसी को अन्धा बना दिया जाय और फिर उस पर नहीं देख सकने का दोषारोपण किया जाय? इब्लीस के माध्यम से या अपनी रचनात्मकता द्वारा यदि अल्लाह ही मनुष्यों के भटकाव का कारण है तब लोगों को दण्डित या पुरस्कृत करने हेतु पुनर्जीवित करने का क्या कोई कारण रहा जाता है? पुन: (अल—अराफ ७:१७९) में अल्लाह घोषित करता है, ''हमने बहुत से जिन्न और इंसान दोजख के लिए पैदा किये हैं...।'' ''न्याय का दिन'' का सिद्धान्त अन्यायपूर्ण है और इसलिए ईश्वरीय प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है। ईसाइयों की तरह, पैगम्बर ने इसे जरथुस्त्र से लिया है। इस सिद्धांत का गतिविज्ञान तब स्पष्ट हो जाता है जब हम अनुभव करते हैं कि मनुष्य का सबसे बड़ा भय मृत्यु है और पुनर्जीवन की अवधारणा उसे अमरत्व की आशा प्रदान करती है। पैगम्बर ने इस्लामी ईमान के एक मौलिक सिद्धांत के रूप में इसकी स्थापना करने के बाद स्वयं को ईसा मसीह के स्थान पर पहुँचा दिया और घोषित किया कि न्याय के दिन वह अल्लाह के साथ न्यायाधीश के आसन पर विराजमान रहेंगे, वह अल्लाह के दाहिनी ओर विराजमान होंगे और लोगों को दण्डित या पुरस्कृत करने में मध्यस्थता करने की अपनी शक्ति का प्रयोग करेंगे।

ईश्वरीय व्यक्तित्व का दावा करने वाले पैगम्बर के पीछे सीधे—साधे लोगों का समूहबद्ध होना स्वाभाविक था जिनको दोजख की यातनापूर्ण पीड़ा के वर्णन से खूब डराया जा चुका था। दहकती आग की ज्वाला से अपना बचाव करना और अति मधुर सुगंधित, उन्नत उरोजों और झुकी नजरों वाली हुरों के आलिंगन पाश में दौड़कर आबद्ध होना क्या स्वाभाविक नहीं है?

पुनर्जीवन की झाँकी

ऐसी स्थिति में इस्लामी पुनर्जीवन और न्याय के दिन का वर्णन उपयुक्त ही लगता है : कुरान बार–बार लोगों को आश्वासन देता है कि जन्म से मृत्यु पर्यन्त संकलित और लेखबद्ध किये गये साक्ष्यों के आधार पर पुनर्जीवन के बाद न्याय किया जायेगा।

लिखने वाले

''वही.....तुमलोगों पर निगहबान (फिरिश्ते) तैनात करता है, यहाँ तक कि जब तुममें से किसी को मौत आती है तो हमारे भेजे हुए (फिरिश्ते) उसकी रूह कब्ज करते (निकालते) हैं और वह (हमारे हुक्म की तामील में) कोताही नहीं करते। फिर (ये लोग) अल्लाह की तरफ जो उनका सच्चा कारसाज (सँभालने वाला) है वापिस पहुँचाये जायेंगे। सुन रखो कि उसी का हुक्म (हुक्म) है और वह (बेमिस्ल) जल्द हिसाब लेने वाला है।'' (सूर: अलअनआम ६:६१,६२)

कामों का रजिस्टर (लेखा–बही)

''बेशक हम मुर्दों को जिलायेंगे और (बतौर करनी वह लोग) जो कुछ आगे भेज चुके हैं और जो निशान (दुनिया में) पीछे छोड़ चुके हैं वह सब हम लिखते जाते हैं। और हमने हर चीज खुली असल किताब (यानी लौह महफूज) में लिख रखी है। (सूरतुयासीन ३६:१२)

''जो कुछ भी तुम करते हो हम लिखते जाते हैं।'' हॉब्लिंग (३६:१२, ५४:१२, १०:२१, ५०:१७–१८, ४३:८०)

साक्ष्य की किताब

''हमारे पास याद दिलाने वाली किताब (लौह महफूज) है।

(सूर: काफ् ५०:४)

निगरानी रखने वाले

सूर: काफ् ५०, सूर: इन्शिकाक ८४ और सूर: नाईट स्टार में कुरान बार–बार कहता है कि अल्लाह ने प्रत्येक मनुष्य पर दो फिरिश्ते निगरानी रखने के लिए नियुक्त कर रखा है। आदमी जो भी करता है, वे लिखते जाते हैं।

इस्लाम में साक्ष्य का महत्व

न्याय (कयामत) के दिन प्रत्येक व्यक्ति को उसकी लेखा–बही के साथ प्रस्तुत किया जायेगा और कहा जायेगा, ''अपनी किताब पढ़ लो।'' (सूर:बनी इसराइल १७:१०–१५ और ७१) (सूर: अल कियाम : ७५ : १३, १४)

न्याय के दिन साक्ष्य की प्रासंगिकता का बहुत महत्व होगा। हर व्यक्ति का लेखा पुस्तिका के अलावा उसके अपने अंग जैसे जीभ, हाथ, पैर उसके बारे में गवाही देंगे। (सूर:अन–नूर २४:२४ और डिस्टिंग्विस्ड १५) (४१:२०–२२, ३६:६५)

अरबों का संदेह

पुनर्जीवन की अवधारणा में विश्वास करना अरबों के लिए कठिन था ''...जब हम (मरकर) मिट्टी हो जायेंगे तो क्या हम नये (सिरे से फिर पैदा) किये जायेंगे।'' (सूर:अर–राद १३:५)

पुनर्जीवन अल्लाह का वादा

कुरान घोषित करता है कि पुनर्जीवन में अविश्वास करने वालों को दोजख का दण्ड मिलेगा और दृढ़ता पूर्वक कहता है कि पुनर्जीवन अल्लाह का वादा है। (सूर : अन नहल–१६:...)

न्याय की इस्लामी दृष्टि

कुरान के अनुसार न्याय की अवधारणा सनातन न्याय पर आधारित लगती है।

कोई मध्यस्थता नहीं

''और इन लोगों को कियामत के दिन से डराओ कि जब भय से भरकर दिल गले तक आ जावेंगे। पापियों का न कोई दोस्त होगा और न कोई सिफारिशी होगा जिसकी बात मानी जावे। (सूर: अल मुअमिन ४०:१८)

कोई सहायक नहीं

''...और उस दिन के पहले जब न कोई मोल–भाव होगा और न कोई सहायक होगा''(सूर:इब्राहीम १६:३१)

अल्लाह ही अकेला न्याय करने वाला

''.....हुक्म तो अल्लाह ही का है, मैंने उसी पर भरोसा कर लिया है और भरोसा करने वालों को चाहिए कि उसी पर भरोसा करें।'' (सूरःयूसुफ १२:६७)

अद्‌भुत बदलाव

यहाँ तक तो कुरान का कथन सामान्य न्याय के सिद्धान्त के साथ–साथ चलता है; पर लोगों में झुकाव के प्रति अरुचि के कारण, यह इस्लाम में दाखिल होने के लिए श्रोताओं को प्रभावी ढंग से आमन्त्रित करता हुआ नहीं लगता है। तब आवाज बदल जाती है।

पैगम्बर का मध्यस्थ की भूमिका ग्रहण करना

''और अल्लाह के यहाँ (किसी के लिए) सिफारिश काम नहीं आती सिवाय उसके लिए जिसकी बावत यह (अल्लाह ही सिफारिश की) इजाजत दे.....'' (सूरः सबा ३४:२३) और (अन नज्म ५३:२६)

पैगम्बर की मध्यस्थता की शक्ति क्रमशः पूर्ण अधिकार की शक्ति में बदल जाती है :

''कसम से.....

बेशक यह (कुर्आन) एक प्रतिष्ठित फिरिश्ते का पैगाम है, शक्तिवाला और अर्श के मालिक (अल्लाह) के नजदीक उसका बड़ा रुतबा है, सरदार और अमानतदार (भरोसेवाला) है।'' (सूरः अत–तक्वीर ८१:१८–२१)

न्याय में उलटफेर

मुसलमानों को विश्वास है कि पैगम्बर न्याय के आसन पर अल्लाह के दाहिनी ओर बैठेंगे और उनकी मध्यस्थता अन्तिम होगी। मुसलमानों द्वारा उत्साह से गाये जाने वाले अल्लाह की स्तुति के छन्दों में उनके इस विश्वास के लिए कि अल्लाह जिसको चाहे क्षमा नहीं कर सकता, पर मुहम्मद कर सकता है, कोई क्षमा भाव नहीं होता। उनका विश्वास है कि मुहम्मद में ईमान ही उन्हें मुक्ति दिला सकता है।

सदा से नैसर्गिक न्याय कर्म पर आधारित रहा है न कि विश्वास पर। न्याय के दिन किस तरह का न्याय होगा? यह न्याय की अवधारणा को ही मजाक बना देता है, क्योंकि मध्यस्थता न्याय के लिए वैसा ही अपरिचित है जैसा बर्फ से लिए गर्मी और रेंगने वाले जन्तुओं के लिए उड़ना।

क्या शारीरिक पुनर्जीवन संभव है ?

शारीरिक पुनरुत्थान का विचार, बिल्कुल ही बचकाना लगता है। आधुनिक वैज्ञानिक दावा करते हैं कि एक जैविक प्राणी के रूप में विकसित होकर वर्तमान स्वरूप तक पहुँचने में मनुष्य को दस बिलियन वर्ष का समय लगा है, लेकिन कयामत के दिन जब तुरही फूँकी जायेगी, मरे हुओं की धूल और राख के कण तत्क्षण अपने मौलिक रूप में प्रकट हो जायेंगे और असामान्य ढंग के न्याय के लिए उपस्थित होंगे जिसमें से अधिकांश को (अर्थात सभी गैर मुसलमानों को) बिना उनके उचित–अनुचित कार्यों पर विचार किये ही दोजख की आग में सदा के लिए झोंक दिया जायेगा।

मनुष्य मृत्यु से इतना भयभीत रहता है कि मृत्यु से बचाव के लिए आशा की एक किरण प्रदान करने वाली आत्म–प्रवंचना में भी विश्वास करने लगता है।

मुहम्मद और पुनरुत्थान

जो भी हो, यह एक बुरी सोच नहीं है, यदि ईमान वाले इसे याद रखें कि मुहम्मद स्वंय भी न्याय के दिन से भयभीत थे (सूरःअल अन्आम ६:१५) और मरणशील होने के कारण सबके समान ही कयामत के दिन पुनर्जीवित होंगे।

(ऐ पैगम्बर!) तुमको भी मरना है और इन लोगों को भी मरना है। फिर कियामत के दिन तुम सब अपने परवरदिगार के सामने झगड़ोगे। (सूरतुज्जुमरि ३९:३०–३१)

पुनर्जीवन के संबंध में मुहम्मद की भूमिका पर यह आयत बिल्कुल ही अलग रोशनी डालती है। कुर्आन में बहुत सारे विरोधाभास हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :–

कुरान में विरोधाभास

पैगम्बर ने दावा किया :

''और यह कुर्आन इस किस्म की (किताब) नहीं कि अल्लाह के सिवाय और कोई इसे (अपनी तरफ से) बना लावे.....'' (सूर : यूनुस १०:३७)

और जोर दिया कि ''...अगर अल्लाह के सिवाय किसी और के पास से (वह आया) होता तो जरूर उसमें बहुत से भेद–विभेद पाते। (सूरः अन–निसा ४:८२)

हमने अभी देखा है कि अल्लाह ने हर चीज को पहले से ही निश्चित कर दिया है, फिर भी वह लोगों को उनके कार्यों के लिए उत्तरदायी बनाता है। वह उनको दण्डित करने के लिए दोजख और पुरस्कृत करने के लिए जन्नत प्रदान करता है। ये दोनों अवधारणाएँ सर्व व्यापक अल्लाह की प्रतिष्ठा के लिए बहुत ही निम्न स्तरीय है। फिर, वह अपना निर्णय लागू करने हेतु मरे हुओं को फिर से जीवित करेगा लेकिन न्याय का उसका तरीका और स्तर, नैसर्गिक न्याय के बिल्कुल विपरीत है। और अन्त में भौतिक पुनर्जीवन का सिद्धान्त असुगम और अविवेकपूर्ण है।

कुर्आन

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में कुर्आन के (ए) उद्देश्य और (बी) रचना के विषय में जानने की इच्छा होगी।

कुर्आन का उद्देश्य

(ए) कुर्आन का अवतरण मानव जाति के मार्गदर्शन के लिए हुआ है लेकिन यह बुरे लोगों का मार्गदर्शन नहीं करता है :

"……..उससे बढ़कर गुमराह कौन है कि जो बगैर अल्लाह की राह बताये अपनी राह पर चले। बेशक अल्लाह अन्यायियों को राह नहीं दिखाता। (सूर:कससि २८:५०)

"...अल्लाह बुरे लोगों का मार्गदर्शन नहीं करता।" (सूर:अल माइद: ५:६७)

चूकि सही लोगों को मार्ग दर्शन की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि केवल बुरे लोगों को ही इसकी आवश्यकता होती है, इसलिए यह साफ है कि कुरान की कोई जरूरत ही नहीं है।

कुर्आन की रचना

(बी) "और कुर्आन को हमने थोड़ा–थोड़ा करके उतारा कि तुम थोड़ा–थोड़ा उसे लोगों को पढ़ कर सुनाते रहो, और हमने उसे (इसी मसलहत से) धीरे–धीरे उतारा है।" (बनी इसराइल १७:१०६)

अरबों की आपत्ति

इसका मतलब है कि कुरान एक बार में नहीं बल्कि धीरे–धीरे अवतरित हुआ। पैगम्बर के समय के लोगों ने तर्क दिया कि यह विशेष अवसरों पर अवतरित हुआ, इसलिए अल्लाह की किताब नहीं हो सकता। यदि कुरान अल्लाह की किताब होता तो उनपर एक ही बार में उतरता। उनका कहना था कि विशेष अवसरों से जुड़ा होने के कारण यह साबित होता है कि यह मुहम्मद द्वारा ही रचा गया जिसे उन्होंने अल्लाह की रचना होने का बहाना बनाया।

"काफिर कहते हैं कि इस (पैगम्बर) पर कुर्आन सारे का सारा एक दम से क्यों नही उतारा गया...?" (सूर : अल फुर्कान २५:३२)

इस पर जोर देने के लिए अल्लाह दावा करता है :

"हमी ने यह शिक्षा (कुर्आन) उतारी है और हमी उनके निगहबान (संरक्षक भी) हैं।" (सूर : अलहिज्र १५:९)

"...यह कुर्आन तो बड़ी शान का है। लौह महफूज में लिखा हुआ है।" (सूर: अल–बुरूज ८५:२१,२२)

"...कोई उसके कलाम को बदल नहीं सकता और वही सब कुछ सुनता और सब कुछ जानता है। (सूर: अल–अन्आम ६:११५)

मुहम्मद ने घोषित किया कि अल्लाह ने हर कौम में अपने संदेश के साथ पैगम्बर भेजे। विशेष रूप से यहूदियों और ईसाइयों की किताबों में अल्लाह के ही हुक्म हैं पर उनमें बहुत सारे फेर बदल कर दिये गये हैं और क्षेपक जोड़े गये हैं।

अल्लाह के शब्द बदले नहीं जा सकते

यदि अल्लाह की पहली किताबें भ्रष्ट की जा सकती हैं तो कुर्आन को ही अल्लाह भ्रष्ट होने से क्यों रोकेगा ? ऐसा कहना कि यह उसका अन्तिम संदेश है इसलिए अल्लाह उसको भ्रष्ट होने से बचायेगा, बेतुकी बात है। ईसा ने भी अपने कथनों के बारे में ऐसा ही दावा किया था, फिर भी मुहम्मद ने जोर दिया कि इसे विकृत किया गया है। यदि अल्लाह कुरान की हिफाजत इसलिए करेगा कि यह उसका कथन है तब उसे ओल्ड और न्यू टेस्टामेन्ट की भी हिफाजत करनी चाहिए थी क्योंकि वे भी उसी के कथन थे।

कुरान की रचना

मनुष्य विवेक के कारण ही मनुष्य है, इसलिए उसे अपने विवेक के प्रयोग के अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता है। वह अल्लाह के कथनों की भी आत्म तुष्टि के लिए आलोचनात्मक विश्लेषण करने का अधिकारी है। कुरान की रचना पर विचार करते समय निम्नलिखित विन्दुओं पर भी ध्यान देना चाहिए :

१. मुहम्मद ने अल्लाह का रसूल होने का दावा किया; उन्होंने कुरान को अल्लाह का संदेश घोषित किया, जिसे उनके द्वारा विभिन्न अवसरों पर खण्डों में प्रकट किया गया।

२. कुरान की रचना नहीं की गयी बल्कि यह सदा से है; सिर्फ इसका प्रकटीकरण विभिन्न समय में हुआ।

३. कुरान अल्लाह की इच्छा की अन्तिम अभिव्यक्ति है, आगे, अब वह न कोई संदेश देगा न संदेश–वाहक भेजेगा।

४. कुरान अल्लाह के कानून को प्रकाशित करता है, जो पूर्ण, अमर, अपरिवर्तनीय और सदा–सदा के लिए, सभी परिस्थितियों में मार्गदर्शन करने के योग्य है।

५. सम्पूर्ण कुरान ग्रन्थ की रचना को मुहम्मद के जीवन काल में लिपिबद्ध कर लिया गया था, इसकी कोई निश्चितता नहीं है। न तो इसका कोई दावा ही कर सकता है। पैगम्बर को निरक्षर कहा जाता है। प्रारम्भ में उनके अनुयायियों में अनेक मुनाफिक (पाखण्डी) थे। इस तथ्य के आलोक में इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि उन्हें ठीक उसी रूप में लिपिबद्ध नहीं किया गया जैसा उन्होंने लिखने के लिए बोला। निरक्षर होने के कारण वे उसे पकड़ नहीं सकते थे। इसका कोई प्रमाण नहीं है कि उनका प्रसिद्ध लेखपाल जैद इब्न थावित उनकी पैगम्बरी के आरम्भिक सहयोगियों के समय से ही उनके लिए कार्य किया था।

६. सामान्य रूप से इस बात पर सहमति है कि पहला ईश–संदेश (सूरा ९६) का समय ६१० ई० और अन्तिम का पैगम्बर की मृत्यु के समय ८ जून ६३२ ई० के ठीक पहले तक है। इस प्रकार कुरान के अवतरण की कुल अवधि बाईस वर्ष है। फिर, कुरान को पैगम्बर के जीवन काल में संकलित

नहीं किया गया। जब अल्लाह का संदेश (वह्य) जल्दी–जल्दी आना शुरू हुआ तब इसे भेंड़–बकरी के चमड़े, अन्य चमड़े, पत्थर के सपाट टुकड़ों, ऊँट की पसली और कंधे की चौड़ी हड्डियों और ताड़ के पत्तों पर लिखा जाने लगा। इन आयतों के भिन्न–भिन्न खण्डों को बिना गिनती और तिथि के किसी निश्चित क्रम के ही बेतरतीब जमा किया जाने लगा।

इन बिखरे हुए टुकड़ों को पैगम्बर की मृत्यु के बहुत बाद संकलित किया गया और पहला अधिकृत ग्रन्थ उस्मान के खिलाफत के समय ६६० ई० में ही तैयार हो सका। इसका मतलब है कि अल्लाह के संदेश के आरम्भ के समय ६१० ई० से ६६० ई० के बीच, पचास वर्ष में, कुरान के विभिन्न खण्डों को अनेक लोगों और स्थानों से जमा किया गया। इसे स्मरण रखना चाहिए कि अल्लाह के संदेश (वह्य) को सिर्फ नियुक्त लिपिकों द्वारा ही लिपिबद्ध नहीं किया गया, बल्कि वैसे अनुयायियों द्वारा भी किया गया, जो अधिकांश समय उनके आसपास ही जमा रहते थे। इसके अलावा कुछ अनुयायी इन आयतों को रट लिया करते थे। इनकी स्मृति से भी कुछ आयतों को कुरान के संकलन के लिए लिया गया।

७. कुरान के ११४ सूरा: या अध्याय कालक्रम या अन्य किसी उपयुक्त कारण से तैयार क्रम में न होकर बेतरतीब संकलित हैं। इनके अधिकांश आयत आसानी से समझने लायक किसी कथन की तारतम्यता को नहीं बनाते, विशेषकर वैसे अनजान लोगों को समझने के लिए जिनको कुरान संबोधित है।

८. यदि अल्लाह कुरान की हिफाजत की जिम्मेवारी लेता है तो उसे उसके शब्दों को ही नहीं बल्कि उसके अर्थ को भी स्पष्ट करना चाहिए था।

९. ज्ञान को कुरान की रचना का अभिन्न भाग माना जाता है। मुसलमान विश्वास करते हैं कि ऐसा कुछ भी नहीं है जिसकी कुरान में चर्चा न की गयी हो। इनका यह दावा, खगोलशास्त्र, प्रकृति के भौतिक नियम, वैज्ञानिक सूत्र एवं अनुसंधान, चिकित्सीय एवं जीव विज्ञान की नई पद्धतियाँ, इतिहास और भविष्य की घटनाओं की जानकारी और वह सब कुछ जो मनुष्य सोच सकता है, सबको अपनी सीमा में ले लेता है।

१०. ओल्ड और न्यू टेस्टामेन्ट को भी कुरान अल्लाह की किताब बताता है और मूसा और ईसा को भी पैगम्बर मानता है।

ऊपर जो कुछ भी मैने कहा है उसके आलोक में निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचा जा सकता है।

१ए चूकि कुरान अल्लाह का संदेश था और इसी कारण मुहम्मद अल्लाह के पैगम्बर बने थे, उनका यह प्रथम कर्तव्य था कि कुरान का सर्वाधिक उपयुक्त तरीके से संकलन करते। सर्वोच्च प्राथमिकता वाले इस कार्य की उन्होंने स्पष्टत: अनदेखी की।

२ए यदि कुरान की रचना नहीं की गयी है और यह सदा से वैसा ही है जैसा अभी है, तब जिन घटनाओं की इसमें चर्चा है वे सब पहले से निश्चित थीं। इसलिए किसी पैगम्बर को भेज कर उसके पक्ष या विपक्ष में तर्क देने की कोई आवश्यकता ही नहीं थी। इसलिए कुरान बिना उद्देश्य का और बिल्कुल अनावश्यक है।

३ए यदि ईश–संदेश का उद्देश्य लोगों का मार्गदर्शन है, तब इसे अनन्त काल तक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया होना होगा; क्योंकि लोगों को सदा नेतृत्व की आवश्यकता होती है। फिर, समय गतिशील है और मानव संस्कृति निरन्तर बदलने की प्रक्रिया में होती है। यदि मुहम्मद के बाद ईश–संदेश रुक जाता है तो इसका सीधा मतलब है कि मुहम्मद के एक हजार, दस हजार और एक लाख वर्ष बाद भी पीढ़ियों को उसी स्तर पर रहना होगा जिस स्तर पर मुहम्मद थे। यह कुरान को अवांछित और अस्वाभाविक बना देता है।

ईसा और मानी ने भी दावा किया था कि ईश–संदेश उनके साथ ही समाप्त हो गया और अब किसी भी मसीहा या पैगम्बर में विश्वास लाने की आवश्यकता नहीं है। यह सत्ता के भूखे सांसारिक शासकों के समान है, जो प्रत्येक देश पर अपना अनन्य शासन चाहते हैं। ईश–संदेश भी वही चीज है–अनन्य प्रभुत्व का साधन मात्र।

४ए कुरान में लगभग अस्सी आयत ऐसे हैं जिनके विषय में कहा जा सकता है कि ये इस्लामी कानून को धारण करने वाले हैं। इनका क्षेत्र बहुत सीमित है और इन्हें मानव जीवन के व्यापक संदर्भों में लागू नहीं किया जा सकता

है। यही कारण है कि शरिया या मुस्लिम कानून को किसी भी मुस्लिम साम्राज्य के किसी भाग में इसके मूल रूप में लागू नहीं किया जा सका और उनको रोमन, बैजेन्टाइन तथा परसियन कानूनी पद्धतियों से उधार लेना पड़ा। कानून अपनी प्रकृति से ही मरणशील है। एक समय के बाद यह अप्रचलित, अवांछनीय और अप्रासंगिक बन जाता है और इसे नये कानूनों से बदलना पड़ता है। इसलिए कुरान का कानून भी जो लगभग चौदह सौ वर्ष पहले अस्तित्व में आया, सदा के लिए उपयोगी नहीं हो सकता है। इसका पहला प्रमाण कुरान में ही उपलब्ध है –

"(ऐ पैगम्बर!) हम कोई आयत मंसूख (निरस्त) कर दें या बुद्धि से उसको उतार दें तो उससे अच्छी या वैसी ही (आयत) ले आते हैं.....।" (२:१०६, १६:१०१ और लॉ १००)

सूर: अल–अन्फाल ८:६५, सूर: अन–नहल १६:१०१, और सूर:अल–अअला ८७:६ से ९ में इसका और भी साक्ष्य उपलब्ध है। यदि पैगम्बर के बीस वर्ष के मजहबी नेतृत्व की अल्पावधि में ही अनेक आयतों को हटाना पड़ा या अन्य आयतों द्वारा स्थान्तरित करना पड़ा तब बाकी कुर्आन, सैकड़ों और हजारों वर्षों तक ज्यों का त्यों कैसे रह सकता है।

५ए पैगम्बर की निरक्षरता और यह तथ्य कि सम्पूर्ण कुरान उनके जीवन काल में नहीं लिखा गया था, कुरान में जोड़–घटाव के पर्याप्त कारण हैं।

६ए यह सच्चाई कि बेतरतीब ढंग से संग्रह की गई आयतों का संकलन, लगभग अर्द्ध शताब्दी बाद किया गया, कुर्आन में कुछ आयतों के छूट जाने, कुछ को अलग से जोड़ देने, कुछ को बढ़ा–चढ़ा कर या उनमें कुछ कमी कर देने की अशुद्धि बिल्कुल संभव है। इस परिस्थिति की संभावना इस बात से पुष्ट हो जाती है कि मंसूख आयतों को कुर्आन का भाग नहीं होना चाहिए था फिर भी वे कुर्आन में बनी रह गयीं। इसके अलावा, यह इसलिए भी सही है कि पैगम्बर के अनेक अनुयायी मुनाफिक थे जो जान–बूझ कर इस्लाम को हानि पहुँचाना चाहते थे।

७ए कुर्आन बिल्कुल ही काल–क्रम–बद्ध नहीं है। पैगम्बर ने पहला संदेश मक्का में और अन्तिम मदीना में ग्रहण किया था। संकलन कर्ताओं ने काल क्रम बद्धता की बिल्कुल ही अनदेखी कर सुराओं को उनकी लम्बाई

के क्रम में सजा दिया। पीछे को आगे के क्रम में सजा देने के कारण पाश्चात्य विद्वान इसे ''इतिहास का उल्टा क्रम'' कहते हैं। यही कारण है कि अल्लाह द्वारा कुर्आन को सरल और सुबोध बनाने के दावे के बावजूद सामान्य विश्वासियों के लिए यह तत्क्षण सुबोध नहीं होता। यदि अल्लाह ने कुर्आन की क्रमबद्धता की सुरक्षा को ठीक नहीं समझा तो उससे पूरे कुर्आन की सुरक्षा की आशा किस आधार पर की जा सकती है? मेरा आशय उस्मान के पूर्व के पचास वर्षों की अवधि से है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उस्मान द्वारा अधिकृत किये जाने के बाद से, जैसा भी यह तैयार हुआ, इसमें कोई छेड़—छाड़ नहीं हुआ है।

८ए निश्चय ही शबद का अपना महत्व है लेकिन उससे कहीं अधिक महत्व उसके अर्थ का है। यदि ''नारंगी'' शब्द से सेव या केला का बोध होने लगे तब इसके अक्षरों, हिज्जे और उच्चारण की संरक्षा का कोई महतव नहीं रह जाता है। कुर्आन के साथ ठीक यही हुआ है। शब्द तो वही हैं, लेकिन विभिन्न विद्वान बिल्कुल ही अलग—अलग व्याख्या करते हैं। यदि वैसा नहीं होता तो मुसलमान बहुत सारे परस्पर विरोधी फिर्कों में बँटते नहीं। क्या अल्लाह ने सचमुच में कुर्आन की सुरक्षा की है?

९ए मुसलमानों के दावे के अनुसार यदि कुर्आन में हर चीज का वर्णन होता तो वे संसार के सबसे उन्नत राष्ट्र होते; क्योंकि उनको जो कुछ भी करना होता, जैसे कैन्सर का उपचार, परमाणु बम और अन्तरिक्ष नियन्त्रण की तकनीक आदि सभी वे कुर्आन से जान लेते। निश्चय ही वैसा नहीं हुआ। यह कितनी दयनीय स्थिति है कि जब गैर मुस्लिम वैज्ञानिक इन्हें सार्वजनिक कर देते हैं तब मुसलमान उस ज्ञान का, कुरान में होने का दावा करते हैं। यह इस्लाम का दुर्भाग्य है कि मुसलमान उन चीजों को भी कुरान में ही ढूँढते हैं जिसके वहाँ होने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

१०ए यदि मुहम्मद के पहले मूसा और ईसा जैसे पैगम्बरों की आवश्यकता थी तब मुहम्मद के बाद भी उनकी आवश्यकता होगी क्योंकि समय निरन्तर बदल रहा है। यदि पहले की अल्लाह की किताबों में छेड़छाड़ किया जा सकता है तब कुर्आन भी उसी प्रकार की किताब होने के कारण गलत बयानी से बच नहीं सकता। कुरान में गलती का होना कोई जानबूझ कर

की गई गलती नहीं बल्कि बिल्कुल स्वाभाविक रूप में असावधानी के कारण, जोड़—घटाव की गलती हो सकती है। जैसा कि (४ए) में चर्चा की गयी है और जो सूरा अल—बकर : (२), अन—नहल (१६) और अल अअला (८७) के उद्धरणों द्वारा समर्थित है, पैगम्बर कुछ आयतों को भूल गये थे, जिन्हें लिपिबद्ध नहीं किया जा सका था। यह विलोपन दर्शाता है। उनको नई और बेहतर आयतों से प्रतिस्थापित करना, संशोधन करना हुआ, जो कुर्आन के नित्य और अपरिवर्तनीय होने के दावे के विरुद्ध है।

और अन्त में, उपर्युक्त निरूपण के निम्न पृष्ठांकन में, मैं जोड़ना चाहूँगा कि कुर्आन में ऐसे अनेक कथन हैं जो ऐतिहासिक तथ्यों द्वारा सत्यापित नहीं होते हैं।

कृपया मुझे दो उदाहरण प्रस्तुत करने दीजिए :

१. (सूर : अल—कहफ १८:८३ से १०१) में कुर्आन ने सिकन्दर महान (जुल्कर नैन) को पैगम्बर और एकेश्वरवादी के रूप में चित्रित किया है। पर वह वैसा नहीं था। इसे अच्छी तरह जानते हुए कि मैकेडोनिया के फिलिप का वह पुत्र था उसने मिश्र के प्रमुख देवता एमोन का पुत्र होने का दावा किया।

फारस के साम्राज्य को जीतने के बाद उसने स्वयं पर देवत्व के आरोपण की माँग की। अनेक देशों में उसे देवता की मान्यता दी गई और उसकी पूजा की गई। कुर्आन, सिकन्दर के भारत से पीछे हटने की कहानी से अनभिज्ञ है। इतिहास में उसके द्वारा लोहे और ताँबे की दीवाल बनाने की भी कोई चर्चा नहीं है जिससे काल्पनिक गॉड और मैगॉग को दूर रखा जा सके। ये तथ्य चीन की दीवाल के संदर्भ में ज्यादा संगत है लेकिन सिकन्दर ने चीनी भूमि पर पाँव भी नहीं रखा था।

२. ''लुक्मान'' शीर्षक वाले सूर: ३१ में कुर्आन लुक्मान को सच्चा मुसलमान जैसा चित्रित करता है, जो एकेश्वर वादी है और बहुदेववाद तथा मूर्तिपूजा का निन्दक है।

अल्माइयन, पाइथागोरियन का विद्यार्थी था, जिसने दक्षिणी इटली के क्रोटोन में प्राकृतिक दर्शन का विद्यालय स्थापित किया था। पूरब में लुक्मान हकीम या लुक्मान द वाइज या लुक्मान वैद्य के रूप में ज्ञात इस व्यक्ति ने

यह विशेष प्रसिद्धि पशु–संरचना की जाँच में अर्जित की थी। उसने धमनी और शिराओं के भेद को बतलाया, मष्तिष्क को ज्ञान का केन्द्र स्थापित किया, नेत्र–तन्तु की खोज की, और भ्रूण विकास के अपने आन्तरिक ज्ञान के कारण वह भ्रूण–शास्त्र के संस्थापक के रूप में ज्ञात हुआ।

लेकिन बुद्धिमान लुक्मान एकेश्वरवादी नहीं था; वह बहुदेववादी था और मूर्तिपूजक भी।

कुरान के कानून की प्रकृति

कुर्आन की रचना के उद्देश्य के विषय में संक्षेप में विचार करने के बाद उसके कानूनों की प्रकृति पर विचार की इच्छा होगी। कुर्आन स्पष्टता से अपने कानून के मौलिक सिद्धान्त को रखता है :

(ऐ पैगम्बर!)....तुम अल्लाह के दस्तूर में कदापि तब्दीली न पाओगे। (सूर : अल–अह्जाब ३३ : ६२)

मैं इस पर अवश्य ही ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा कि ''अल्लाह के कानून'' को ''अल्लाह का रास्ता'' या ''अल्लाह का तरीका'' भी कहा गया है। मुसलमानों के विश्वास के अनुसार कुरान कानून है और अपरिवर्तनीय है, इससे कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता है कि मूल आयत के अनुवाद में इसे ''अल्लाह का कानून'', ''अल्लाह का रास्ता'' या अल्लाह का तरीका'' कुछ भी कहा जाय।

कानून की समानता

कुर्आन के कानून का दूसरा सिद्धांत घोषित करता है कि कानून से कोई ऊपर नहीं है और यह स्वयं पैगम्बर पर भी समान रूप से लागू होता है : (ऐ पैगम्बर यह कुर्आन) जो तुम्हारे परवरदिगार के यहाँ से पैगाम भेजा गया है, उसी पर चलो.....'' (सूर : अल–अन्आम ६:१०६)

अल्लाह पैगम्बर को हुक्म देता है : ''और (अल्लाह ने) कहा यही मेरा सीधा रास्ता है, तो इसी पर चले जाओ। और कई–कई रास्तों पर न पड़ना, वे तुमको अल्लाह के रास्ते से तितर–बितर कर देंगे।...''

(सूर:अल–अन्आम ६:१०६)

इस आयत में दी गयी चेतावनी का न्यून आकलन नहीं किया जा सकता है, फिर भी पैगम्बर के कुछ कामों को कुरान के कानूनों से मेल बैठाना कठिन लगता है। मुझे दो उदाहरण देन दीजिए :

१. ''...और अगर तुमको इस बात का डर हो कि बेसहारा (लड़कियों) में इन्साफ काइम न रख सकोगे तो जो औरतें तुम्हें पसंद हों उनसे निकाह कर लो – दो–दो या तीन–तीन या चार–चार। लेकिन अगर तुमको इस बात का भय हो कि (उनके साथ) बराबरी (का बर्ताव) न कर सकोगे तो एक ही (बीवी से निकाह काफी है) या (लौंडी) जो तुम्हारे कब्जे में हो (उस पर संतोष करना) यह (तदवीर) जियाद: मुनासिब है क्योंकि उसमें अन्याय न होने की जियाद: उम्मीद है। (अन–निसा ४:३)

यह आयत दो शर्त्तों पर बहु पत्नीत्व की अनुमति देता है :

(ए) एक मुसलमान चार पत्नियाँ तक रख सकता है बशर्त्ते;

(बी) वह बराबरी रखने योग्य हो और किसी के साथ पक्षपात न करे।

कानून का सार–तत्व

सभी परिस्थितियों में एक कानून लागू करना, न्याय–शास्त्र का सार–तत्व है अर्थात् सबल और निर्बल के लिए अलग–अलग दो कानून नहीं हो सकते। दूसरी बात, कि कानून को लागू करने के लिए कानून निर्माता को उसका स्वयं सम्मान करना चाहिए। यह पैगम्बर के मामले में विशेष रूप से लागू होता है क्योंकि कुर्आन का प्रत्येक शब्द उन्हीं को संबोधित है।

इतिहास में यह दर्ज है कि पैगम्बर ने इनमें से किसी पर कोई ध्यान नहीं दिया क्योंकि :

उनकी मृत्यु के समय उनको आठ बीवियाँ और एक ईसाई रखैल थी, और वह आयशा के प्रति पक्षपाती थे। सबसे कम उम्र की आयशा से उनका गहरा लगाव था, जिसके कारण उनकी अन्य पत्नियाँ इसके विरोध में झगड़ा करती थीं। निम्न आयतें इसे सत्यापित करती हैं :–

''.....अभी अगर (पैगम्बर) तुम सबको तलाक दे दें तो अजब नहीं कि उसका परवरदिगार तुम्हारे बदले उसको तुमसे अच्छी बीवियाँ दे जो हुक्म उठाने वाली, ईमानवाली, तौब: करने वाली, नमाज में खड़ी होने वाली, अ़िबादत करने वाली, रोज: रखने वाली, ब्याही हुई या क्वाँरी हो।'' (सूरतुत्तहरीनि ६६:५)

पैगम्बर के पक्षपात के कारण उपजे रोष को यह आयत स्पष्ट करता है। पैगम्बर की बीवियाँ विद्रोह पर उतर गईं, जिसके चलते उन्हें तलाक देने और

उनसे अच्छी बीवियों द्वारा बदलने की धमकी देनी पड़ी। जब यह धमकी कारगर नहीं हुई तब अल्लाह ने विशेष कानून भेजा, जो केवल पैगम्बर की बीवियों पर ही लागू हुआ :

''ऐ पैगम्बर की बीवियों ! तुममें से जो बदकारी करेगी जाहिरा उसके लिए दोहरी सजा की मार दी जायगी; और अल्लाह के नजदीक यह मामूली बात है। और जो तुममें से अल्लाह और उसके पैगम्बर की फर्माबरदारी करेगी और भले काम करेगी हम उसको उसका दुगुना अज्र (प्रतिफल) देंगे। और हमने उनके लिए इज्जत की रोजी तैयार कर रखी है। ऐ पैगम्बर की बीवियों ! तुम और औरतों की तरह नहीं हो, अगर तुमको परहेजगारी मंजूर है तो तुम दबी जबान (किसी मर्द के साथ) बात न किया करो, न (ऐसी कि) जिसके दिल में (बुरी वासना का) रोग है वह तुमसे (किसी तरह की) आशा पैदा कर ले और (अगर बात कहना ही है तो) तुम माकूल (ढंग से) बात कहो।'' (अल अह्जाब ३३:३० से ३२ तक)

यह कानून पैगम्बर की बीवियों की ''पाप वार्ता'' सहित न केवल वैवाहिक पृष्ठभूमि को ही प्रकट करता है, वरन् यह भी निर्धारित करता है कि यदि पैगम्बर की बीवियाँ उनकी आज्ञा का पालन करती हैं, तो सामान्य बीवियों की तुलना में उन्हें दुगुना ईनाम मिलेगा और यदि वे उनकी अवज्ञा करती हैं, तो उन्हें दोहरा दण्ड भी मिलेगा। लेकिन क्यों?

अपना निष्कर्ष स्वंय निकालिए।

एक सच्चे कानून में दोरंगापन नहीं होना चाहिए क्योंकि समान रूप से लागू किया जाना ही इसका सार तत्व है। इस विशेषता के बिना यह अपने मुख्य उद्देश्य न्याय की गारंटी नहीं कर सकता है। फिर भी कुरान का कानून पैगम्बर के कार्यों को उचित सिद्ध करने के लिए दोरंगापन प्रस्तुत करता है :

''अपनी बीवियों में से जिसको चाहो अलग रखो और जिस को चाहो अपने पास रखो। और जिनको तुमने अलग कर दिया था उनमें से किसी को फिर (अपने पास) बुलावा लो तो तुम पर कोई पाप नहीं। इस तौर पर जियाद: संभव है कि उनकी आँखे टेढ़ी रहें और उदास न हों और जो (कुछ भी) तुम उनको दे दोगे उसे लेकर सबकी सब राजी रहेंगी।''....(अल अह्जाब ३३:५१)

जैसा पहले कहा जा चुका है कि बहुपत्नीत्व का मौलिक शर्त्त पति का सभी पत्नियों के साथ समानता का व्यवहार है, पक्षपात का नहीं। लेकिन यहाँ

अल्लाह ने पैगम्बर को विशेष छूट दी है कि वे अपनी किसी पत्नी को अपनी मर्जी से अलग कर सकते हैं, लेकिन उनके अनुयायी वैसा नहीं कर सकते।

इसे अवश्य स्मरण रखना चाहिए कि कुर्आन मुहम्मद को सभी ईमानवालों (मुसलमानों) के लिए आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता है। यदि पैगम्बर अपने ही कानूनों का पालन नहीं कर सकते हैं तो यह ईमान वालों के लिए बाध्यकारी कैसे हो सकता है ?

अल्लाह पैगम्बर की आज्ञा का पालन करता है

पैगम्बर ने घोषित किया कि वह अल्लाह के नौकर हैं लेकिन यह स्पष्ट है कि अल्लाह ही पैगम्बर की इच्छानुसार चलता है :

यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

''ऐ ईमानवालों ! पैगम्बर के घरों में न जाया करो, सिवाय (उस मौके के कि) तुमको खाने के लिए (आने की) इजाजत दी जाय कि तुमको खाना तैयार होने की राह न देखनी पड़े, मगर जब तुम बुलाये जाओ तब जाओ फिर जब खा चुको तो अपनी—अपनी राह लो और आपस में बातों में न लग जाओ। तुम्हारी इस बात से पैगम्बर को दु:ख होता है और पैगम्बर तुमसे ऐसी हिदायत करने में शरमाते हैं। और अल्लाह ठीक बात बताने में शर्म नहीं करता। और जब पैगम्बर की बीवियों से तुम्हें कोई वस्तु माँगनी हो तो पर्दे के बाहर (खड़े रहकर) उनसे माँगो। इससे तुम्हारे दिल और उनके दिल पाक रहेंगे। और तुम्हें शोभा नहीं देता कि अल्लाह के पैगम्बर को दु:ख दो और न तुमको यह शोभा देता है कि उनके बाद कभी उनकी बीवियों से निकाह करो। बेशक तुम्हारा ऐसा करना अल्लाह के नजदीक बड़ा (गुनाह का) काम है। (३३:५३)

स्पष्ट रूप से ये आयतें मुहम्मद के व्यक्तिगत जीवन से संबंधित हैं। इन सभी बातों को वे सीधे अपने अनुयायियों को कहने में सक्षम थे, फिर भी उन्होंने इसे अल्लाह के मुख से कहलाना ही चुना।

किब्ला का बदलना

''(ऐ पैगम्बर!) तुम्हारे मुँह का आसमान की ओर बार—बार उठाना हम देख रहे हैं। तो जो किब्ला तुम पसंद करते हो हम तुमको उसी की तरफ फेर देंगे, अब अपना मुँह मस्जिदे हराम (काबा) की ओर फेर लो। और (मुसलमानों!) तुम लोग जहाँ भी हुआ करो अपना मुँह उसी की ओर किया करो।....'' (अल बकर : २:१४४)

इस आयत में जो दर्ज है उसको ''किब्ला का बदलना'' के रूप में जाना जाता है, अर्थात वह दिशा जिधर रुख कर मुसलमान नमाज पढ़ते हैं। यह बिल्कुल साफ है कि जब पैगम्बर ने आसमान की ओर देखना शुरू किया, अल्लाह ने उसका आशय समझ लिया और अपने पैगम्बर को संतुष्ट करने के लिए उसने किब्ला में परिवर्तन कर दिया, अर्थात् जेरूसलम (बैतुल मुकद्दस) से काबा (मस्जिदे हराम) की ओर नमाज पढ़ने का रुख। स्पष्ट ही, इसमें अल्लाह की अपनी कोई इच्छा नहीं थी।

जेरूसलम — आरम्भिक किब्ला

शुरू में पैगम्बर ने, यहूदियों के मन में यह बात बैठाने के लिए कि जो मूसा, इब्राहिम और नूह पर प्रकट हुआ था इस्लाम उसी की निरन्तरता है, जेरूसलम को किब्ला बनाया था। उनका दिल जीतने के लिए कुर्आन ने इसे बार—बार दुहराया कि इजराइल की संतान श्रेष्ठ लोग हैं और अल्लाह ने उनको पूरी मानव जाति से ऊपर उठाया। जब प्रशंसा से यहूदियों को इस्लाम में शामिल नहीं किया जा सका तब पैगम्बर ने उन्हें इस सम्मान से वंचित कर दिया।

किब्ला के संबंध में मुसलमानों की राय

मुसलमान इस बात पर जोर देते हैं कि जेरूसलम को किब्ला बनाना अस्थाई व्यवस्था थी। उन्होंने उधर रुख इसलिए किया था कि काबा मूर्तियों से भरा हुआ था और मुसलमान एकमात्र अल्लाह में ईमान लाने के कारण इसे किब्ला नहीं बना सकते थे, जब तक कि वहाँ से सभी मूर्तियों को हटा नहीं दिया जाता। इतिहास इस दावे की पुष्टि नहीं करता है। किब्ला में बदलाव ६२४ ई० में किया गया था, जबकि काबा अभी भी कुरैश का पवित्र पूजा स्थल था जहाँ वे अपनी मूर्तियों की पूजा किया करते थे। मूर्तियों को काबा से हटाने का काम तो तब हुआ जब पैगम्बर ने विजेता के रूप में ६३० ई० में मक्का में प्रवेश किया।

किब्ला बदलने का दूसरा कारण

वास्तव में अरबों में अपना प्रभाव स्थापित करने के उद्देश्य से ही पैगम्बर ने किब्ला को जेरूसलम से बदल कर काबा किया। काबा सदियों से अरबों

का पवित्रतम धर्म—स्थल था। मुहम्मद ६२२ ई० में मदीना जाकर बसे थे जो बानू नाजिर, बानू कुरैजा और बानू कैनुका नाम के यहूदी कबीलों का घर था। विस्थापन के इस अवसर (१६ जुलाई ६२२ हिज्र) को खलीफा उमर ने ''मुस्लिम युग का आरम्भ'' जैसा आधिकारिक नामकरण किया। तीर्थ यात्रा के रूप में, पैगम्बर ने काबा के भ्रमण की योजना बनाई। मक्का के उनके अनुयायी जो पैगम्बर का साथ देने के कारण दस वर्ष पहले मक्का छोड़ चुके थे और अब घर की उदासी से पीड़ित थे, इस विचार से हर्षित हो गये। मक्का वालों के दिमाग में पवित्र तीर्थस्थल के भ्रमण ने काफी प्रभाव पूर्ण बदलाव किया और वे यह सोचकर प्रमुदित हो उठे कि उनका धर्म—स्थल इस्लाम का पवित्रतम केन्द्र होने जा रहा है। जेरूसलम का किब्ला होना, हठी यहूदियों को संतुष्ट न कर सका, जो टूट तो सकते थे पर झुक नहीं सकते थे। लेकिन अरबों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा, जो कठोर होने के बाद भी सरस सिद्ध हुए।

निश्चय ही, इस्लाम की प्रगति और इतिहास पर इसके विस्मयकारी प्रभाव के लिए यह एक बहुत बड़ा कदम था जो मनुष्य के रूप में मुहम्मद की बुद्धि और दूरदृष्टि को भी सिद्ध करता है।

अल्लाह, मुहम्मद का सभी प्रकार का काम करने वाला नौकर

वास्तव में अल्लाह सब कुछ करता है, न केवल मुहम्मद को खुश करने के लिए बल्कि वह उसका सभी प्रकार का काम करने वाले नौकर की तरह भी आचरण करता है :

''ऐ ईमान वालों ! अल्लाह और उसके पैगम्बर से (किसी काम में बगैर इजाजत मिले) आगे न बढ़ो और अल्लाह से डरते रहो। बेशक अल्लाह (सब कुछ) सुनता—जानता है। ऐ ईमान वालों ! अपनी आवाजों को पैगम्बर की आवाज से ऊँचा न होने दो और न उनके साथ बहुत जोर से बात करो जैसे तुम आपस में बोला करते हो। ऐसा न हो कि (इस असभ्यता के कारण) तुम्हारा किया धरा सब अकारथ हो जावे और तुम्हें खबर भी न हो। जो लोग अल्लाह के पैगम्बर के सामने दबी आवाज में बोलते हैं वही हैं जिनके दिलों को अल्लाह ने परहेजगारी के लिए जाँच (में परख) लिया है। उनके लिए क्षमा और बड़ा बदला है।'' (अल हुजुरात ४९:१ से ३)

पैगम्बर मनुष्य थे

निश्चय ही लोगों को अपने नेताओं का सम्मान, अपने तौर–तरीकों और आवाज पर समुचित नियन्त्रण द्वारा करना ही चाहिए। पर क्या अल्लाह द्वारा ही इतनी साधरण और सामान्य बुद्धि की बात को तेज तर्रार लोगों को कहा जाना चाहिए? यह एक काल्पनिक बात है कि इस्लाम पूर्व के अरबवासी असभ्य थे। उनके साहित्य और सम्मान की पद्धतियाँ इस धारणा को खुली चुनौती देती है। सच्चाई यह है कि अल्लाह के संदेश (वह्य) के छद्म आवरण में मुहम्मद ही बोलते हैं।

गुलामी

मुहम्मद मनुष्य थे और अपने समय की संस्कृति और सामाजिक परम्पराओं से ठीक उसी प्रकार प्रभावित थे जिस प्रकार छोटे–बड़े सभी ऐतिहासिक मुनष्य।

उदाहरण के लिए गुलामी को लीजिए। उन्होंने इसे एक स्वाभाविक प्रथा के रूप में लिया। इससे जुड़े उत्पीड़न और अपमान के बावजूद, उन्होंने इसके उन्मूलन का कोई प्रयास नहीं किया। यह सही है कि वे गुलामों के प्रति नरम दिल थे और उन्हें मुक्त कराना एक पुण्य कार्य समझते थे लेकिन ईसाइयत ने उनके बहुत पहले ही गुलामी के प्रति वैसा ही दृष्टिकोण अपनाया था। जस्टिन इयान (५२८ ई०) के कानून द्वारा पुराने वर्ग–भेद को समाप्त कर दिया गया था और मुक्त किये गये लोगों को स्वतंत्र लोगों के सभी विशेषाधिकार प्रदान किये गये थे। और भी आगे बढ़कर इसने गुलाम औरत के सतीत्व को स्वतंत्र औरत के समकक्ष ला दिया और उसके शीलहरण को मृत्यु द्वारा दण्डनीय अपराध घोषित किया; जबकि इस्लाम ने गुलाम–मालिक को गुलाम–लड़कियों से सम्भोग का वैधानिक अधिकार प्रदान किया।

गुलामी और अल्लाह

यदि ईश–संदेश में तिल भर भी सच्चाई होती तो किसी भी ईश्वरीय संदेश–वाहक के लिए गुलामी की निन्दा और उन्मूलन सर्वप्रथम कर्तव्य होता। क्योंकि स्वतंत्रता, निम्नतर जीवन से मानवता के उत्थान का प्रथम सोपान होने के कारण, उत्कर्ष है। यदि आप को मेरी बात पर विश्वास न हो, तो स्वयं

को एक गुलाम सोचकर जंजीर में जकड़े जाने, भूखे रखे जाने और कोड़े लगाये जाने की कल्पना कीजिए, अपनी पत्नियों और बेटियों का बलात्कार होता हुआ और अपने बच्चों को दूसरों के हाथों बेचे जाने के दृश्य की कल्पना कीजिए।

क्या इस स्थिति से भी बढ़कर क्रूर और भयानक कोई चीज हो सकती है, जिसे गुलामी कहते हैं? स्वतंत्रता का मूल्य तब समझ में आता है जब हम अनुभव करते हैं कि यह दासत्व के विष की एकमात्र औषधि है। मैं उस अल्लाह की पूजा नहीं कर सकता जो मानवता के अपमान के लिए सम्पूर्ण रूप से जिम्मेवार है। अल्लाह और मनुष्य के बीच का संबंध नैतिक है न कि मालिक और गुलाम का संबंध। मनुष्य की तरह यदि अल्लाह भी पीड़ा और अपमान के अधीन होता तो कैसा अनुभव करता ? एक सच्चा परमेश्वर निर्दय, अन्यायी और निर्मोही नहीं हो सकता। इसलिए उसके पैगम्बरों का सबसे बड़ा कर्तव्य गुलामी जो जड़–मूल से मिटाना ही हो सकता है।

इस्लाम और औरत

अन्य उदाहरण है, औरतों की स्थिति। उन्हें सदा यौन सुख का साधन, पुरुष का खिलौना और दुष्टता, अपवित्रता और पाखण्ड का स्रोत समझा गया है। उन्हें हीन समझना पुरुष की श्रेष्ठता की पहचान बन गयी है। यह ठीक है कि पैगम्बर ने कहा था कि वहिश्त माँ के चरणों में होता है, पर यह सिर्फ सैद्धान्तिक आदर ही सिद्ध हुआ, क्योंकि माँ के साथ ही एक औरत व्यक्ति, पुत्री, बहन और पत्नी भी होती है। मातृभाव के बावजूद, किसी भी बड़े मजहब या सिद्धान्त की तुलना में औरतें इस्लाम में अधिक उत्पीड़ित हैं। मुहम्मद ने परसियन प्रथा से पर्दा को मुस्लिम समाज में लिया (अन–नूर २४:३१) और उन्हें पर्दे के पीछे, मर्दों की सतर्क निगरानी में रहते हुए, उनके कार्यों को सिर्फ घरेलू दायरे में सीमित कर यथार्थ रूप में घरेलू कैदी बना दिया। औरतों की दशा को नापने के लिए सिर्फ कुरान के कानूनों पर ही दृष्टिपात कीजिए :

१. ''तुम्हारी बीवियाँ तुम्हारी खेतियाँ हैं, अपनी खेती में जिस तरह चाहो जाओ .....।'' (अल–बकर : २:२२३)

२. ''...हाँ पुरुषों को स्त्रियों पर प्रधानता प्राप्त है....।'' (अल—बकर २:२२८)
३. पुरुष औरत को मनमानी तलाक दे सकता है, पर औरत वैसा नहीं कर सकती। (अल बकर: २:२२७, अह् जाबि ३३:४९, अत तलाक ६५:१—२)
४. एक पुरुष चार पत्नियाँ और असंख्य रखैलें रख सकता है लेकिन एक औरत सिर्फ एक ही पति रख सकती है।
५. गवाह के रूप में एक मर्द दो औरत के बराबर है। (२:२८२)
६. उसी प्रकार पैतृक धन में एक भाई का दो बहन के बराबर हिस्सा होगा। (अन—निसा ४:११)
७. पुरुष जब अपनी पत्नियों को अवज्ञाकारी समझ ले, उन्हें हिन्सात्मक दण्ड देने के लिए स्वतंत्र है।
''....उनको समझा दो, फिर उनके साथ सोना छोड़ दो और उन्हें मारो, फिर वे अगर तुम्हारी बात मानने लगें तो उन पर तोहमत न लगाओ,...।'' (अन—निसा ४:३४)

इस्लाम और शादी के बाहर का यौन सम्बन्ध

१. कुर्आन में ऐसे साक्ष्य हैं जो विवाह के बाहर यौन संबंध की मनाही करते हैं:—

''और अपनी (कौम की) अकेली (यानी विधवाओं) के निकाह करा दिया करो और अपने गुलामों और लौंडियों के भी जो नेक बख्त हों;.....और जिन लोगों का विवाह नहीं हो सका है वे अपने को पाक—दामन (संयम में) रखें यहाँ तक कि अल्लाह अपनी कृपा से उन्हें समर्थ (और सम्पन्न) कर दे। और तुम्हारे हाथ के माल (लौंडी—गुलामों) में से जो लिखा पढ़ी के चाहने वाले हों तो तुम उनके साथ लिखा—पढ़ी कर दिया करो.....और तुम्हारी लौंडियाँ जो पाक (वैवाहिक) जीवन बिताना चाहती हैं,....हरामकारी पर मजबूर न करो।'' (अन—नूर २४:३२,३३)

''....जो औरतें तुम्हें पसंद हों उनसे निकाह कर लो — दो—दो या तीन—तीन या चार—चार से। लेकिन अगर तुमको इस बात का भय हो कि (उनके साथ) बराबरी (का बर्ताव) न कर सकोगे तो एक ही (बीवी से निकाह

काफी है) या (लौंडी) जो तुम्हारे कब्जे में हो (उस पर संतोष करना।)'' (अन—निसा ४:३)

''ऐ नबी ! हमने तेरी बीवियाँ तुझ पर हलाल की जिनके मिहर तू दे चुका है और लौंडियाँ जिन्हें अल्लाह (माले गनीमत में) तेरी तरफ लाया.....।'' (अल् अह्जाब ३३:५०)

''हाथ के माल'' से मतलब गुलाम से है। सेक्स के प्रसंग में इसका निरन्तर प्रयोग गुलाम औरत के लिए हुआ है। पत्नियों के अलावा अन्य औरतों से यौन संबंध का विस्तार विवाह की पवित्रता का मजाक है। फिर भी अल्लाह व्यभिचार के लिए मृत्यु—दण्ड निर्दिष्ट करता है लेकिन उनके लिए नहीं जो गुलाम औरत रख सकता हो। मुसलमान खलीफा, सुल्तान और राजाओं ने बड़े—बड़े हरम रखे जिनमें बीसियों नहीं, बल्कि सैकड़ों सुन्दर और कोमल औरतें होती थीं। हिन्दुस्तान के बादशाह जहाँगीर के विषय में कहा जाता है कि उसके अन्त:पुर में छ: हजार औरतें थीं। बादशाह के शयन—कक्षों की देखभाल विशेष बधिया मर्दों द्वारा की जाती थी, जिन्हें हिजड़ा कहते थे। ये कामुकता, बनाव श्रृंगार द्वारा तैयार करने, उत्तेजित करने और अपने मालिकों की वासना की भूख और आनंद को बढ़ाने की कला में दक्ष होते थे। रखैल रखने की शक्ति और सम्पन्नता से पूर्ण ये शासक अल्लाह के चंगुल से निरापद थे। इन्होंने असहाय लड़कियों के साथ चाहे जितना भी कुकर्म किया हो पर ये पापमुक्त ही रहे। ये हरम स्पष्टत: पृथ्वी पर जन्नत के प्रतिबिम्ब थे।

रखैलपन

चाहे कुछ भी हो, रखैल—प्रथा पैगम्बर का आविष्कार नहीं था। इब्राहिम और याकूब को भी रखैलें थीं। इसका आरम्भ परसिया में हो सकता है, जहाँ कठोर सम्राटों को, शासकीय अनुष्ठानों की कठोरता को कम करने के लिए, जिसे वे अच्छी तरह सम्पन्न करते थे मुलायम और सुमधुर लैंगिक गुड़ियों की आवश्यकता होती थी।

मुहम्मद की द्विविधता और अल्लाह

पैगम्बर पर रखैल प्रथा का दोषारोपण नहीं किया जा सकता है, उन्होंने इस प्रचलित परम्परा को सिर्फ अपना लिया था। यह, दिखाता है कि वे एक

मनुष्य थे और अपने समय की सांस्कृतिक गतिविधियों से प्रभावित थे। यद्यपि यह स्पष्ट दिखता है कि वे मनुष्य थे पर बात उतनी सीधी नहीं है, जैसी दिखती है; क्योंकि कुर्आन उन्हें मनुष्य और अल्लाह दोनों चित्रित करता है। मुसलमान दावा करते हैं कि वे एक ही अल्लाह में विश्वास करते हैं; पर वास्तव में वे मुहम्मद के दो रूप और अल्लाह में विश्वास करते हैं जिस प्रकार ईसाई पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा की तिकड़ी में विश्वास करते हैं। फिर भी यह द्विविधता जरथुस्त्रवाद, मानीवाद और नवप्लाटूनवाद की शिक्षाओं से बिल्कुल अलग है। इसके अनुसार पैगम्बर के रूप में मुहम्मद और अल्लाह दोनों एक ही हैं और इन दो–रूपों में मुहम्मद की प्रधानता के कारण प्रथम पूज्य पात्र वही हैं। यह विश्वास का सैद्धान्तिक भाग कम और व्यावहारिक भाग अधिक है।

पैगम्बर मनुष्य रूप में

मुझे पूरा विश्वास है कि दुनिया भर के मुसलमान इस्लाम की गलत व्याख्या का मुझ पर दोषारोपण करेंगे। ईमानदारी का तकाजा है कि उत्तेजित होने के पहले वे शुद्ध हृदय से निम्नलिखित उद्धरणों पर विचार करें। पहले पैगम्बर के मानव पक्ष को उद्धृत करते हैं :

१. पैगम्बर अल्लाह का सेवक है :
''और जो हमने अपने बन्दे (मुहम्मद) पर (कुर्आन) उतारा है, अगर तुमको उसमें शक हो.....।'' (अल–बकर: २:२३)

२. पैगम्बर न तो अदृष्ट जानते हैं और न ही वे फिरिश्ता हैं :
''(ऐ पैगम्बर!) कह दो कि मैं तुमसे नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के खजाने हैं, और न मैं गैब (अदृष्ट) का जानकार हूँ, और न मैं तुमसे यह कहता हूँ कि मैं फिरिश्ता हूँ.....(अल–अन्आम ६:५०)

३. पैगम्बर का काम लोगों को सिर्फ चेतावनी देना है; यहाँ तक कि उन्हें लोगों का पथ–प्रदर्शन करने की भी जिम्मेवारी नहीं दी गयी है :

(ए) ''.... सो (ऐ नबी!) तुम (तो सिर्फ) डराने वाले हो और जिम्मे तो हर चीज अल्लाह ही के है।'' (सूर:हूद ११:१२)

(बी) ''(ऐ पैगम्बर!) इन लोगों को सीधे मार्ग पर लाना तुम्हारे जिम्मे नहीं; बल्कि अल्लाह जिसको चाहता है सीधे मार्ग पर लाता है।'' .....।'' (अल बकर: २:२७२)

४. पैगम्बर में चमत्कार–प्रदर्शन की क्षमता नहीं; वह सिर्फ एक मनुष्य है :

(ए) ''और काफिर कहते हैं कि इस (मुहम्मद स०) पर इसके परवरदिगार की ओर से (कोई नबूअत की) निशानी क्यों नही उतरी ? (सो ऐ पैगम्बर!) तुम तो सिर्फ (अल्लाह के अजाब से इन लोगों को) डराने वाले हो....'' (सूर: अर–राद १३:७)

(बी) लोगों की सरगर्म माँग पर भी पैगम्बर कोई चमत्कार न दिखा सके और कहा:
''....कह दो कि सुब्हानल्लाह ! मैं क्या चीज हूँ सिवाय एक इन्सान (उस अल्लाह का) पैगाम लाने वाला।'' (बनी इसराइल १७:९३)

५. पैगम्बर अल्लाह के हुक्म का पालन करते हैं और अल्लाह में किसी की कोई भागीदारी नहीं है :

(ए) ''....कहो कि मुझको तो यही हुक्म मिला है कि मैं अल्लह की बन्दगी करूँ और किसी दूसरे को (अिबादत में) उसका शरीक न बनाऊँ। (और इसलिए तुमको भी) उसी (अल्लाह) की तरफ बुलाता हूँ और उसी की तरफ मेरा ठिकाना है।'' (अर–राद १३:३६)

(बी) तो (ऐ पैगम्बर!) तू उसी (दीन) की तरफ बुला, और जैसा तुझसे हुक्म किया गया है (उसी पर) कायम रह.....। (सूरतुश्शूरा ४२:१५)

६. अल्लाह के हुक्म का पालन करना और नमाज अदा करना पैगम्बर के लिए भी उतना ही बाध्यकारी है, जितना किसी अन्य ईमान वाले के लिए : ''तो तू अपने परवरदिगार के गुणों को याद कर और सज्द: करने वालों में से हो और तुम अपने परवरदिगार की अिबादत में लगे रहो यहाँ तक कि अन्तिम घड़ी आ जाय जिसका आना अटल है।'' (अल–हिज्र १५:९८, ९९)

७. पैगम्बर, अल्लाह के ईनाम और दण्ड के समान भागी हैं :

(ए) ''....चाहे तुम पर दया करे और चाहे तुम को सजा दे....।'' (बनी इसराइल १७:५४)

(बी) ''....और अल्लाह के साथ और किसी को अिबादत के लिए न गढ़ना नहीं तो तू फिटकारा हुआ धकिया कर दोजख में डाल दिया जायेगा। (बनी इसराइल १७:३९)

८. पैगम्बर मरणशील हैं और मृत्यु के बाद पुनर्जीवन प्राप्त करेंगे :
''(ऐ पैगम्बर!) तुमको भी मरना है और इनलोगों को भी मरना है। फिर कियामत के दिन तुम सब अपने परवरदिगार के सामने झगड़ोगे।'' (सुरतुज्जुमरि ३९:३०—३१)

९. पैगम्बर न अदृष्ट का जानकार और न यह जानने वाला है कि उसका भविष्य में क्या होगा :
''...और मैं नहीं जानता कि मेरे साथ क्या सुलूक होगा और तुम्हारे साथ (क्या सुलूक होगा।) मेरी तरफ जो वही (वह्य) उतरती है (यानी जो मुझको हुक्म आता है) मैं उसी की पैरवी करता हूँ और मेरा काम, खोलकर (अल्लाह के अजाब) का डर सुना देना है।'' (अल—अहकाफ ४६:९)

१०. मुहम्मद के मनुष्य होने को अल्लाह ऊँची आवाज में स्पष्टता के साथ संपुष्ट करता है।
''तो (ऐ पैगम्बर!) जान लो कि अल्लाह के सिवाय कोई अिबादत के काबिल नहीं और अपने पापों की क्षमा माँगते रहो और ईमानवाले मर्दों और (ईमान वाली) औरतों के लिए (भी बख्शिश) माँगो।'' (मुहम्मद ४७१९)

ईश—संदेश (वह्य) का उद्देश्य

मुहम्मद के मनुष्य होने के संबंध में इस वर्णन के बाद यह असंभव लगता है कि कोई आदमी अल्लाह होने का दावा करे, बल्कि अल्लाह के अधिकार—क्षेत्र का भी अतिक्रमण करे। यही जादू है, और ईश—संदेश का उद्देश्य किसी साधारण आदमी को अल्लाह का रसूल या मसीहा और सभी आदेश उसके नाम से घोषित करने का सम्बल प्रदान करता है। चूकि पैगम्बर या मसीहा की मध्यस्थता के बिना कोई व्यक्ति अल्लाह को न देख सकता है और न मिल सकता है, इसलिए पैगम्बर ही अल्लाह की श्रेणी प्राप्त कर लेता है और विश्वासियों द्वारा अल्लाह ही जैसा पूजित होने लगता है। कुरान के इन उद्धरणों पर ध्यान दीजिए और स्वयं सच्चाई देखिये :

मौलिक इस्लामी विश्वास

१. इस्लाम का मौलिक विश्वास ''शहादा'' है :
'' ला इलाह इल इल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह''

''अल्लाह के सिवाय और कोई पूज्य नहीं है और मुहम्मद उसके रसूल हैं।'' किसी संदेश की विषय—वस्तु की प्रधानता होती है न कि संदेश—वाहक की। यदि संदेश अपने आप में ठोस, सच्चा और स्वास्थ्यकर हो तो संदेश—वाहक में विश्वास लाने या न लाने का कोई माने—मतलब नहीं रह जाता है। लेकिन यह संदेश—वाहक के रूप में मुहम्मद पर लागू नहीं होता :

''जिन लोगों ने इनकार किया और पैगम्बर का हुक्म न माना (वे) उस दिन इच्छा करेंगे कि किसी तरह जमीन (फट जाती और वे उस) में समा जाते...।'' (अन—निसा ४:४२)

मुहम्मद और अल्लाहपन (ईश्वरत्व)

यदि आप न्याय के दिन के संकट से मुक्त होना चाहते हैं तो मुहम्मद की आज्ञा का पालन जरूरी है। सिर्फ अल्लाह में ईमान से आप की रक्षा न हो सकेगी स्पष्टत:, मुहम्मद को अल्लाह के अधिकार क्षेत्र में हिस्सेदारी है। अन्यथा मुहम्मद में अविश्वास घातक नहीं होता।

२. अल्लाह के हुक्म का पालन जितना जरूरी है उतना ही मुहम्मद के हुक्म का पालन भी जरूरी है।

(ए) ''(ऐ पैगम्बर! इन लोगों से) कह दो कि अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करो....।'' (आले इम्रान ३:१३२)

(बी) ''और अल्लाह और उसके रसूल का कहना मानो ताकि तुम पर दया की जाय। (आले इम्रान ३:१३२)

(सी) ''...और जो अल्लाह और उसके रसूल के हुक्म पर चलेगा उसको (अल्लाह) विहिश्त के बागों में दाखिल करेगा....।'' (अन—निसा ४:१३)

(डी) अल्लाह और रसूल की अमानत में खियानत न करो.....। (अल—अन्फाल ८:२७)

मुहम्मद और अल्लाह समान अधिकार क्षेत्र वाले

३. दृढ़तापूर्वक स्थापित करने के बाद कि अल्लाह लोगों की अपनी गल—शिरा से भी ज्यादा निकट है कुर्आन कहता है :

''ईमान वालों को अपनी जान से जियादः नबी से लगाव है....।'' (अल—अह्जाब ३३:६)

अब नबी और मुहम्मद समान विस्तार वाले क्षेत्र के बन गये।

मुहम्मद मानव—जाति के लिए दया

जिस प्रकार बाइबिल ने ईसा को मानव जाति का अनुग्रह बतलाया ताकि उनको ईश्वरीय स्तर मिल जाय उसी प्रकार कुर्आन ने मुहम्मद को सभी प्राणियों के लिए दया या वरदान कहा।

''और (ऐ पैगम्बर!) हमने तुमको दुनिया जहान के लोगों पर कृपा करके भेजा है।'' (अल—अंबिया २१:१०७)

मुहम्मद और अल्लाह समान सर्वसत्ताधिकारी

अब अल्लाह और मुहम्मद एक समान सर्वसत्ताधिकारी बन जाते हैं और साथ—साथ समान अधिकार के साथ हुक्म जारी करते हैं :

''और जब अल्लाह और उसका पैगम्बर कोई बात ठहरा दे तो किसी ईमान वाले मर्द या (ईमान वाली) औरत को हक नहीं कि अपने मामले में वह कोई अधिकार रखे और जिसने अल्लाह और उसके पैगम्बर का हुक्म नहीं माना, वह जाहिरा राह भूलकर भटक गया।'' (अल—अह्जाब ३३:३६)

मुहम्मद प्रतिमान (नमूना)

अल्लाह ईमानवालों को कहता है कि मुहम्मद उनके लिए व्यवहार के प्रतिमान हैं और उन्हें सभी मामलों में मुहम्मद का ही अनुकरण करना चाहिए :

''तुम्हारे लिए पैगम्बर की चाल सीखनी भली थी (यानी उसके लिए) जो अल्लाह की यानी आखिरत के दिन की आस रखता है....।'' (अल अह्जाब ३३:२१)

मुहम्मद और अदृष्ट

७. अब हम पाते है कि अल्लाह, मुहम्मद के साथ—साथ अदृष्ट का जानकार है यद्यपि पहले मुहम्मद को अदृष्ट का ज्ञान नहीं था। ''(वही) गैब (अदृष्ट) जानने वाला है और किसी पर अपने गैब को जाहिर नहीं करता। हाँ, जिस पैगम्बर को पसंद फरमाए तो उस (को गैब की बातें बता देता और उस) के....।'' (जिन्न ७२:२६,२७)

मुहम्मद और अल्लाह का अधिकार

८. स्वयं को ''आचरण का प्रतिमान'' की ऊँचाई तक उठाने और अल्लाह के साथ—साथ हुक्म देने और पालन किये जाने के अधिकार को प्राप्त कर लेने के बाद, मुहम्मद अब अल्लाह के साथ—साथ अल्लाह के अधिकार का इस्तेमाल शुरू कर देते हैं : ''जिन मुशरिकों के साथ तुम (मुसलमानों) ने (सुलह का) अहद कर रखा था अल्लाह और उसके पैगम्बर की तरफ से उनको (अब साफ) जवाब है। और हज्जे—अकबर (बड़े—हज्ज) के दिन अल्लाह और उसके पैगम्बर की तरफ से लोगों को मुनादी की जाती है कि अल्लाह और उसका पैगम्बर मुशरिकों (के प्रति जिम्मेदारियों) से अलग है।'' (अत—तौबा ९:१,३)

आरम्भ में मुहम्मद में मध्यस्थता की शक्ति नहीं थी :

(ए) (ऐ पैगम्बर!) तुम इनके हक में माफी की दुआ करो या न करो (सब बेकार), अगर तुम सत्तर दफे भी इनके लिए माफी माँगो तो भी अल्लाह हरगिज इनको क्षमा नहीं करेगा....।'' (अत—तौबा ९:८०)

(बी) ''तू क्या जाने वह इंसाफ का दिन क्या चीज है। जिस दिन कोई शख्स किसी शख्स को कुछ फायदा नहीं पहुँचा सकेगा। और हुकूमत उस दिन अल्लाह ही की होगी। (अल इन्फितार ८२:१८—१९)

अब परिस्थिति बदलती है; पैगम्बर का राजनीतिक शक्ति के साथ अल्लाहनपन (दैवी शक्ति) का दावा बढ़ता जाता है :

बेशक यह (कुर्आन) एक प्रतिष्ठित फिरिश्ते का पैगाम है, शक्तिवाला और अर्श के मालिक (अल्लाह) के नजदीक उसका बड़ा रुतबा है, असरदार और अमानतदार (भरोसेवाला) (सुरतुत्तकवीरि ८१:१९—२१)

पैगम्बर में मध्यस्थता की शक्ति का मौलिक मुस्लिम विश्वास इन्हीं आयतों पर आधारित है। उनका विश्वास है कि न्याय के दिन मुहम्मद अल्लाह के साथ न्यायाधीश के आसन पर विराजमान होंगे। वह अल्लाह के दाहिनी ओर बैठेंगे और पैगम्बर की सिफारिश अल्लाह के लिए बाध्यकारी होगी।

अल्लाह और फिरिश्ते मुहम्मद की पूजा करते हैं

११. क्रमशः बदलती परिस्थिति अब उलट जाती है :

''अल्लाह और उसके फिरिश्ते पैगम्बर पर रहमत भेजते रहते हैं। (सो) ऐ मुसलमानों! (तुम भी पैगम्बर पर) रहमत और सलाम भेजते रहो। (अल—अह्जाब ३३:५६)

मुसलमान मुहम्मद की पूजा करते हैं

सलाम अर्थात शान्ति के लिए प्रार्थना और दरूद अर्थात मुहम्मद के नाम के उच्चारण का पाठ, ये तरीके मुहम्मद की पूजा और भक्ति के लिए खास हैं। ये नमाज या सलात नाम से ज्ञात इस्लामी पूजा विधि के अभिन्न भाग हैं। इस प्रकार न केवल अल्लाह और फिरिश्ते, बल्कि मुसलमान भी प्रकट या परोक्ष ढंग से पैगम्बर की पूजा करते हैं। भारत, पाकिस्तान और बंगलादेश के मुसलमान मुहम्मद की बड़ाई करने और उनकी पूजा में भजन (कव्वाली) गाने हेतु विशेष आयोजन करते हैं। यदि यह पैगम्बर पूजा नहीं है तो फिर क्या है? यही मुहम्मद की द्विविधता है जिसका मैंने पहले उल्लेख किया है। मुसलमान किस प्रकार अपने को एकेश्वरवादी कह सकते हैं ?

वास्तव में मुहम्मद ने ही पैगम्बर पूजा को अपने जीवन काल में प्रोत्साहित किया था। उन्होंने अब्राहम (इब्राहिम), जैकब (याकूब), जोसेफ (यूसुफ), मोसेस (मूसा) और जेसस (ईसा) के विषय में बतलाया था कि उन सबमें चमत्कार दिखाने की सामर्थ्य थी, लेकिन जब उनके समकालीन लोगों ने उनसे अपने सामने कोई चमत्कार दिखाने की माँग की, ताकि वे बिना किसी द्विविधा के उनमें विश्वास कर सकें, तब वे वैसा नहीं कर सके। कुर्आन इस तथ्य को बार—बार सत्यापित करता है। फिर भी उन्होंने अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ पैगम्बर होने का दावा किया और अपने अनुयायियों को अपनी अलौकिक शक्ति में विश्वास करने हेतु प्रोत्साहित किया। इतिहास ने इसे प्रमाणित किया है कि जब भी उनका मुंडन होता था उनके अनुयायी उनके बाल और नाखून, दिव्य स्मृति—चिन्ह के रूप में, जमा करने हेतु एक पर एक उमड़ पड़ते थे। वे उनके थूक और हाथ धोये पानी को भी जमा करते थे। क्योंकि उन्हें पैगम्बर

के आरोग्य और मुक्ति के चमत्कारी गुणों में विश्वास था। नवजात शिशु के अवचेतन मष्तिष्क पर अपनी दिव्यता के स्थाई छाप के लिए उन्होंने बच्चे के जन्म के लगभग तुरंत बाद उसके कान में अल्लाह के रसूल के रूप में अपने नाम के उच्चरण के नियम—पालन का आधिकारिक आदेश जारी किया। सीखने की प्रक्रिया, जिसे दिमाग में बैठाना कहते हैं, का आविष्कार कहा जाता है लॉरेन्ज द्वारा १९३५ में किया गया था; लेकिन पैगम्बर इसे चौदह सौ वर्ष पहले ही जानते थे। मष्तिष्क पर छाप एक तरह का मष्तिष्क—प्रच्छालन है। यदि जन्म के समय बत्तख और हंस के बच्चों में विश्वास पैदा करा दिया जाय कि मनुष्य उनका पिता है तब वे उसके बच्चे के समान अनुकरण करने लगेंगे। विश्वास एक किला के समान होता है जिसे संसार की वास्तविकता रूपी कठोरता से स्वयं को अलग रखने के लिए अपने चारों और निर्मित किया जाता है। इसकी नींव जितनी मजबूत होती है मनुष्य अपने को उतना ही अधिक सुरक्षित अनुभव करता है। विश्वास के किला को शक्ति, चमत्कार के किस्सों से मिलती है जिसे मसीहा या पैगम्बर द्वारा किये जाने को प्रसिद्ध बनाया हुआ होता है। पैगम्बर द्वारा प्रदर्शित चमत्कारों को जितना ही अविश्वसनीय बताया जाता है, विश्वासियों के लिए उतनी ही उसकी दिव्यता बढ़ती है और विश्वासियों के लिए मुक्ति की उतनी ही अधिक संभावना सुनिश्चित होती है।

हदीस, यहूदी और राजनीतिक अवसरवादी

आरम्भ में इस्लाम एक साधारण, व्यावहारिक और सैद्धान्तिक पेचीदगियों से मुक्त मत था। इसकी शुद्धता को यहूदी मुनाफिकों द्वारा दूषित किया गया जिन्होंने पैगम्बर के हदीसों के नाम पर असंख्य मनगढंत हदीसों की रचना की। उन्होंने पराजय के अपमान का बदला लेने के लिए वैसा किया। पैगम्बर से जुड़े हदीस को आकार देने में इनका बड़ा योगदान थां इसे इस्लाम का मौखिक कानून कहा गया। इसका कुर्आन के साथ वही संबंध है जो मिसना और जेमारा का ओल्ड टेस्मामेन्ट के साथ है। उम्मैया और अब्बास वंश के राजनीतिक अवसरवादियों ने भी अपने लौकिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक मनगढंत हदीसों को जोड़ा। इतिहास इसे प्रमाणित करता है कि इब्न

अबी—अवजा ने ४००० झूठे हदीसों को गढ़ना स्वीकार किया था और इस ईश—निन्दा अपराध के लिए उसे ७७२ ई० में, कुफा में, मृत्यु दण्ड दिया गया था। पर अल—बुखारी की भक्ति को चुनौती देना निश्चय ही मुश्किल है जिसने ८७० ई० में मुहम्मद की हदीसों का प्रथम संकलन तैयार किया था, लेकिन उन्होंने इसे पैगम्बर की मृत्यु के २३८ वर्ष बाद किया। हदीस का अर्थ है पैगम्बर के बोले हुए शब्द। संसार में सर्वाधिक सावधानी के बावजूद बोले हुए शब्द सम्भवत: अपनी मौलिकता, उद्देश्य और अर्थ इतने लम्बे समय बाद खो देते हैं। ईश—संदेश प्रभुत्व—आग्रह का सर्वाधिक प्रभावकारी हथियार होता है क्योंकि यह एक साधारण मनुष्य को भगवान का स्तर प्रदान कर देता है और उसे सम्पूर्ण आज्ञा—पालन और पूजा का अधिकारी बना देता है। चूकि भगवान को न देखा जा सकता है और न सम्पर्क किया जा सकता है इसलिए संदेश—वाहक ही ईश्वरीय घोषणाओं का स्वामी होता है और भगवान स्वयं विस्मृति में खिसक जाता है। यह कोई आश्चर्यजनक नहीं है कि मुसलमान विश्वास करते हैं कि अल्लाह की तरह ही मुहम्मद के भी निन्यानबे पवित्र नाम और निन्यानबे ईश्वरीय गुण हैं। अल्लाह और फिरिश्ते मुहम्मद पर रहमत भेजते हैं, जिनकी मध्यस्थता की शक्ति अल्लाह की न्यायिक संवेदना को नियंत्रित करती है। यही कारण है कि इस्लाम की नींव मुहम्मद के प्रति प्रेम पर आधारित है न कि अल्लाह के समक्ष आत्म समर्पण पर। अल्लाह तो पैगम्बर के लिए मधुर शब्द मात्र है। क्या मुहम्मद अल्लाह थे? कुर्आन के विषय में कुछ भी जानने वाले मुसलमान वैसा नहीं सोचते। उनके लिए वास्तव में वैसा समझना 'शिर्क' है, अर्थात् सबसे बड़ा पाप। लेकिन उनकी संख्या बहुत कम है। नासमझी लोक स्तर पर है जिसमें 95% मुसलमान शामिल हैं।

मुहम्मद मनुष्य थे और इसको प्रमाणित करने के लिए अनेक साक्ष्य हैं :

१. सबसे पहले कुर्आन उन्हें मनुष्य रेखांकित करता है।

२. वह अन्य किसी मनुष्य के समान पैदा हुए और वैसे ही किसी अन्य मनुष्य की तरह रहे और मरे भी।

(ए) वह खाते और पीते थे, टहलते, बात करते और सोते थे; बीमार पड़ते और उपचार की माँग करते थे और अन्य मनुष्यों की तरह नित्य क्रिया करते थे।

(बी) वह यौनाचार की चाह रखते थे जो सभी मनुष्यों का स्वभाव है। उनको बारह पत्नियों से अधिक का होना औरतों के लिए उनके स्वाभाविक अनुराग को दर्शाता है।

उनकी पत्नियाँ उनको अल्लाह के समान नहीं समझती थीं। सच्चाई यह है कि उनमें से कुछ उनसे बहुत कर्कश व्यवहार करती थीं। उनकी पत्तियों की उनसे गंदी जबान की कुर्आन चर्चा करता है। इतिहास ने विशेष रूप से उनकी पत्नी हफ्सा, जो महान उमर की बेटी थी, के कठोर व्यवहार को दर्ज किया है।

३. शादी को राजनीतिक शक्ति के हथियार—रूप में इस्तेमाल करना, संसार के राजकुमारों की पुरानी प्रथा रही है। पैगम्बर इसके अपवाद नहीं थे। अबू—बक्र और उमर उनके स्वसुर थे और उस्मान और अली उनके दामाद। यही चार व्यक्ति थे, जिन्होंने इस्लाम को दृढ़ता से स्थापित किया जो पैगम्बर की मृत्यु के बाद समाप्त होने की स्थिति में पहुँच गया था। उनकी पत्नियों में एक इस्लाम के सबसे कट्टर शत्रु अबू सूफयान की पुत्री भी थी।

४. पैगम्बर ने (जजिया) कर लगाया जो लूट का एक रूप है, प्रभुत्व का औजार जैसा। इसका असली उद्देश्य सभी गैर मुसलमानों को अपने अधीन, कर चुकाने वालों के स्तर तक नीचे लाना था। इसको लागू करने के लिए उसने जेहाद या धर्मयुद्ध के सिद्धांत को प्रस्तुत किया और लूट के माल को अल्लाह का आशीर्वाद कह कर अनुयायियों को हत्या करने के लिए उकसाया। मक्का के कुरैश लोगों के शान्तिपूर्ण व्यापारिक काफिलों को लूटना, जिसके कारण मुहम्मद का राजनीतिक आधिपत्य स्थापित कराने वाली लड़ाइयाँ हुईं, इस सिद्धान्त का स्वाभाविक परिणाम था। लूट की खुशी के लिए हत्या करना और लोगों को विधवा, अनाथ और अपंग बना देना क्या सचमुच में अल्लाह के दिव्य गुणों के अनुकूल है? लूट और हत्या को पवित्र कहना क्या दिव्य है ? लोगों की सामूहिक हत्या की स्वीकृति देना, वह भी मात्र इस बात के लिए कि वे अल्लाह में विश्वास नहीं करते, किस प्रकार के अल्लाह का काम हो सकता है? यदि उसमें विश्वास करना इतना ही महत्वपूर्ण था, तो उसे वैसी ही मनुष्य

जाति बनाना चाहिए था। क्या अल्लाह सचमुच में अपना आधिपत्य स्थापित करने हेतु लड़ाइयाँ कराना चाहता है? यह बिल्कुल ही अल्लाह का काम नहीं हो सकता है, जो कि स्वयं में ही सर्वशक्तिमान है।

५. पैगम्बर न सिर्फ मनुष्य पैदा हुए थे, अपितु मनुष्य ही जिये और मनुष्य ही मरे भी। अपने जीवन में भय और कृपा की मानव–वृत्ति के कर्ता थे।

(ए) चाचा अबू–तालिब ने ६१९ ई० में अपनी मृत्यु तक उनका संरक्षण किया। असुरक्षा की भावना के कारण वे ६२० ई० में मक्का छोड़ कर ताइफ चले गये, जो मक्का से करीब ६० मी० पूरब एक छोटा शहर था। ताइफ के लोगों के विरोधी बन जाने के कारण भय से वे मक्का वापस आ गये। एक साल तक अपनी जान के लिए भयभीत मुहम्मद को देखने के लिए ६२२ ई० में मदीना से करीब ७३ लोग आये और मदीना चल कर वहीं अपना घर बनाने के लिए आमंत्रित किया। इससे राहत अनुभव करने के साथ ही मुहम्मद ने उनसे पूछा कि क्या आप शत्रुओं से मेरी रक्षा उसी उत्साह से करेंगे जिस उत्साह से अपने परिवार के सदस्यों की करते हैं? उन्होंने वैसा करने की शपथ खाई और पूछा कि यदि आप की रक्षा करने में हम मारे जाते हैं तो हमें क्या पुरस्कार मिलेगा? उनका उत्तर था – ''जन्नत''।

यह स्पष्ट है कि मृत्यु का भय उनका भी, उतना ही पीड़ा के साथ पीछा करता था जितनी और मनुष्यों का। यह विस्मयकारी है कि जन्नत का पुरस्कार, जिसे उन्होंने अनुयायियों को प्रदान करने की पेशकश की थी, स्वंय उसके लिए आश्वस्त होकर खुशी–खुशी निर्भयता से जीवन व्यतीत न कर सके और न अल्लाह ही ने मक्का के अभक्त लोगों से उनकी सुरक्षा की चिन्ता की। शत्रुता के बढ़ते ही उन्हें सितम्बर ६२२ ई० में भाग कर मदीना जाना पड़ा।

(बी) उनकी मृत्यु भी उन्हें मनुष्य होने की ओर इंगित करती है। मृत्यु के कुछ वर्ष पूर्व, उनके विचार से, खैबर के लोगों द्वारा उन्हें विषैला मांस दिया गया था। उससे असामान्य बुखार और मूर्छा का दौरा शुरू हो गया। उनकी सबसे कम उम्र की पत्नी आयशा को कहा बताया जाता है कि पैगम्बर आधी रात को चुपचाप उठकर एक कब्रगाह को जाते थे; वहाँ

मृतकों से क्षमा माँगते थे, उनके लिए प्रार्थना करते थे और उनकी मृत्यु के लिए सांत्वना देते थे। उनकी लम्बी पीड़ा का अन्त तभी हो सका जब वे तिरसठ वर्ष की उम्र में ७ जून ६३२ ई० को संसार से विदा हुए।

चूकि पैगम्बर यह नहीं बता सके कि जो मांस उनको परोसा गया था वह विषैला था, इससे यह साफ है कि मुसलमानों के प्रचलित विश्वास के उलट उनको अदृष्ट का ज्ञान नहीं था।

विषपान के प्रभाव की सामान्य ढंग की व्यथा से वह पीड़ित थे और अल्लाह ने उनकी पीड़ा कम करने के लिए कुछ भी नहीं किया। अल्लाह और मुहम्मद के बीच के विशेष प्रेम–संबंधों की बड़ी–बड़ी बातों का इससे खुलासा हो जाता है। कोई कभी भी अपने प्रिय की लम्बी व्यथा को प्रसन्नता से नहीं देख सकता। इसे अल्लाह ने कैसे देखा?

सच्चाई यह है कि मुहम्मद मनुष्य थे। लेकिन वह किस प्रकार के मनुष्य थे? यही वास्तविक विषय है। अभी तक मैंने उनकी चर्चा ईश–संदेश (वह्य) के संबंध में की है, अब मैं मनुष्य के रूप में उनका मूल्यांकन करूँगा। पाठक को कुछ विरोधाभासों को स्वीकार करने हेतु तैयार रहना चाहिए जो ईश्वरत्व और मनुष्यत्व के भेद से उत्पन्न होते हैं:

मुहम्मद का मूल्यांकन

दुर्भाग्य से, पश्चिम में, लम्बे समय तक चलने वाले क्रूसेड्स (धर्मयुद्ध) और ईसाई गिरजों के प्रचार के परिणाम स्वरूप मुहम्मद के नाम को विकृत कर महौन्ड अर्थात दानव, और कुर्आन को ''शैतान की वाणी'' नाम रख दिया गया है।

मुहम्मद के गुण

यह पैगम्बर के संदर्भ में शर्मनाक और कुत्सित सोच का ढंग है। वह सच्चा, सही और ईमानदार थे। मनुष्यता के रूप में वे गुणों का समुच्चय थे। किसी एक व्यक्ति में बिरले ही यह मिलता है। एक साथ वह विचारक और व्यापारी, सेनाध्यक्ष और न्यायाधीश, उपदेशक और उपकारी, साधू और सिपाही, शासक और सलाहकार और प्रिय मित्र और पिता थे। पिता के प्यार से वंचित बचपन ने अनाथों और विधवाओं के प्रति उनके मन में करुणा के

अपार भाव भर दिये थे। उनके कानून इसमें तिल भर भी संदेह की जगह नहीं छोड़ते हैं। सर्वसाधारण की देखभाल की उनकी समाजवादी नजरिया को लोगों के स्वामित्व के असीमित वैधानिक अधिकार के साथ ईमानदारी से संतुलित किया गया। यद्यपि वे दयालु थे, फिर भी उनके निर्णय स्वाभाविक न्याय को प्रतिबिम्बित करते थे और मित्र और शत्रु में कोई भेद नहीं करते थे। उत्सर्जित मुस्कान के धनी, मित्र बनाने में अचूक थे। व्यावहारिक तौर पर पूरे अरब का शासनाध्यक्ष होने के बाद भी वे सामान्य वृत्ति के स्तर पर रहते थे, उनका भोजन साधारण था, वस्त्र आडम्बरहीन था और यद्यपि उनकी सभी पत्नियों के लिए अलग झोपड़ी थी उनकी अपनी कोई झोपड़ी नहीं थी।

पैगम्बर की वास्तविक शक्ति

यद्यपि मुसलमान पैगम्बर की ईश्वरीय शक्ति का ही गीत गाते हैं, पर उनकी वास्तविक शक्ति उनकी व्यावहारिक योग्यता में निहित है। उनकी बहादुरी और जुड़ाव के कारण सभी महत्वपूर्ण लड़ाइयों में उनकी जीत हुई, उनके निश्चय अटल थे, उनका साहस सभी विपत्तियों को चुनौती देने वाला था, सन्धियों के सम्मान की उनकी इच्छा का आदर किया जाता था और उनके वचन को उनके शत्रुओं द्वारा भी अनुबन्ध–पत्र माना जाता था।

पैगम्बर की सच्ची और सर्वाधिक अर्थपूर्ण उपलब्धि, सम्मान के मूल्यों और एकता की भावना को, न केवल अपने वंशजों बल्कि अनुयायियों तक में हस्तान्तरित करने में है। उनके दौहित्र हुसैन को ही उदाहरण स्वरूप लें।

हुसैन इब्न अली

अपने उत्तराधिकार को पाने के लिए जो उनकी समझ से उनका वैधानिक अधिकार था, मुकाबला हेतु दृढ़ता से उठ खड़े हुए। कर्बला में दुश्मनों के हाथों उनके पूरे परिवार का सफाया हो जाने के बाद भी उन्होंने दया की भीख नहीं माँगी और न बचने का ही प्रयास किया। उन्होंने अपने नाना की सच्ची परम्परा का पालन किया; अपना भाला उठाया, अपने (डुलडुल) को सरपट दौड़ाया और कुरान की आयतों का पाठ करते हुए, एक सच्चे मुजाहिद की श्रेणी और सम्मान के साथ दुश्मन की कतार पर वार किया। कल्पना कीजिये कि कई हजार शत्रुओं के सामने एक आदमी खड़ा है। न तो शत्रुओं को शाप दिया

और न दर्द से चीख निकाली। वह, दाएँ–बाएँ, आगे और पीछे कटार भोंके जाते रहने पर भी अल्लाह की बड़ाई करते रहे। यह आदमी, हुसैन इब्न अली ने अपने बिंधे हुए शरीर से खून की अन्तिम बूँद निकलने तक, निःसम्बलता का कोई चिन्ह प्रकट नहीं होने दिया। कोई ताज्जुब नहीं कि बहादुरी की गीत गाने वाले इरानियों ने हुसैन के गुणों का सम्मान करने हेतु ही शिया पंथ को स्वीकारा। वास्तव में हुसैन की पूजा के लिए शिया होना ही आवश्यक नहीं है बल्कि ऐसे बहुत लोग हैं जो एक महान आदर्श के रूप में उनकी प्रशंसा करते हैं।

मुहम्मद द्वारा प्रेरित ये व्यावहारिक गुण सिर्फ उनके पारिवारिक सदस्यों तक सीमित नहीं थे बल्कि उनके अनुयायियों ने भी इन्हें उसी उत्साह से अपनाया था। अबू–बक्र की सच्चाई, उमर की महानता, उस्मान की उदारता और अली की पुण्यशीलता को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। मुहम्मद से प्राप्त वास्तविक उत्तरदान चरित्र की महानता ही थी जिसने उनके अनुयायियों को उस योग्य बना दिया जिसके कारण उनकी मृत्यु के बीस वर्ष के अन्दर ही वैजेन्टाइन और परसिया जैसे साम्राज्यों को हरा कर उन्होंने एक हजार वर्षों तक पृथ्वी पर अपना प्रभुत्व कायम रखा। इस प्रकार पैगम्बर ने एक नई संस्कृति की आधारशिला रखी जो पुण्यशीलता, सम्मान और ईमानदारी पर आधारित होने के कारण आधुनिक सभ्यता से अनेक मामलों में अधिक विकसित थी। यह मुहम्मद की व्यक्तिगत उपलब्धि थी, इसमें अल्लाह की कोई हिस्सेदारी नहीं थी।

पैगम्बर सुधारक थे। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि उन्होंने ईश–संदेश की मुक्ति का उपयोग सही लक्ष्य की प्राप्ति हेतु ही किया था, लेकिन यह युक्ति उचित मार्ग–निर्धारण में लगाये जाने की तुलना में, मनुष्य को, आत्मोन्नति की प्रेरणा द्वारा, भगवान बनाने के ज्यादा अनुकूल थी। यही कारण है कि दुनिया भर के मुसलमान पैगम्बर की पूजा–अराधना करते हैं, लेकिन इस सच्चाई के बावजूद कि उन्होंने कार्यों की पुण्यात्मकता पर ही जोर दिया और व्यवहार के लिए अपने अनुयायियों को नियमों का संग्रह प्रदान किया, वे उनकी शिक्षाओं को सिर्फ मौखिक आदर ही देते हैं।

7.

धर्मान्धता की विभीषिकाएँ

धर्मान्धता या रूढ़िवादिता ईश–संदेश का चरम लक्ष्य है जो लोगों की भय एवं कृपा की आन्तरिक प्रवृत्ति के अतिशय शोषण द्वारा मस्तिष्क प्रच्छालन का काम करती है। पैगम्बर या मसीहा अपनी पूजा कराना चाहता है, लेकिन पूजा आत्मदमन का निम्नतम रूप है, इसलिए स्वतंत्रता प्रिय मनुष्य की प्रकृति के अनुकूल नहीं है।

पैगम्बर या मसीहा अपने अनुयायियों को धर्मान्ध बना कर ही इस लक्ष्य को पा सकता है। यही कारण है कि कोई भी निश्चयपूर्वक कह सकता है कि ईश–संदेश (वहय) मार्ग–प्रदर्शन का नहीं बल्कि मार्ग–भ्रष्टता का साधन है और मनुष्य को सही गन्तव्य से विचलित कर विपरीत दिशा की ओर ले जाता है।

धर्मान्धता की परिभाषा

धर्मान्धता क्या है? यह मन की वह अवस्था है जब मनुष्य की मानसिक भव्यता और कारण आधारित वैचारिक सोच की परम श्रेष्ठता को विश्वास की प्रचण्डता के कारण पूरी तरह ग्रहण लग जाता है। अपने बे–तुके मजहबी मूल्यों को भी चुनौती देने वाली प्रत्येक चीज से वह घृणा करने लगता है। ऐसा इसलिए कि उसके व्यक्तित्व के तत्व, जो भय के दबाव से अस्थिर बने होते हैं, विश्वास के मजबूत सूत्र से ही एक साथ जुड़े रहते हैं। इसलिए विश्वास का विरोध, उसके व्यक्तित्व के अस्तित्व के लिए चुनौती के समान है, जिसकी रक्षा वह हर कीमत पर करना चाहता है। वास्तविकता से बचने के उद्देश्य से यह स्वेच्छा से गूँगा–बहरा बनने की प्रक्रिया से गुजरने के समान है। विश्वास का उद्देश्य वास्तविकता की अति कठोरता से सुरक्षा प्रदान करना है, न कि वास्तविकता से। धूप का चश्मा धूप की चमक से आँखो की सुरक्षा और देखने में सुविधा प्रदान करता है। यह देखने वाले के लिए अच्छा है। लेकिन जब

यही चश्मा दर्शक की आँख पर स्थाई रूप से चढ़ा दिया जाता है तब वह सत्य की परख से वंचित कर देता है। जब विश्वास इस प्रकार का अत्यधिक भ्रष्ट स्वरूप ग्रहण करता है तब वह विवेक पर अंकुश लगा कर निर्णयात्मक बुद्धि को डगमग कर देता है और जीवन को निरर्थकता की डगर पर ले जाता है। अज्ञानता के परम सुख में सराबोर जीवन सम्मोहक लग सकता है, लेकिन किसी के लिए भी झूठे विश्वासों से मुक्त होना आवश्यक होता है, क्योंकि यह दुर्बल करने वाला, स्तर गिराने वाला और विनाश करने वाला होता है।

झूठी आशा बाँधना आनन्द और अनुग्रह का विषय नहीं, यह तो अनिष्ट और अभाग्य का स्रोत है। ईश–संदेश सबसे बड़ा छल है क्योंकि इसकी उद्घोषणा की शक्ति पैगम्बर या मसीहा के अति आडम्बरपूर्ण व्यक्तित्व पर आधारित होती है, जो किसी अन्य मनुष्य की तरह जीता या मरता है और स्वयं मनुष्य की भय और कृपा की प्रवृत्ति से ग्रसित होता है। फिर भी कारण आधारित सीमा के बाहर दिव्यता का दावा करता है।

मस्तिष्क–प्रच्छालन, किसी व्यक्ति को विशेष आचरण अपनाने के लिए जिसे वह सामान्य परिस्थिति में नहीं कर सकता है, प्रेरित करने हेतु उसकी तार्किक बुद्धि को सीमित करने की क्रिया है। एक धर्मान्ध या मस्तिष्क प्रच्छालित व्यक्ति अपनी इच्छा खो देता है और धागे से नियन्त्रित गुड़िया बन जाता है। उसका सम्पूर्ण बौद्धिक और व्यावहारिक जीवन गुड़िया मालिक द्वारा संचालित होता है जो सामान्यत: मसीहा या उसका लेफ्टिनेन्ट (सह–अधिकारी) होता है। वह रोबोट बन जाता है और अपने ऑपरेटर के दुष्टता पूर्ण और घृणित आदेशों का भी बड़ी खुशी से पालन करने में तत्पर रहता है। क्रुसेड्स और आधुनिक इतिहास से मुझे कुछ उदाहरण यह दिखाने के लिए देने दीजिए कि धर्मान्धता घृणा का ज्वालामुखी होता है। यह निर्णयात्मक शुद्ध बुद्धि का पूर्ण निषेध है। वास्तव में, यह मानवता का उलटन है। जेरूसलम इस प्रसंग का अच्छा दृष्टांत बन सकता है :

जेरूसलम को अपने अधीन करने के बाद डेविड (दाऊद) ने उसकी मोहकता बढ़ाकर यहूदियों के लड़ाकू भगवान यहवे को मोहित करने और उसकी दुल्हन के रूप में उसकी पूजा करने की दिशा में आगे बढ़ा। यहवे का

कठोर हृदय जो कड़ाई के लिए जाना जाता था, डेविड द्वारा पेटी को इस नगर की ओर मोड़ते ही कोमलता की तरंगों में समाहित हो गया। यह आश्वस्त होने के लिए कि पिटारी को एक पुण्यस्थल से दूसरे पुण्यस्थल तक घूम–घूम कर न रहना पड़े, उसने माउन्ट मोरिया या टेम्पुल माउन्ट को स्थाई निवास हेतु चुना। यहूदियों ने अपने अकाट्य मत की माँग के अधीन, यह सदा विश्वास किया कि यही वह स्थान है जहाँ यह्वे की खुशी पाने के लिए अब्राहम ने अपने ही पुत्र की बलि की वेदी तैयार की थी; यद्यपि इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

सोलोमन (सुलेमान) का मंदिर

यहीं डेविड का पुत्र सोलोमन ने ९५७ ई० पू० पहला मंदिर बनवाया था। मंदिर पूरब रुख का था। यह आयताकार था। इसमें तीन कमरे थे और प्रत्येक की चौड़ाई समान थी। इनमें एक, जिसमें पिटारी रखा था, को संसार का पवित्रतम स्थान का दर्जा प्राप्त था क्योंकि यह दैव उपस्थिति से युक्त था। इसमें सर्वोच्च पुरोहित के सिवाय और कोई प्रवेश नहीं कर सकता था और उसका विशेषाधिकार भी मात्र ''योम किप्पूर'' अर्थात् प्रायश्चित के दिन तक सीमित था। यह यहूदी मत का केन्द्र बना और यहूदी जीवन को वैसे ही नियन्त्रित किया जैसा स्टीयरिंग मोटरकार का या हृदय, रक्त संचालन का करता है।

इसकी आध्यात्मिक सुन्दरता और पार्थिक प्रताप के बावजूद, इसके दुल्हा यह्वे ने अपवित्रीकरण और विनाश के संत्रास से इसकी कभी रक्षा नहीं की, जिसे इसे अनेक बार झेलना पड़ा। हर बार तबाही की लौ ने जेरूसलम को लपेटा। यहूदी पुरोहित रैबिज, जिनका रहन–सहन, प्रतिष्ठा और अधिकार मत की पकड़ पर निर्भर था, यह्वे के परित्याग के औचित्य को सिद्ध किया और अपने प्रियजनों की हत्या, बलात्कार और लूट के लिए लोगों के पाप को जिम्मेवार बताया। रोम के मूर्तिपूजकों ने भी रोम के विध्वंस का वही कारण बताया था। उन्होंने घोषित किया कि नगर की पराजय इसलिए हुई क्योंकि ईसाइयत स्वीकार कर लोगों ने अपने देवताओं के साथ गद्दारी की। मत की सनक की कोई सीमा नहीं है। 'कारण' के बलशाली वाण से बचने के लिए लोग मत की ढाल के पीछे छिपकर कुछ भी करते और कहते हैं।

सोलोमन (सुलेमान) और उसकी सुन्दरियाँ

मंदिर सोलोमन के महल का विस्तार था जो उसकी सात सौ पत्नियों और तीन सौ रखैलों का निवास था। ये अपनी विदेशी देवताओं की मूर्तियों के साथ रहती थीं जिनके विषय में समझा जाता है कि सोलोमन भी उनकी पूजा किया करता था। ऐसा वह विदेशी सुंदरियों का दिल जीतने के लिए करता था। फिर भी मंदिर के प्रति श्रद्धा कल्पनातीत ऊँचाई तक बढ़ी।

ईसा और मंदिर

ईसा के विषय में कहा जाता है कि उन्होंने भी इस मंदिर में प्रवचन किया था। मुझे यह विश्वास करना कठिन लगता है कि यहूदियों ने अपने पवित्रतम धर्मस्थल का उपयोग ईश–निन्दा के प्रवचन के लिए करने दिया होगा, जिसने उन्हें उत्तेजित किया और जो ईसा की शूली का कारण बना। ईसाइयों के लिए भी जेरूसलम समान सम्मोहक था क्योंकि ईसा का जन्म भी इसी के आसपास, या बेथलहम में हुआ था। यहीं खेलकूद में उनका बचपन बीता था और यहीं ''ईश्वरीय कृपा द्वारा मनुष्य के पाप मिटाने और विश्वासियों को पुनर्जीवन का अवसर प्रदान करने हेतु'' उन्हें शूली पर चढ़ाया गया था।

इस्लाम और मंदिर

मुसलमान भी जेरूसलम की पवित्रता से वैसे ही अनुप्राणित थे। यहूदियों को रिझाने के लिए पैगम्बर मुहम्मद ने इसे किब्ला बनाया था अर्थात् अपने अनुयायियों के नमाज की दिशा। पैगम्बर, जन्नत की यात्रा के क्रम में जहाँ वे अल्लाह से मिलने सशरीर गये थे, मस्जिदे अक्सा भी गये। ''...अपने बन्दे को मस्जिदुल हराम (यानी खाना काबा) से मस्जिदे अक्सा (यानी बैतुल मक्दिस) तक, जिसके चारो तरफ हमने बरकतें रखी हैं, ले गया।'' (सूरःबनी इस्राइल १७:१)

यह बाद का मस्जिद जिसके पास बाद में इस्लाम का अल–अक्सा मस्जिद बना, उस समय अर्थात् पैगम्बर की यात्रा के समय अस्तित्व में नहीं था, उल्लिखित मस्जिद से तात्पर्य दूसरे मंदिर के अवशेष से था। यह सोलोमन के आरम्भिक (पहला) मंदिर के ध्वंसावशेष पर बना था, जिसे ५८६

ई०पू० और ७०ई० के बीच कम से कम दो बार सम्पूर्ण विध्वंस झेलना पड़ा था। फिर भी, यहूदियों की अभक्ति, मूर्तिपूजा और अनिष्ठा का स्मरण कराने हेतु सदा व्यग्र रहने वाले यह्वे की चमत्कारी शक्ति को प्रकट करते रहने के लिए दूसरे मंदिर की पश्चिमी दीवाल का एक भाग अखण्डित बचा था। जब एकरारनामा भंग करने के कारण यह्वे ने यहूदियों को भयानक तिरस्कार के अधीन किया, तब अल्लाह ने भी इस मनोवृति को स्वीकार कर यहूदी मंदिर के सटे, ६९१ई० में, अल—अक्सा मस्जिद बना कर, यहूदियों के अपमान को बढ़ाने के लिए अपने अनुयायियों को उत्साहित किया। चट्टान के गुम्बद की चमक ने यहूदी दर्प—हनन के स्थाई चिन्ह का काम किया।

क्रूसेड्स की शुरुआत

यहूदियों का जेरूसलम नगर यद्यपि मानव इतिहास में सर्वोच्च सम्मान के प्रतीक के रूप में उभरा, यहूदी स्वयं अपमान के निम्नतम स्तर पर जा गिरे। ऐसा इसलिए हुआ कि ईसाइयों ने उन्हें अपने स्वामी का हत्यारा और मुसलमानों ने पैगम्बर में ईमान नहीं लाने के कारण अल्लाह द्वारा निन्दित समझा। इससे विचित्र स्थिति बनी। ईसाइयों और मुसलमानों का जेरूसलम के प्रति प्रेम, यहूदियों से घृणा के विलोमानुपात में बढ़ा। फिर भी, यहूदियों के प्रति घृणा नहीं बल्कि जेरूसलमन के प्रति भक्ति के कारण १०९५ ई० में, आतंक का ज्वालामुखी फूटा। ईसाई मुसलमानों को जेरूसलम से किसी भी तरह ताकत, उत्पीड़न और अनिष्ट द्वारा बेदखल करना चाहते थे। यह युद्ध सर्वाधिक अपवित्र युद्ध का आरम्भ था, जिसने धर्मान्धता की असली प्रकृति को प्रदर्शित किया और दो शताब्दियों अर्थात् १२९१ ई० तक, चला।

पोप अरबन II

पोप अरबन II द्वारा १८ नवम्बर १०९५ को क्लेरमौन्ट की सभा बुलाई गई। होली फादर ने, प्रेम के ईसाई आदर्श के अपने त्याग से विचलन स्वरूप, गॉड के युद्ध विराम सन्धि को नवीनीकृत किया, जिसका अर्थ मानव जाति के लिए शान्ति और पड़ोसियों के लिए प्यार होता है, पर गैर ईसाइयों को ईश्वरीय अनुकम्पा से अलग रखा। वे मात्र मनुष्य जैसा दिखते हैं, वैसा हैं नहीं; इसलिए वे सर्वनाश के योग्य हैं। मुसलमानों की धर्मद्रोही कहानियों से

भरे हुए, जो आदतन ईसाई तीर्थ यात्रियों का पवित्र भूमि पर उत्पीड़न किया करते थे, आग उगलने वाले भाषण और वक्तृता के विस्फोटक गर्जन द्वारा उसने सभासदों को आँसुओं से तर कर दिया। नरसंहार की धर्मभक्ति में सराबोर धर्म—सैनिकों की सेना संगठित करने के लिए उसने अपने दैवी अधिकारों का उपयोग करते हुए उन सभी लोगों को जो पूर्व की यात्रा के लिए तैयार थे और हत्या को अनुग्रह और इस्लामी जहर से छुटकारा दिलाने को उपकारिता समझते थे, पूर्ण ईश्वरीय अनुग्रह का आश्वासन दिया।

पूर्ण अनुग्रह

पूर्ण अनुग्रह क्या था? यह स्वर्ग के लिए पोप का अनुज्ञा—पत्र था। आधिकारिक स्तर पर इसकी मान्यता पाप के सभी प्रायश्चित से क्षमा था, लेकिन धर्मयोद्धा विश्वास करते थे कि स्वामी का क्रॉस धारण करने वाले ईसाई कोई गलती नहीं कर सकते हैं। वृद्ध और बीमार की हत्या, औरतों—बच्चों का अपहरण, निर्दोषों की लूट और सुन्दरियों का बलात्कार (जिनमें ईसाई नन भी होती थीं पवित्र क्रीड़ा थी) स्वर्ग में प्रवेश के विशेषाधिकार के अलावा उनको सामंती बंधन, महाजनी ऋण और कर वसूलने वालों के संताप से मुक्ति दी गई। यदि वे लम्बी यात्रा के त्रास और युद्ध—क्षेत्र की विपदा से बचते तो उनका जीवन, जो अब तक दुर्भाग्य और अपमान से भरा था, अधिकार और आदर से विभूषित होने वाला था, जो धर्मयोद्धाओं के लिए सुरक्षित था; यदि वे मृत्यु का ग्रास बनते तो उनका बलिदान उन्हें स्वर्ग के राज्य में सुरक्षित स्थान प्रदान करता, जिसकी सड़कें स्वर्ण जड़ित होतीं और जहाँ सुन्दर कुमारियाँ उनके आलिंगन के लिए अधीर, आहें भरती होतीं।

अरबन के धर्मोपदेश

फ्रांसीसियों के जातीय गौरव को अपने दैवी राज्याधिकार से गुदगुदाते हुए, पोप अरबन ।। ने, जो स्वंय फ्रांसीसी था, गिरजे के दुःख से रुँधे गले से अपनी भारी आवाज में कहा, ''ऐ फ्रान्सीसी जाति के लोगों! गॉड के प्रिय और चुने हुए लोगों, सुनो; एक अभिशप्त जाति ने हमारे स्वामी के पवित्र स्मारक को प्रदूषित किया है, उसे लूटा है और उस पर अधिकार कर लिया है.....पवित्र जेरूसलम नगर, जो पृथ्वी का केन्द्र है, मलिन धर्मद्रोहियों के चंगुल से अपनी

मुक्ति की भीख माँगता है।'' जैसे ही अरबन का तूफानी व्याख्यान समाप्त हुआ, विश्वासियों का आवेशित मुखड़ा अकल्पनीय क्रोध से तमतमा उठा और उनका हृदय ''गॉड की यही इच्छा है'' की आवाज से प्रस्फुटित हो उठा। मुस्लिम खून की दरिया से स्वर्ग के राज्य में प्रवेश के लिए ईसाइयों के लिए क्या ही सुन्दर अवसर था! अपने मुक्तिदाता के प्यार और उद्देश्य की पवित्रता को प्रदर्शित करने हेतु उन सभी लोगों ने क्रॉस धारण करने की प्रतिज्ञा की।

मुक्तिदाता से प्रेम और अनेक प्रदूषित और विकृत कहानियों द्वारा मुहम्मद से घृणा, समान रूप से मेल खाते थे। एक बकवाद में कहा गया कि जब मुहम्मद को मिरगी की मूर्च्छा आई और ध्यान में डूबने का बहाना बनाया तो एक सूअर ने दैवी दण्डस्वरूप उसे जीवित ही निगल लिया।

गैर मुसलमानों से मुसलमानों की घृणा

दूसरी ओर, मुसलमान, धर्म–निन्दक ईसाइयों का गला काटने हेतु समान रूप से अधीर थे। उनके कानों में कुर्आन के हुक्म की घंटी बज रही थी :

(ए) ''ऐ ईमान वालों! अगर तुम्हारे (माँ) बाप और (बहन) भाई ईमान के मुकाबले में कुफ्र को पसंद करें, तो उनसे दोस्ती न रखो और जो उनसे दोस्ती रखेंगे, वे जालिम हैं।'' (सूर:तौबा ९:२३)

(बी) ''....अल्लाह भी ऐसे काफिरों का दुश्मन है।'' (अलबकर : २:९८)

(सी) ''बेशक अल्लाह ने काफिरों को फटकार दिया है और उनके लिए दहकती हुई (दोजख की) आग तैयार रखी है।'' (अल अह्जाब ३३:६४)

(डी) ''ईमान वालों को चाहिए कि ईमानवालों को छोड़कर काफिरों को अपना दोस्त न बनावें, और जो वैसा करेगा तो उससे और अल्लाह से कुछ (सरोकार) नहीं....।'' (आले इम्रान ३:२८)

(ई) ''ऐ ईमानवालों! यहूदी और ईसाई को मित्र न बनाओ;...और तुममें से जो कोई इनको दोस्त बनायेगा तो बेशक (वह भी) इन्हीं में से होगा...।'' (सूर:माइद:५:५१)

ईश–संदेश पर आधारित प्रत्येक मजहब घृणा का स्रोत होता है; यहाँ काफिरों से घृणा करने के ईश्वरीय (अल्लाह के) समर्थन से सह–विश्वासियों में मित्रता बनाने का उपाय किया जाता है :

''ईमान वाले (सब) आपस में भाई हैं सो अपने दो भाइयों में मेल–मिलाप करा दो....।'' (अल हुजुरात ४९:१०)

''.....काफिरों के हक में बड़े सख्त हैं (और) आपस में रहम दिल है।'' (अल–फत्ह ४८:२९)

इस्लामी जेहाद

इन उपदेशों में जेहाद का हुक्म है; जिसका मतलब है कि मुसलमान को धर्म–युद्ध छेड़ देना चाहिए और युद्ध–क्षेत्र में सम्मान पूर्वक मृत्यु का आलिंगन करना चाहिए। इस्लाम का दृढ़ आश्वासन है कि शहीद कभी नहीं मरता, वह जन्नत में अमरत्व का आनन्द उठाता है, जहाँ उसे सुगंधित देहवाली बहत्तर हुरें और बहुत से सुंदर किशोर मिलेंगे।

मजहब और नफरत

ईसाई और मुसलमान दोनों ने सिद्धांत रूप में प्रेम के सिद्धांत की प्रशंसा की; पर व्यवहार में मानवता के लिए विश्वव्यापी घृणा–प्रदर्शन के लिए तैयार रहे, जो ईश–संदेश की युक्ति द्वारा अल्लाह या गॉड को पूजने और मानव जाति को दु:खी बनाने को प्रोत्साहित करता है।

जितना ईश–संदेश के प्रशंसकों ने गला काटने के कौशल का प्रदर्शन किया है, अब तक उसका आधा भी कोई कसाई नहीं कर सका है। पूरे दो शताब्दियों तक ये दैवी हत्यारे बिना थके अरब के मरूभूमि की तप्त रेत को मानव–रक्त से तर करते रहे, जो इस संसार में विद्यमान किसी भी वस्तु से अधिक पवित्र है।

इस दुराचार का कारण और केन्द्र होने के बाद भी जेरूसलम पवित्र स्थान बना रहा! उससे भी अधिक शर्मनाक बात यह थी कि यहूदियों का यह नगर जबकि ईसाइयों और मुसलमानों के लिए समान श्रद्धा का स्थल बना, खुद यहूदी सभी पंथों के विश्वासियों के लिए अपमान के केन्द्र बन गये।

यह दिखाता है कि ईसाइयों और मुसलमानों का स्वाभाविक अहंकार, जो नवीनता लाने में कुशल यहूदियों के ईश–संदेश की निपुणता के समक्ष दर्पहीन हुआ था, किस प्रकार उनकी हीन भावना में बदल गया। अपनी दमित अन्तर्प्रवृत्ति को पुनर्यौवन प्रदान करते हेतु उन्होंने स्वाभाविक तौर पर यहूदियों के दमन को अपनाया।

अधीर धर्म—सैनिक

अरबन ने अगस्त १०९६ में प्रस्थान का समय निश्चित किया था। प्रेमीजनों की जिस प्रकार इन्तजार की घड़ियाँ, महीनों—वर्षों का बोध कराती हुई, बड़े कष्ट से बीतती हैं, उसी प्रकार विश्वासी इतना लम्बा, अगस्त तक प्रतीक्षा की अकुलाहट में नहीं रह सके। लगभग १२००० योद्धाओं ने ''पीटर दि हरमिट'' और ''वाल्टर दि पेनीलेस'' के नेतृत्व में, मार्च में फ्रान्स से प्रस्थान किया। जर्मनी से शीघ्र ही ५,००० और लोग उनसे आ मिले, और लेनिनजेन के काउन्ट इमिको के नेतृत्व में लगभग उतनी ही संख्या में और लोग र्‌हाइन प्रदेश से आकर इसे और बढ़ा दिया। जेरूसलम के प्यार में उन्मादित ये जत्थे जर्मनी और बोहेमिया के यहूदियों पर क्रूरता की कला का अभ्यास करने का निश्चय किया और स्थानीय पादरियों और ईसाइयों के अनुरोधों को भी ठुकरा दिया। अपने सीमित साधनों के चुक जाने के बाद उन्होंने न सिर्फ यहूदियों की सम्पत्ति पर दावा ठोंका वरन् उनकी प्रतिष्ठा पर भी। वे ईसा में अवश्य विश्वास करते थे, पर उनके ब्रह्मचर्य में नहीं। होली फादर से सम्पूर्ण अनुग्रह (या अतिभोग) के आश्वासन के बाद क्या यह बुद्धिमता पूर्ण था कि लैंगिक भूख की तृप्ति में शामिल न हुआ जाय? फिर भी बहुत लम्बे समय तक वे रात्रि—उत्सव के दैवी अधिकार का आनन्द न उठा सके, क्योंकि निकाइया के निकट, सेलजुक तुर्क सेना के अति निपुण धुनर्धारी सैनिकों द्वारा उन्हें काट डाला गया। यह पहले क्रुसेड की पहली टुकड़ी थी।

इसे इतिहास का व्यंग्य ही कहेंगे कि इन धर्मयोद्धाओं का नेतृत्व उनके शासक नहीं कर रहे थे क्योंकि अनेक राज्याध्यक्ष जैसे फ्रांस का फिलिप I, इंगलैण्ड का वीलिया।। और जर्मनी का हेनरी IV को पोप द्वारा धर्म संगठन से वहिष्कृत कर दिया गया था। पहला क्रुसेड मुख्यत: फ्रांसीसी साहसिक अभियान था और इसकी प्रशंसनीय टुकड़ी को ड्यूक गॉडफ्रे, टारन्टू का काउन्ट बोहेमण्ड, हॉटेविले का टैन्क्रेड और रेमण्ड टौलैसे के काउन्ट जैसे कुलीनों द्वारा संचालित किया जा रहा था।

धर्मयोद्धाओं की व्यक्तिगत रुचि

घटनाओं की निकट से जाँच करने पर यह पता चलता है कि क्रुसेड की शुरुआत मानवीय लोभ और प्रतिष्ठा को संतुष्ट करने के लिए हुई थी, न कि गॉड के गौरव को बढ़ाने के लिए। उदाहरण के लिए कुछ कुलीन सामंतों ने तौरस पार करते ही, अपने राजनीतिक हित की पूर्ति के लिए मुख्य सेना से

अपने को अलग कर लिया। रेमण्ड, गॉडफ्रे और बोहेमण्ड ने निजी अधिकार हेतु जीत हासिल करने के लिए अर्मीनिया का दौरा किया और बाल्डवीन (गॉडफ्रे का भाई) पूर्व में पहला लैटिन राज्य, १०९८ में, स्थापित किया।

सम्राट एलेक्सीयस कॉमनेनस

आरम्भ में, बैजन्टाइन सम्राट एलेक्सीयस कॉमनेनस ही था, जिसने सुलजुक तुर्क के विरुद्ध, पश्चिम से बार—बार मदद की माँग की, क्योंकि तुर्कों ने अपने साम्राज्य की सीमा कुस्तुनतूनिया तक बढ़ाकर उसकी असुविधा बहुत बढ़ा दी थी। अन्तत: जब उसकी माँग पोप अरबन I द्वारा स्वीकार कर ली गई और कुस्तुनतुनिया के पास एक बड़ी सेना जिसमें ४००० घुड़सवार सरदार और २५,००० पैदल सैनिक थे, उसके पास पहुँच गये, तब उसने सात शताब्दियों के राजनीतिक उथल—पुथल से सीखे गये साम्राज्यवादी कौशल का उपयोग किया और प्रत्येक क्रुसेड—नेता से बाइबिल की कसम खाने की माँग की कि वे प्रत्येक क्षेत्र को पुन: जीतने तक युद्ध करेंगे, जो पहले इस साम्राज्य का भाग था। पुन: उसने उनमें से प्रत्येक से अपने प्रति सामंती निष्ठा की शपथ की माँग की कि वे किसी भी नई जागीर को सैनिकों के खर्चे की भरपाई हेतु स्वीकार करेंगे। सोने की चमक और हीरे की दमक को ऐलेक्सियस ने इन पवित्र लड़ाकों के बीच दिल खोलकर बाँटा जिससे शीघ्र ही उनकी आवाज नरम हो गई।

पोप के लिए, पवित्र शक्ति के विस्तार की लम्बी श्रृंखला में यह एक दूसरी कड़ी थी, लेकिन प्रयुक्त साधन की पवित्रता पर कोई विचार नहीं किया गया।

कौन्स्टेन्टाइन का दान

इतिहास में यह अंकित है कि होली सी (Holy See) ने जाली दस्तावेज तैयार किया था जिसे ''कौन्स्टेन्टाइन का दान'' नाम से जाना जाता है, अर्थात् महान सम्राट कॉन्स्टेन्टाइन द्वारा पोप सिलवेस्टर I (३१४—३३५ई०) को अनुदान। यह झूठा दस्तावेज पोप और उसके आध्यात्मिक उत्तराधिकारियों को, रोम के अधिराज्य सहित पश्चिम के सभी विशपों से धार्मिक मामलों में श्रेष्ठता प्रदान कराने में सहायक हुआ। बारहवीं शताब्दी में पोपों ने इसका

इस्तेमाल प्रभावी औजार के रूप में, सांसारिक शासकों को झुकाने के लिए करना शुरू किया। विद्वानों ने इस जाली दस्तावेज को गढ़ने का समय ७५० से ८०० ई० के मध्य निश्चित किया है।

तुरीन का कफन

तुरीन का कफन, जिसके विषय में समझा जाता है कि इस पर ईसा का छाप था, छल द्वारा, शक्ति प्राप्त करने का दूसरा उदाहरण है। १९८९ ई० तक इसे सही समझा जाता था, जब फोरेन्सिक जाँच द्वारा इसकी असत्यता सिद्ध हुई।

एक साधारण व्यक्ति की तरह किसी मजहब में विश्वास करने वाला आसानी से इन पाखण्डों को बर्दाश्त नहीं करेगा। यह आश्चर्यजनक है कि किस प्रकार ठगबाज ईश्वरोक्ति के जादू की युक्ति से अपने अनुयायियों की बौद्धिक क्षमता को निम्न स्तर पर ला देते हैं। मुझे समझ में नहीं आता कि इस चतुराई के लिए इनकी प्रशंसा की जाय या निन्दा; सब कुछ के बावजूद कौशल, कौशल ही है, उसकी प्रकृति चाहे जो हो।

अल—हाकिम

पोप सिर्फ आध्यात्मिक नेता ही नहीं था, वह एक सांसारिक राजकुमार भी था। पेपिन के अनुदान (७४५ई०) ने उसे, और उसके उत्तराधिकारियों को, वास्तव में मध्य इटली का युवराज का पद या राज्य प्रदान किया जो उन्नीसवीं शताब्दी तक बना रहा। यह 'होली फादर' के साम्राज्य संबंधी झुकाव को दिखाता है। क्रुसेड्स (धर्मयुद्ध) के लिए धर्मोपदेश और उसकी स्वीकृति प्रदान करना, ऊपर से नीचे तक सभी स्तर के ईसाइयों पर शासन करने के लिए और पूर्व और पश्चिम को एकीकृत कर पोप के आदेश के नीचे लाने के लिए, एक व्यावहारिक कदम था। जेरूसलम में पवित्र समाधि के चर्च का विध्वंस, एक झूठा बहाना था क्योंकि मुसलमानों द्वारा अपने खर्च से इसे उचित रीति से पुन: निर्मित किया जा चुका था। इसे अल—हाकिम, मिश्र के फातमी खलीफा (९९६—१०२१) द्वारा बर्बाद किया गया था, जो समझा जाता है अपनी ही दिव्यता से मोहित था।

ईसाई समाधि स्थल को नुकसान पहुँचाना इस्लामी परम्परा के विरुद्ध है और किसी सच्चे मुसलमान द्वारा ऐसा कभी नहीं किया गया। ईसाई

धर्मयोद्धाओं की प्रथम टुकड़ी का जो हश्र हुआ, उससे ईसाई मनोबल को बहुत धक्का लगा। मई १०९८ में, मोसुल के राजकुमार करबोधा के एक बड़ी सेना के साथ पहुँचने के समाचार ने ईसाइयों को इस हद तक भयभीय कर दिया कि अनेक लोग अपने पोतों को पत्थरों से बाँध कर भाग गये। उन्होंने स्वर्ग के राज्य के आनन्द और वैभवयुक्त चमक—दमक की तुलना में पश्चिम का साधारण जीवन ही चुना। यहाँ तक कि एलेक्सियस ने भी इनको उचित समझा और स्वयं क्रुसेडर्स का साथ देने के बदले एशिया माइनर की ओर, सुरक्षित स्थान जान, मुड़ गया।

पीटर बरथोलोमेव

इस अवसर पर पीटर बरथेलोमेव नाम के एक पादरी ने अपने लोगों के शिथिल होते उत्साह को हवा देने के लिए एक चतुर चाल चली। अत्यन्त प्रसन्नता से अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए, अपने सह—लड़ाकुओं को आश्वस्त करने के लिए कि गॉड की कृपा से उसने वह भाला पा लिया है जो स्वामी ईसा के बगल में धँसा था, गरज उठा। धर्मयोद्धाओं (क्रुसेडर्स) पर इसका समान असर हुआ, जैसे सूखती घास पर भारी वर्षा हो गई हो। अपने उत्पीड़कों के साथ वही करने के लिए जैसा उन्होंने उनके साथ किया था, भाला को स्वामी की ओर से भेंट समझते हुए वे अपनी जीत के प्रति पूर्ण आश्वस्त हो गये। उन्होंने स्वामी की प्रशंसा की; पवित्र भजन गाये और उत्साहित हो कर नाचने लगे। धर्मयोद्धाओं की यह दृढ़ विश्वास से भरी हुई, सफलता की प्रतिज्ञा से उन्मादित सेना को पवित्र चिन्ह के रूप में उठाये भाला के पीछे—पीछे युद्ध भूमि तक ले जाया गया। क्रुसेडर्स का उत्साह चरम पर था। उन्होंने मुस्लिम लड़ाकुओं को भागने पर मजबूर कर दिया।

बदला के लिए वे दहाड़ रहे थे। परम प्रिय परमेश्वर ने उनके लिए ७ जून १०९९ को यह अवसर प्रदान किया, जब वे जेरूसलम की दीवार के सामने खड़े थे जिसकी पवित्रता मनुष्य की बदबूदार आकृति का प्रदर्शन कर रही थी।

जेरूसलम में नर—हत्या

१५ जुलाई को सूरज के निकलते ही, इसकी प्रत्येक सुनहली किरण, ईश्वरीय संदेश की शर्मनाक सच्चाई को प्रकट करने के लिए घृणा के उत्ताप से चमक उठी, जिसे विभिन्न पैगम्बरों के अनुयायियों ने परम कृपालु सृष्टिकर्ता

से प्राप्त किया था। गॉडफ्रे और टैन्क्रेड के नेतृत्व में उनके सैनिकों ने पवित्र नगर की दीवारों को सफलतापूर्वक पार कर लिया और तब एक विश्वासी की परम निष्ठा के साथ नर्क की विभीषिका को भी पीछे छोड़ने वाला वृत्तांत लिख डाला। एजिल्स के रेमण्ड नाम के एक साधारण पादरी ने बड़े गर्व के साथ लिखा, ''उसने बड़े ही विस्मयकारी दृश्य देखे''। उसने अरबी मुसलमानों के सिरों को रस–युक्त पौधों की, की गई कटाई जैसा देखा। कुछ को तीर से मारा गया कुछ को ऊँचे गुम्बदों से कूद जाने के लिए विवश किया गया; बहुतों को अनेक दिनों तक निर्दयता से उत्पीड़ित करने के बाद एक जगह ढेर में जमा कर जीवित जला दिया गया। सड़कें कटे हुए सिर,पैर, हाथ आदि से पटी थीं। दूर–दूर तक सरपट दौड़ने वाले घोड़ों के सवारों ने सर्वत्र वही दृश्य देखा।

ईसाई कट्टरवादियों द्वारा जिस हर्षोन्माद का उस समय अनुभव किया गया उसका वर्णन समकालीन लोगों द्वारा इस प्रकार किया गया है स्वामी का बदला लेने हेतु, अधीन बनाये गये लोगों के बगल में भाला मारना उनका प्रिय शौक बन गया; भयभीत औरतों को बार–बार कटार भोंकना खुशी प्रकट करने का तरीका बना; दूध पीते बच्चों को उनकी माँओं की छातियों से छीनकर दीवारों के पार फेंकना, ''चरनी में बच्चा'' के सम्मान के प्रतीक स्वरूप था; जैसे–जैसे हत्या का उन्माद बढ़ता गया ये पवित्र लड़ाके बच्चों के पैरों को पकड़ कर उनके सिरों को बड़े पत्थरों, खम्भों और दीवारों पर पटकने के पागलपन की हद तक पहुँच गये। इस दैवी रात्रि उत्सव में लगभग ७०,००० मुसलमानों को खून में डुबोया गया। यह संख्या उनके अतिरिक्त है जिन्हें लड़ते हुए मारा गया था।

पवित्र समाधि का चर्च

यहूदियों ने इस पवित्र शहर को विकसित किया था और इसने विश्वासियों के लिए पुण्य का सोता प्रदान किया था, पर इसके लिए उन्हें कोई धन्यवाद नहीं मिला। इसके बदले पूरे जेरूसलम में उनका शिकार किया गया; उनकी सुन्दरियों से बलात्कार किया गया और उन्हें उत्पीड़ित किया गया, उनके बच्चों को जीवित ही फाड़ डाला गया; उनका धन लूटा गया, और स्वामी को अन्तिम धन्यवाद के संकेत रूप में, जिसकी अपार बुद्धि ने इस कृपा के चमत्कार को सहज बनाया, धर्मयोद्धाओं ने जीवित बचे यहूदी समुदाय को सिनेगॉग में आश्रय लेने को विवश किया, जो उनको अँटा पाने के लिए बहुत छोटा था।

परम दयालु स्वामी के भक्तों ने मर्दों, औरतों और बच्चों को घर में एक दूसरे पर जमा किया और आग लगा कर भस्म कर दिया। इस आनन्द की रहस्यात्मकता के अवसर का उत्सव मनाने के लिए, वे अत्यन्त श्रद्धा–भाव से पवित्र समाधि वाले चर्च के अन्दर गये, जो एक बार शूलीग्रस्त ईसा को आश्रय दे चुका था। वहाँ उनलोगों ने एक दूसरे का आलिंगन किया और चूमा, तथा पूर्णत्व के भाव से उनकी आँखों में आँसू आ गये और इस प्रबल समापन के लिए स्वामी के प्रति कृतज्ञता–बोध से वात्सल्य प्रेम के साथ उनके गले रुँध गये। फिर भी उन्होंने कानों को फाड़ने वाली आवाज में ''हैले लुजा'' गाया जिसकी शोर में यहूदियों की दया की प्रार्थना डूब गई, और इस प्रकार स्वामी ईसा के लिए यह बहाना प्रदान किया कि जलती हुई इजराइल की संतानों के विलाप को वह सुन न सका।

जेरूसलम के प्रति यह्वे का दृष्टिकोण

जेरूसलम के दुल्हा यह्वे का क्या हुआ? वह बेकार का प्रेमी सिद्ध हुआ। ऐसा प्रेमी जो दुल्हन के खिलते सौन्दर्य का मजा तो उठाता है पर उसके शील की सुरक्षा की कोई परवाह नहीं करता। चुनी हुई नस्ल के प्रति उसका व्यवहार इस अंग्रेजी कहावत पर अधारित है, ''मैंने कहा था न !'' अर्थात उसने उनको चेतावनी दी थी कि जब तक दूसरे देवताओं को पूजना बन्द न करोगे मैं तुम्हारा उत्पीड़न कराता रहूँगा। यह देखकर विचित्र लगता है कि अपने हठ के लिए विख्यात यहूदियों ने कभी यह्वे की आँखों में झाँक कर नहीं देखा, जो उनके स्थाई अपमान का सजीव कारण था। यह आश्चर्य का विषय है कि यह्वे, जो पूरे संसार का भगवान है मूर्तिपूजा के लिए दूसरे राष्ट्रों (जातियों) को क्यों दण्डित नहीं करता है। क्या यहूदी ही उसकी संतान हैं? पूरी मानव जाति की सृष्टि किसने की? यदि दूसरा भगवान है तो मात्र यह्वे ही पूजा का पात्र नहीं हो सकता। यदि सिर्फ वही भगवान है तो उसे अपनी सभी सन्तानों से समान व्यवहार करना चाहिए। चूकि ऐसी बात नहीं है इसलिए वह ईश्वरत्व की महानता के योग्य ही नहीं है।

प्रथम क्रुसेड की सफलता ने ईसाइयों को जेरूसलम के लैटिन किंगडम को विभक्त करने के योग्य बना दिया, जिसे किंग फल्क, काउन्ट ऑफ अन्जाउ

(११३१—४३) के अधीन फीलीस्तीन और सीरिया के अधिकांश हिस्सों को सम्मिलित करते हुए विस्तारित किया गया, यद्यपि अभी मुसलमानों के अधीन ईमेसा, एलेप्पो और दमिश्क बने रह गये। शासकों की सदा से शासन करने की मनोवृत्ति के कारण ईसाई जोश शीघ्र ही ठंडा पड़ गया। जैसे ही नवाबों ने विजित क्षेत्रों पर अधिकार किया, उन्होंने ईसाई और मुसलमान दोनों पूर्व मालिकों के स्तर को घटा कर कृषिदास के स्तर पर ला दिया और पहले से भी अधिक, सामंती दासता की कठोर शर्तों को लाद दिया, जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी न की होगी। मनुष्य विश्वास का शिकार होता है। कितनी सरलता से दैवी व्यापार वाली शक्तियाँ उन्हें अपने अनुकूल गढ़ लेती हैं और उनको सदा आशा में भटकते रहने को छोड़ देती हैं।

धर्मान्धता की बर्बरता प्रदर्शित करती हुई क्रुसेडर्स की त्रासदी दो शताब्दियों तक चली। मानव जाति की सर्वाधिक खूनी बुद्धि के ईसाई रूप के खुलासा के लिए मैंने पर्याप्त कह दिया है। मुस्लिम पक्ष की इस संबंध में क्या स्थिति है? मुसलमान ईसाइयों के साथ युद्धरत थे, और इस प्रकार ईमान के उन्माद से पैदा हुए मानव रक्त बहाने के कलंक में समान भागीदार थे। इस सच्चाई को प्रकट करने हेतु मै सिर्फ एक प्रसंग का वर्णन करूँगा। यह पुस्तक एक मात्र क्रुसेड्स के इतिहास से संबंधित नहीं है।

दूसरा क्रुसेड (११४६—४८ई०) ईसाइयों के लिए विनाशकारी रहा। जर्मन सम्राट कोनरॉड III को डोरीलियम में इतना बड़ा विध्वंस झेलना पड़ा कि लगभग उसकी 90% सेना का सफाया हो गया। फ्रांसीसियों का इससे भी बुरा हाल हुआ। किंग लुइस VII बहुतेरे कुलीनों और औरतों के साथ ऐन्टिऑक के लिए प्रस्थान किया, लेकिन उसने बाकी सेना को अट्टालिया में ही छोड़ दिया। अब अल्लाह को खुश करने की बारी मुसलमानों की थी। ११४८ ई० में, वे नगर पर भूखे बाजों की तरह टूट पड़े। फ्रांसीसी सैनिकों ने अद्‌भुत विजय के उत्साह के साथ फ्रांस—तट को छोड़ा था, अब निराशा, त्रास और उदासी में पंडुक की तरह विचलित हो गये। मुस्लिम कारी, अर्थात् कुरान की आयतों का पाठ करने वाले पेशेवर मौलवियों ने कुरान का सस्वर पाठ किया। कुरान पाठ में उन्होंने अपने सैनिकों को बड़े अधिकार के साथ आश्वस्त किया : अल्लाह ने उनके लिए मृत्यु रोक दी है जो अपना जीवन इस्लाम को अर्पित

करता है; जिसे मृत्यु कहते हैं वह मात्र नश्वरता से अमरत्व में परिवर्तन है; यह सिर्फ इस पृथ्वी के दु:खद जीवन से जन्नत के शाश्वत जीवन का गमन मात्र है, जहाँ अत्यन्त सुखद वातावरण में चौड़ी आँखों, उभरे सीने और सुगंधित देहों वाली सुन्दरियाँ (हुर्रे) उनकी सेवा के लिए तैयार मिलेंगी। जैसे—जैसे कुरान—पाठ का स्वर ऊँचा होता गया और बार—बार अल्लाह की कृपा का जिक्र आता गया, मुसलमानों के तलवारों की चमक और खून की प्यास बढ़ती गई। लगभग सभी फ्रांसीसियों का सफाया हो गया। उनकी औरतें हरम में ही समाप्त हो गईं और बच्चों पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। करीब ६०,००० ईसा के अनुयायी, समय से पहले ही, अपने सृष्टिकर्ता से जा मिले और टायर, सिडॉन, हैफा और बेरूत के ईसाइयों का भी यही हस्र हुआ।

ईश्वरत्व का आवरण

सभी प्रकार की नशाओं में, धर्मान्धता, अर्थात् अंधविश्वास की नशा, सबसे बुरी है। पवित्र अभियान की विशिष्ट असफलता के दु:खद समाचार ने यूरोपियन नास्तिकों के मुँह खोल दिये। उन्होंने तर्क दिये कि गॉड के सबसे प्रिय भक्तों का जो अति अपमानजनक हाल हुआ, उससे उसकी बुद्धि और कृपा में संदेह लगता है। दूसरे क्रुसेड का वास्तविक उत्तेजक, सन्त वर्नार्ड ने उत्तर दिया कि मनुष्य को सर्वशक्तिमान के विधान में प्रश्न उठाने का कोई अधिकार नहीं है, जो मनुष्य की समझ के बाहर है। गॉड पर क्रुसेड की असफलता का दोषारोपण नहीं किया जा सकता। क्योंकि यह ईसाइयों के पापों की सजा थी। उसी प्रकार, हर बार यहूदियों ने विध्वंस का सामना किया और यहूदी पुरोहित (रैबिज) सच्चाई से मुँह चुराते हुए उसी प्रकार के तर्क के साथ उपस्थित हुए। उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया कि यह्वे एक काल्पनिक पात्र भर है। यदि वे वैसा करते तो शीघ्र ही पुरोहिती व्यापार से बाहर हो जाते, जो बहुत ही लाभदायक और प्रतिष्ठादायक व्यापार है। इसलिए वे प्रत्येक विपत्ति को भविष्यवाणी की पूर्ति, चित्रित करते हैं। जिसे वे स्वंय विश्वासियों को मूर्ख बनाने के लिए गढ़ लेते हैं। धर्मान्ध, यहूदी, ईसाई या मुसलमान कोई हो, धर्माधिकार के समक्ष नतमस्तक हो जाते हैं; जो सर्वसत्तात्मक, निरर्थक आशा बँधाने वाला और उत्पीड़क होता है। धर्मान्धता का सीधा अर्थ अपने

सद्विवेक, आत्मसम्मान और निर्णयकारी शक्ति के साथ स्वयं को दासता के हाथों बेच डालना है।

जर्मनी के संबंध में यहूदी मनोभाव

पहले के किसी भी समय की तुलना में आज के समय में धर्मान्धता बुराई का सबसे बड़ा स्रोत है। जर्मनी के संबंध में यहूदी विचार को लीजिए। सर्व कल्याण के अपने ऊँचे दावे के बावजूद, यहूदी लोग शायद ही क्षमा के विषय में कुछ जानते हैं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि पेन्टाश्युक में कृपा का कहीं कोई जिक्र नहीं है। इसके स्थान पर जोर बदला लेने में है, जो तीन हजार वर्ष पहले हम्मूराबी और उसके उत्तराधिकारियों द्वारा प्रयुक्त बदला के कानून का स्मृति–चिन्ह है।

बदला लेने का नियम

यहूदी व्यवहार में, बदला लेने का नियम क्षमा को मना करता है और निर्धारित करता है कि यदि कोई तुम्हारी आँख पर चोट करे तो तुमको भी अवश्य उसकी आँख पर चोट करना चाहिए और यदि कोई तुम्हारा दाँत तोड़ दे तुम्हें भी उसका दाँत तोड़ देना चाहिए। (एक्सो. २१:२४–२६)

यहूदी आचार में निष्ठा रखने वाले किसी यहूदी के लिए, व्यक्तिगत संतुष्टि हेतु बदले में आघात करने को वरीयता देने के कारण, दयालु हृदय का होना कठिन है। यह अभिरुचि, जिसे सावधानी से ईश्वरीय नियम से सँवारा गया है, चुनी हुई जाति का सदस्य होने के नाते जातीय श्रेष्ठता की संवेदना द्वारा और भी तीक्ष्ण बनाया जाता है। यहूदी कानून, आदेशों और पेचीदगियों का प्रतिरूप है। कोई व्यक्ति किसी चीज को इससे सही या गलत सिद्ध नहीं कर सकता है; परिणामस्वरूप, रैबी का शब्द ही प्रधान होता है और उसकी प्रतिष्ठा और अधिकार का साधन भी।

यहूदी कानून

मूसा का लिखित कानून जो पेन्टाश्युक में पाया जाता है, को भयानक रूप से मौखिक कानूनों की भरमार से बढ़ा दिया गया है जिसे सदियों से प्रत्येक आगामी पीढ़ी द्वारा सौंपा और विस्तारित किया जाता रहा। पेन्टाश्युक

और मौखिक कानून को मिला कर मिशना कहते हैं। उसके बाद ''तालमुड'' है, जिससे तात्पर्य टीका–टिप्पणी और व्याख्या संबंधी लेखों से है, जो लम्बे समय से एकत्रित होकर बाइबिल (सिर्फ ओल्ड टेस्टामेन्ट) के बाद दूसरी श्रेणी का धर्म–ग्रन्थ बन गया है। सिर्फ कानून का विस्तार ही एक तरफ इसे धार्मिक और सामाजिक जीवन को निर्धारित करने की शक्ति प्रदान करता है और दूसरी तरफ स्वैच्छिक व्याख्या की प्रवृत्ति इसे सुविधा प्रदान करने का साधन बना देती है। जब कानून की बुराई, जीवन के सभी क्रिया–कलापों को नियन्त्रित करती है तब स्वतंत्र विचार से इसकी टकराहट होती है। कानून के प्रति अति संवेदनशील होने के कारण लोग इसे मौखिक आदर तो देते हैं, पर अपनी स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिए इससे छल करते हैं और अपने कार्यों को कानून सम्मत होने का मात्र दिखावा करते हैं।

न्याय की सर्वकालिक धारणा

चूकि यहूदी कानून द्वारा क्षमा को प्रोत्साहित नहीं किया जाता इसलिए बदला लेना उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया है। मुझे ब्रिटिश यहूदियों की जर्मनों के प्रति मनोवृत्ति की व्याख्या करने दीजिए, जिन्हें कोमल शब्दों में ''नाजी युद्ध अपराधी'' कहते हैं। उनकी बदला लेने की मनोवृत्ति बिना वैसा दिखे बनी रहती है। वे न्याय के नाम पर बदला की ही माँग करते हैं और दावा करते हैं कि इसका संबंध समय की किसी अवधि से नहीं है : न्याय, समय विहीन है, यदि आपने अपराध किया है तो आप अवश्य दण्ड के भागी हैं।''

चूकि यह्वे पिता के पाप के लिए पीढ़ी दर पीढ़ी उसके बच्चों को दण्डित करता है, इसलिए समय विहीन न्याय की धारणा, बदले की यहूदी मनोवृत्ति के सर्वथा अनुकूल है, लेकिन न्यायप्रिय लोगों के लिए यह घृणित है। यह दृढ़ता से समयबद्ध है, क्योंकि :

(ए) समय की अवधि, साक्ष्य के मूल्यांकन के लिए निर्णयात्मक तत्व होती है, जो न्याय की गुणवत्ता को निश्चित करती है।

(बी) सांस्कृतिक आत्मा अर्थात् सोचने, अनुभव करने और कार्य करने के तरीके, सीधे समय से जुड़े होते हैं। जो एक शताब्दी पहले प्रचलन में था आज वह प्रचलन से बाहर हो सकता है।

उदाहरण के लिए महिलाओं का मनोविज्ञान तब भिन्न था, जब छः दशक पहले उनको वोट देने का अधिकार नहीं था। इसलिए, उस समय उनको प्रेरित करने का उपाय आज की तुलना में दूसरा था। झुकाव की प्रकृति व्यवहार के स्वरूप और न्याय के मानदण्ड को प्रभावित करती है।

यहूदी धन और प्रभाव

''समय विहीन न्याय'' की अतार्किक अवधारणा के साथ, अपने धन और राजनीतिक प्रभाव की विपुल शक्ति का उपयोग करते हुए यहूदियों ने पश्चिमी सरकारों को सम्मोहित कर दिया है और नाजी युद्ध–अपराधियों को कटघरे में खड़ा करने हेतु, अपने कानूनों में परिवर्तन करने या नया रूप देने हेतु राजी किया है। युद्धकालीन आपात नियमों को शान्तिकालीन सामान्य परिस्थितियों में लागू करने के विषय में सोचना पागलपन है, क्योंकि दोनों में वही अन्तर है, जो ज्वालामुखी के प्रस्फुटन और सिगरेट जलाने वाली सलाई की काँटी में होता है। यदि इस न्यायिक प्रक्रिया का उद्देश्य वास्तव में न्याय प्राप्त करना है तो बिल्कुल सही साक्ष्य प्रस्तुत करना एकदम आवश्यक है; पर यह लगभग असम्भव है; क्योंकि इतने लम्बे समय बाद, विशेषरूप से बचाव पक्षीय दस्तावेज नष्ट हो चुके हैं और गवाह ''नाजी या जर्मन'' का नाम सुनते ही वातोन्माद से ग्रसित हो जाते हैं।

यहूदी उत्पीड़न मानोग्रन्थि

बेबाकी से कहा जाय तो यहूदी हीनत्व को नरम करने का यह एक अभ्यास है, जो उनके उत्पीड़न की मनोग्रन्थि का अभिन्न भाग बन गया है जिसकी शुरुआत बेबीलोनिया की अधीनता से हुई थी। बेबीलोनिया का तालमुड ईश्वरीय गौरव की प्रतिज्ञाओं से यहूदी अपमान के बोझ को हलका करता है। वास्तव में २५०० वर्षों से भी अधिक समय से दुःख और दासत्व से पूर्ण यहूदी चरित्र को आत्मप्रवंचना के स्वप्न से अतिरंजित किया गया है, जो उनकी जातीय श्रेष्ठता के दर्शन और गैर यहूदियों के तिरस्कार से पैदा होता है। इस प्रकार उन्होंने सच्चाई पर व्यंग्य करते हुए बनावटी विश्वास धारण कर जीवन व्यतीत किया जहाँ एक गौरेया, गुरुड़ के तरीका को अपनाती है और स्वयं को गरुड़ होने का अनुभव कर झूठी जिन्दगी जीती है। परिणामस्वरूप,

एक छोटा वर्ग अस्तित्व में आया, जिसने रिश्वत और चापलूसी के मिश्रण से राज्य की नीति को प्रभावित किया। ईसाई सम्राट, जो स्वामी ईसा को प्यार करते थे, समान रूप से यहूदी वैभव से प्रभावित हुए। उन्होंने अपनी ही ईसाई जनता की उचित शिकायतों से यहूदी सूदखोरों की रक्षा की। ईसाईयों की आहें और कराहें, सिसकियाँ और रुदन सभी सोने की खनखनाहट में डूब गये जिसे वे ईसाई शासकों की खुली जेबों में डालते थे, जहाँ उनका सद्विवेक बसता था। गैर यहूदियों की उचित शिकायतों को दबा देने की यहूदी क्षमता ने उनके अंदर के हीनत्व–बोध से ग्रसित अहंकार को झूठी श्रेष्ठता के भयंकर उत्साह से भर दिया। जर्मन युद्ध–अपराधियों को दण्डित करने की उनकी माँग इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को स्थापित करती है। बात बड़ी जोरदार और साफ है : यहूदी को कोई कष्ट पहुँचावे और बच जाय, ऐसा नहीं हो सकता। लेकिन यहूदी उत्पीड़क का क्या होगा ? यह अलग बात है; क्योंकि यहूदी उत्पीड़क की श्रेणी देवत्व की है, सिर्फ गैर यहूदी उत्पीड़क ही दानव होता है। क्या मैं न्याय के क्रम को पलट रहा हूँ ? बिल्कुल नहीं। यह ऐतिहासिक तथ्य है जो मुझे इस निष्कर्ष पर ले जाता है। आप इसे स्वयं देखें :

नाजी और यहूदीवाद

जातीय श्रेष्ठता के यहूदी सिद्धान्त और दूसरे राष्ट्रों को अपने से हीन समझने का उनका व्यवहार, हिटलर की प्रेरणा के स्रोत बने थे। नेशनल सोसलिस्ट जर्मन वर्किंग पार्टी (नाजी) का, आस्ट्रिया में जन्मा यह नेता, ठीक वही भाषा बोलना शुरू किया, जैसा यहूदी पैगम्बरों ने दावा किया था कि उन्हें प्रभु (यह्वे) द्वारा यह या वह कहने का आदेश मिला है। उसने घोषित किया कि विधाता ने उसे यहूदियों के विरुद्ध देश का नेतृत्व करने के लिए बुलाया है। यहाँ तक कि उसका व्यवहार, फीलीस्तीन के संबंध में यहूदी व्यवहार की बाइबिल में लिखित विवरण ही, नमूना बना। मैं जो कहना चाहता हूँ वह 'यहूदी' शीर्षक पाठ के अंत में उल्लिखित, ऐतिहासिक यहूदी आचरण का एक उदाहरण है :

यह्वे ने यहूदियों से प्रतिज्ञा की कि वह उन्हें वह जगह देगा जहाँ दूध और शहद बहता होगा। यह स्थान कैनन अर्थात् फीलीस्तीन था।

इसे पाने के लिए यह्वे ने उन्हें किस प्रकार समर्थ किया?

हत्या और लूट के सामान्य तरीके से। ओल्ड टेस्टामेन्ट के संबंधित भागों की मैं व्याख्या करूँ ताकि आप स्वयं इसकी जाँच कर सकें :

(ए) जब तुम किसी कैनन नगर के पास उसे अधीन बनाने के लिए पहुँचो तो शान्ति की घोषणा करो। यदि वे समर्पण कर दें, तो यहूदी के रैयत और गुलाम बन गये। (ड्यूट २०:१०—११)

(बी) और यदि वे अपने सम्मान और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए उठ खड़े हों और लूटे जाने और गुलाम बनाये जाने का विरोध करें तब यहूदी निश्चय ही अपनी तलवारों से उनपर वार करें ताकि प्रत्येक पुरुष, महिला या बच्चा कत्ल हो जाय और कोई प्राणी जीवित न बचे; जड़—मूल से उनका सफाया होना चाहिए, सबका, और पूरी तरह; क्योंकि यह यहूदी भगवान यह्वे का आदेश है। (ड्येटो २०:१२—१६)

(सी) यहूदियों ने ठीक वैसा ही किया। उन्होंने नगर के नगर नष्ट किये, प्रत्येक पुरुष, महिला, बच्चा और शिशु की हत्या की। पराजितों के मकानों, पशुओं और जमीनों पर अधिकार किया। (ड्यूटो — अध्याय ३)

प्रतिज्ञात भूमि में रहने वाले सभी राष्ट्रीयता के लोगों के सुविचारित उन्मूलन की नीति, मूसा की मृत्यु के बाद भी, जोशुआ द्वारा जारी रखा गया। (जोशु १०:२८) नगर के बाद नगर के सुनियोजित विध्वंस का क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत करता है।

क्या नाजी द्वारा यहूदी उन्मूलन, उन्मूलन की उस सुविचारित योजना से किसी भी प्रकार भिन्न था जिसे यहूदियों ने कैनन में किया था?

क्या नाजियों ने, यहूदियों के समान, ईश्वरत्व और दैवी आदेश के आवरण तले मानवता के विरुद्ध किये गये अपने अपराधों को छिपाने का प्रयास नहीं किया? क्या कैननाइट की यहूदी द्वारा लूट, उद्देश्य और तरीका, नाजियों से किसी भी प्रकार भिन्न था ?

जोशुआ और हिटलर दोनों ने समान कार्रवाई की लेकिन जोशुआ को ईश्वरीय संदेश—वाहक समझा जाता है और हिटलर को शैतान का अवतार। ऐसा क्यों ? क्योंकि जोशुआ यहूदी था और हिटलर यहूदी नहीं था।

इतिहास का चक्र

यहूदी हीनता का दु:ख, जो इसे श्रेष्ठता कहता है, इस भाईचारा का विष बना है। गैर यहूदियों की स्वतंत्रता का दमन, सदा उन पर, बलात्कार, हत्या, लूट और निष्कासन के रूप में, हर शताब्दी में, प्रतिघात का कारण बना। फिर भी इन चुने हुए लोगों ने अपनी कुमारियों के अपमान और बच्चों के शिरोच्छेद के लिए कभी सत्यनिष्ठा से पश्चाताप के आँसू नहीं बहाये। जातीय आडम्बर के लिए यह कैसी कीमत चुकायी जाती है। वास्तव में यह इतिहास का चक्र बन गया है। वर्तमान पीढ़ी का यहूदी, गैर यहूदियों की कीमत पर अपने गौरव का प्रदर्शन कर, आगामी पीढ़ी के विनाश का बीज बोता है। अब, यह घटना—क्रम ब्रिटेन में अपनी राह पर है।

बदला, बदला, बदला

बदला लेने के उद्देश्य से यहूदियों ने लॉस ऐन्जिलिस में अपना मुख्यालय नाजी युद्ध अपराधियों के शिकार के लिए स्थापित किया है। केवल संदेहास्पद लोगों के शिकार के लिए ही नहीं बल्कि मुकदमा को सुविधाजनक ढंग से चलाने के लिए विभिन्न देशों को अपने कानूनों में परिवर्तन करने हेतु पीछा करने के उद्देश्य से भी। समान कानून वाले देशों, जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और आस्ट्रेलिया ने पहले ही वैसा कर दिया है। अब ग्रेट ब्रिटेन की बारी है, जहाँ समझा जाता है कि चार व्यक्ति ऐसे हैं जिन पर सफलतापूर्वक नाजी युद्ध अपराध का अभियोग लगाया जा सकता है। उनमें से एक की मौत हो चुकी है। एक यहूदी नाजी शिकारी ने इस मौत पर शोक व्यक्त किया, पर इसलिए नहीं कि किसी मनुष्य की मृत्यु हो गई, बल्कि इसलिए कि अब एक आदमी उनमें कम हो गया जिन पर मुकदमा चलाया जाना था और इस प्रकार सारे लोगों पर अभियोग चला कर जो संतुष्टि मिलती उसमें कुछ कमी हो गयी।

सर्वकालिक न्याय की प्रकृति का यही रूप है। पुन: प्रत्येक राज्य को अपना अलग और स्वतंत्र निर्णय लेने की कार्रवाई करनी चाहिए कि इन संदिग्ध अपराधियों पर अभियोग चलाना चाहिए या नहीं। सक्रिय यहूदी अनुसरण पूरे कथा—प्रसंग को पहेली बना देता है, और दूसरे देशों की आन्तरिक

गतिविधियों पर भरपूर यहूदी प्रभाव को प्रदर्शित करता है। चूकि उनमें विदेशी कानूनों में परिवर्तन की शक्ति है, इसलिए संदेह होता है कि वे उन व्यक्तियों का क्या कर सकते हैं जो इनकी रुचि के अनुकूल नहीं होते। यह सफलता, जिसपर यहूदी आज आनन्द उठा रहे हैं, उस चक्र का भाग बनेगा जिसकी चर्चा मैं पहले कर चुका हूँ। ब्रिटेन की नई पीढ़ियाँ अपने पूर्वजों की, न्याय संतुलन की मूर्खता को ध्यान से देखेंगी, जो आगामी यहूदी पीढ़ी के लिए भयानक होगा। जिस पाठक को मुझ पर विश्वास न हो उसे इतिहास के पन्नों में इसे ढूँढना चाहिए।

सही कानून क्या है

निश्चय ही कानून बनाये जाते हैं और फिर बनाये जाते हैं, लेकिन कानून तभी कानून होता है जब उसमें प्राकृतिक तत्व होते हैं। यहाँ मैं इसके विस्तार में नहीं जाऊँगा, लेकिन इतना अवश्य जोड़ूँगा कि कानून न्याय्यता का वाहक तभी होता है जब वह अधिनायकत्व पर प्रभावकारी अंकुश लगाने का कार्य करता है; अर्थात् प्रशासकों, विधायकों और न्यायाधीशों को सुविधा का औजार की तरह प्रयोग करने से रोकता है। इसे निश्चय ही राजनीतिक महारथियों की मनमानी और शक्ति की पहुँच से बाहर होना चाहिए। जब इसे वे अपनी इच्छा और सिद्धान्त के अनुसार काम करने वाले साधन के रूप में ढाल सकते हैं, तब कानून स्वतंत्रता की रक्षा और स्वाभाविक न्याय के आश्वासन के अपने मौलिक मूल्यों को खो देता है। पूर्व उल्लिखित प्राकृतिक तत्व इन्हीं मौलिक मूल्यों से संबंधित हैं। एक बार इन मौलिक मूल्यों के खो जाने के बाद, कानून वैधानिक अधिनायकत्व का साधन बन जाता है जिसे विधि वादिता (Legalism) कहते हैं।

वर्तमान अस्तित्वमान ब्रिटिश कानून

ब्रिटेन में ठीक यही हो रहा है। चूकि ये संदिग्ध लोग न तो ब्रिटेन में पैदा हुए थे और न ही उन्होंने इन कथित अत्याचारों को ब्रिटिश नागरिक के रूप में किया था, वर्तमान कानून उनपर अभियोग चलाने की अनुमति नहीं देता है। यहूदी दबाव के आगे झुकते हुए, ब्रिटिश पार्लियामेन्ट, जो ब्रिटिश सम्मान की संरक्षक संस्था है, निष्पक्षता पर आधारित सम्पूर्ण ब्रिटिश सम्मान की

अवधारणा को मलिन करने के कगार पर पहुँच गयी है। निष्पक्षता तभी संभव है जब यह पूर्वाग्रह मुक्त हो, पर जब स्वयं कानून को ही किसी खास उद्देश्य के अनुकूल ढाला जाय तब यह मौलिक पूर्वाग्रह का ही प्रमाण है, क्योंकि यह दिखाता है कि साधन को सही सिद्ध करने के लिए "अन्त भला" पर विचार किया जा रहा है।

निष्पक्षता की ब्रिटिश परम्परा के विरुद्ध, जिसकी विशेषता एक समय सम्पूर्ण साम्राज्य में प्रतिध्वनित थी, यह एक उच्च स्तरीय राजद्रोह की कार्रवाई है। जो भी इस दानवी कृत्य के लिए दोषी हैं उन्हें इतिहास के कठघरे में खड़ा होना पड़ेगा ताकि वे अनन्त काल तक निन्दित होते रहें जिसके वे पात्र हैं।

शेर दिल रिचार्ड

यदि ये व्यक्ति वास्तव में अपराधी होते, तो गत चालीस वर्षों से भी अधिक समय से जब से वे इस देश में रह रहे हैं, अपराध किये होते। पर उसके विपरीत, वे इस देश के कानून को मानने वाले नागरिक रहे हैं और इस प्रकार ब्रिटिश कानून और इस देश की नैतिक शक्ति के अधीन संरक्षण के योग्य हैं। यह मानते हुए कि आरोपित अत्याचार के वे दोषी हैं, उन्होंने वही किया जो उस समय पूर्वी यूरोपीय देशों में दूसरा कोई कर रहा था। यहूदी पर प्रहार दूसरे विश्व युद्ध के समय शौक में बदल गया था जैसा मुसलमान या यहूदी की हत्या करना क्रूसेड के समय में पुण्य का कार्य समझा जाता था। क्या किसी ने कभी शेर दिल रिचॉर्ड को पवित्र नरमेध में भाग लेने के कारण भला–बुरा कहा?

शान्तिकारक घटक

यदि इन व्यक्तियों ने गलत किया तो स्थानीय प्रेस द्वारा पैदा की गयी असामान्य परिस्थितियों का शिकार बन कर ही किया, जिसने यहूदियों की हत्या के लिए उकसाया, स्थानीय पुलिस ने यहूदियों की रक्षा करने के बदले उनके उन्मूलन की कार्रवाई की और स्थानीय शासन ने यहूदी पर प्रहार को पुरस्कृत किया। आप उन मनुष्यों पर कैसा अभियोग चलायेंगे जो सही कार्य की अर्न्तदृष्टि खो चुके हैं ? उनके विषय में निर्णय उन देशों की तत्कालीन परिस्थितियों और कानूनों के अलोक में ही लिया जा सकता है। सामान्य लोगों पर लागू किये जाने वाले आचार के नियमों को मानसिक रोगियों पर लागू

करना मूर्खतापूर्ण और अनुचित है। ये संदिग्ध लोग स्वयं स्थानीय वातावरण के शिकार थे। क्या ऐसा कोई व्यक्ति हो सकता है जो अपने आसपास के सामाजिक प्रभाव से सदा मुक्त हो?ण

एडवार्ड–। और यहूदी

सर्वकालिक न्याय की अवधारणा सर्वाधिक खतरनाक प्रलाप है। एडवार्ड। के विषय में क्या कहा जाय? उसने यहूदियों को इंगलैण्ड और गैसकोनी से बाहर निकाल दिया और इस प्रकार बहुत बड़े दुःख में डाल दिया। यहूदी पर प्रहार के लिए हमें उसको दण्डित नहीं करना चाहिए?

चूंकि अनेक अपराध कानून के नाम पर किये जाते हैं, ऐसी अपवित्रता को पवित्र बनाने का एक अंग्रेजी नजीर है। चार्ल्स।। ने ओलिवर क्रामवेल की हड्डियों को खुदवा कर निकलवाया और उनको फाँसी पर चढ़ाया। ऐसा पागलपन पार्लियामेन्ट क्यों नहीं करता है जिसे कानून, कालातीत न्याय की अवधारणा को तार्किक निष्कर्ष तक ले जाने की अनुमति देता है? यहूदियों को खुश करने के अतिरिक्त यह स्कॉट लोगों को भी तुष्ट करेगा, जिन्होंने एडवार्ड के कठोर भावभंगी के बारे में बराबर रोना रोया है।

भूतलक्षी कानून निर्माण

इस प्रकार का अत्याचार उस सरकार के लिए कुछ भी नहीं है जो विगत काल से संबंधित कानून बनाने की प्रक्रिया में सम्मिलित होने के लिए तैयार है। "स्ट्रोस्पेक्टिव लेजिशलेशन" क्या है ? यह मनुष्य के अन्दर की कालिमा से उछलती है क्योंकि अधिकार की क्रूर शक्ति घोषित करती है कि एक विशेष कानून अतीत में विद्यमान था, जहाँ वास्तव में यह विद्यमान नहीं था और न कभी किसी ने सुना था। ऐसे कानूनों को पारित करना और उन्हें कानून की पुस्तकों में शामिल करना, नाजियों की विशेषता थी जिन्होंने अपने विरोधियों की वैधानिक हत्या में निपुणता प्राप्त की थी। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के अनुकरण के लिए क्या ही उदाहरण है!

हेनरी VII

सामान्यतः विगत काल से संबंधित कानून का निर्माण, अवैधानिकता और उससे जुड़ी भयंकरताओं को वैधानिक बनाने की कार्रवाई है। इंगलैण्ड में हेनरी VII ने इस साधन का प्रयोग किया और स्वयं को वास्तविक राज्याभिषेक की

तिथि से एक दिन पूर्व इस देश का राजा घोषित किया था। हेनरी VII उत्पीड़क राजा था और किसी का सर उतार सकता था, पर यह 'अन्याय और क्रूरता' से नामांकित था, जो उसकी राजसी प्रतिमा की शालीनता के लिए बुरा था।

इस चालबाजी का उद्देश्य उसके सभी विरोधियों को गद्दार घोषित करना था जिन्होंने उसके "वैधानिक" अधिकार में बाधा पैदा की थी जबकि इंगलैण्ड की राजगद्दी के लिए बहुत संदेहात्मक दावे के साथ आक्रमणकारी होने के कारण वह वास्तव में उस पर अधिकार नहीं रखता था। वह अपने सभी विरोधियों को वैधानिक दण्ड देना चाहता था। कानून के नाम पर किया गया अपराध सर्वाधिक सुन्दर लगता है जबकि वास्तव में वह सबसे अधिक भद्दी चीज होती है। सच्चाई की कौन परवाह करता है? लोग सामान्यतः मुखाकृति से प्रभावित होते हैं। जितनी ही आकर्षक कोई चीज होती है उतनी ही उसका जोर होता है। यह तथ्य समान रूप से विगत काल से संबंधित कानून निर्माण पर लागू होता है जिसे न्याय के आवरण में बदला के लिए दण्डित करने हेतु यहूदियों को समर्थ करने के लिए ब्रिटिश सरकार पारित कर सकती है।

हाउस ऑफ लॉर्ड्स

मैंने ब्रिटिश हाउस ऑफ लॉर्ड्स के स्तर को ऊँचा करने के लिए तर्क दिया था और सलाह दी थी कि इसके सदस्यों को चुनाव के अधीन न ला कर योग्यता के आधार पर नियुक्त किया जाय, विशेष रूप से उन सेवाओं के परिप्रेक्ष्य में जिसे उन्होंने देश के लिए किये हैं।

हाउस ऑफ लॉर्ड्स में, पहले से ही, बहुत ऐसे कुलीन पुरुष हैं। ऐसे बिल को गिरा कर, इस देश की सम्माननीय परम्परा की रक्षा सम्भवतः ये लोग अवश्य करेंगे। इस कुलीन सदन की प्रशंसा की भावना मेरे मन में प्रचुरता से रही है। लोकतंत्र के मार्गदर्शन और अतिलोलुप कर–संग्रही लोगों के कदमों को रोकने हेतु, चूंकि यह संस्था एक बड़ी मानवीय निकाय है, मैं आशा करता हूँ कि यह बुराई को कली के रूप में ही मसल देगी।

जर्मन पर आघात

ऐसे बिल के कानून बनने के अनुमान को लगता है, ठीक से नहीं समझा गया है :

नाजी कैम्पों के भय का प्रचार नियमित यहूदी व्यवहार बन गया है, जो [illegible] की श्रेणी में पहुँच कर कुछ विशेष पुरस्कार प्राप्त करने की चेष्टा

करता है। अभाव एवं कष्ट में से धन जोड़ने के अलावा यह जर्मन चरित्र हनन में आदतन संलग्न होता है। यह बदला की एक कार्रवाई है जिसका उद्देश्य जर्मनों को एक घृणित जाति चित्रित करना है। यह बिल्कुल अनुचित है क्योंकि जर्मन महान लोग हैं, जिनकी सभ्यता को वैज्ञानिक, औद्योगिक, सांस्कृतिक और पांथिक देन, किसी परिचय का मुहताज नहीं है। क्या कोई राष्ट्र ऐसा है जो इतिहास में कभी न कभी अपने पड़ोसियों के प्रति आक्रामक न रहा हो ? धार्मिक उत्साह के साथ जर्मनों को ही क्यों चुना जाय? मैं निश्चय ही जर्मन अत्याचार को क्षमा नहीं करता हूँ लेकिन यह मुझे समान रूप से व्यग्र करता है कि किसी ने अब तक, युद्ध के पूर्वकाल में, जर्मनों के प्रति यहूदी दृष्टिकोण के दोष को नहीं बाँटा। एडोल्फ हिटलर को पागल कहना उचित नहीं है। जिस व्यक्ति ने अपने लोगों के विश्वास को जीता और अनेक वर्षों से पूरे संसार के समक्ष खड़ा रहा, पागल नहीं हो सकता। उसकी विलक्षणता, यद्यपि बुराई की ओर झुकी थी, बेहतर मूल्यांकन की अपेक्षा करती है। उसकी महत्वाकांक्षा महान सिकन्दर या नेपोलियन बोना पार्ट से अधिक नहीं बढ़ी थी।

जर्मन विरोधी प्रचार बन्द करो

यह तथ्य कि जर्मन, यूरोपीय समुदाय के प्रबल समर्थक बन चुके हैं, दिखाता है कि उन्होंने राष्ट्रवाद के दोषों को समझ लिया है और मानव जाति का भाग बनना चाहते हैं। उनकी भागीदारी उनके पश्चाताप को प्रमाणित करती है। इसके अलावा उन्होंने अपनी मूर्खता का मूल्य चुकाया है और अब वे एक साफ स्लेट जैसा हैं। उनकी भागीदारी अपने सभी यूरोपियन सहयोगियों से उचित सम्मान की माँग करती है। अविश्वास का निरन्तर अभियान और जर्मन चरित्र हनन अन्ततः जर्मनों को उत्तेजित करेगा और यूरोपीय समुदाय को अस्थिर बना देगा। यह सर्वोच्च समय है जबकि ''सोबा'' व्यापार अर्थात् अग्निकुंड दाह और जर्मनों के विरुद्ध घृणापूर्ण उपदेश का प्रचार पूरे यूरोपीय समुदाय में अवैधानिक बना दिया गया। विवेक की माँग है कि यहूदी इस चेतावनी पर ध्यान दें। यूरोपीय एकता का स्वप्न अब वास्तविकता बनने वाला है। पूर्वी नस्ल होने के कारण यहूदियों को ही भोगना पड़ेगा। उनका भविष्य पूरब में अर्थात् मूसा और दाऊद के देश में है। मैं इस निष्कर्ष के विकास को रोकना चाहता हूँ, क्योंकि मेरी समझ से कोई भी यहूदी वैसा ही मनुष्य है जैसा दूसरा कोई और। इस प्रकार वह समान महत्व और सम्मान का अधिकारी है।

नाजी जैसा यहूदी

यदि अतीत से संबंधित कानून बनाने का उद्देश्य, उन लोगों के विरुद्ध न्याय को लागू करना है, जिन्होंने यहूदियों को क्षति पहुँचायी, तब यह एक नया मार्ग खोल देता है, जो अति कल्पनाशील उपन्यासकार की कल्पना से भी बहुत अधिक भयंकर होगा। नाजी अकेले यहूदी संहारक नहीं थे। इतिहास में अंकित है कि कुछ यहूदी भी थे, जिन्होंने गैस चैम्बर की त्रासदी में अपने सजातीय यहूदियों को भेजा। कुछ ने अपने संबंधियों की रक्षा के लिए ऐसा किया और कुछ इतने नीच थे कि पुरस्कार रूप में प्राप्त आर्थिक लाभ के लिए इसे व्यापार बना कर किया।

एक हत्यारा, हत्यारा ही होता है चाहे वह किसी का भाई हो या अपरिचित। ऐसे यहूदियों को ढूँढ निकालने के लिए ब्रिटिश सरकार ने क्या किया ? इजराइली सरकार ने उनको कटघरे में लाने का कोई उपाय किया? सम्भवतः किसी स्वास्थ्य लाभ केन्द्र में उनकी देखभाल की जा रही होगी।

ब्रिटिश यहूदी और फीलीस्तीनी

अन्त में यह अधिक दूर तक मौलिक महत्व का प्रश्न उठाता है, जो स्वयं यहूदियों के सम्पूर्ण विरोध में जाता है। न्याय, न्याय तभी होता है जब वह सभी पीड़ितों के लिए हो न कि किसी एक विशेष वर्ग के लिए। यदि ब्रिटिश सरकार न्याय वितरण हेतु इतना उत्सुक है कि अपने वैसे नागरिकों पर अभियोग चलाने हेतु कानून बदलना चाहती है जो न यहाँ पैदा हुए थे और न पाले—पोसे गये थे, तब उसे वैसे सभी ब्रिटिश नागरिकों पर भी अभियोग चलाने हेतु समान रूप से उत्साहित होना चाहिए जो यहीं पैदा हुए थे और यहीं पाले—पोसे गये थे, और दूसरों को क्षति पहुँचाने के जिम्मेवार हैं। निश्चय ही फीलीस्तीनियों से संबंधित मामलों में मैं ब्रिटेन में जन्में यहूदियों का उल्लेख कर रहा हूँ।

फीलीस्तीनियों के दुःख, अपमान और हत्या के लिए ब्रिटिश यहूदी सीधे जिम्मेवार हैं। क्यों? क्योंकि प्रत्येक यहूदी को इसराइल का नागरिक समझा जाता है। दूसरी बात, ब्रिटिश यहूदियों का अनुदान निश्चय ही इसराइली राज्य के अस्तित्व में बड़ा योगदान है। और तीसरी बात, बहुतेरे ब्रिटिश यहूदी ऐसे हैं, जिनका दूसरा घर और व्यापार इसराइल में है।

ब्रिटिश यहूदियों ने फीलीस्तीनियों के प्रति इसराइली भावभंगी के विरुद्ध कभी प्रदर्शन किया है? नहीं, बिल्कुल नहीं। फिर भी वे न्याय की रट लगाते हैं। यह विचित्र बात है कि अपने निवास वाले देशों में वे जातीय भेदभाव सहन नहीं कर सकते हैं जबकि उनकी मातृभूमि इसराइल की स्थापना ही जातीय आधार पर हुई है। सभी फीलीस्तीनी दूसरी श्रेणी के नागरिक हैं लेकिन सभी यहूदी, दूसरे देशों के व्यापारिक, औद्योगिक और राजनीतिक जीवन में उच्च स्थान ग्रहण करने के कारण फैलाव में प्रथम श्रेणी से भी ऊपर के नागरिक हैं। मैं इस लेख को सफलता पूर्वक बहुत अधिक विस्तारित कर सकता हूँ लेकिन मैं वैसा नहीं करूँगा, क्योंकि इस आलोचना का उद्देश्य यहूदी विरोध नहीं है बल्कि धर्मान्धता का सांघातिक दुष्परिणाम उजागर करना है जो मनुष्य को उसकी दृष्टि सीमित और सद्विवेक बाधित कर, निम्न स्तरीय पशु की श्रेणी में ला देता है।

आधुनिक यहूदी अपनी सामाजिक स्थिति में सुधार के लिए अपनी खुली मानसिकता के प्रति कृतज्ञ हो सकते हैं जिसे उन्होंने नेपोलियन की जाँच के प्रत्युत्तर में प्रदर्शित किया था। यहूदीवाद से बिना पीठ फेरे वे उदार हो सकते हैं। बँधी मुट्ठी की कूटनीति ने उनके लिए दुःख के सिवाय और कुछ नहीं दिया है। उनके बच्चे और कुमारियाँ मानवीय गौरव एवं आदर के अधिकारी हैं। यह सर्वोच्च समय है जब उन्होंने गैर यहूदियों से शत्रुता की जगह अपने हाथ थोड़ा ढीले किये। जब तक वे क्षमा को अपनी संस्कृति का भाग नहीं बनाते, इतिहास अपने को दुहराता रहेगा। शामी सांस्कृतिक धारा का विरोध के अंत का कोई साक्ष्य नहीं है; यह मात्र शिथिल हुआ है। इस स्थिति में बदलाव के लिए जैसे ही किसी का हित उपस्थित होगा, सम्भव है, यह पुनः सर उठावे।

इस्लामी धर्मान्धता

दुनिया में सिर्फ यहूदी ही धर्मान्ध नहीं हैं। धर्मान्धता का स्रोत कहीं भी हो यह विध्वंसक है। जिस प्रकार यहूदी धर्मपरायणता यहूदीवाद को बनाये रखने के लिए आंशिक रूप से उत्तरदायी है, इस्लामी धर्मान्धता मुस्लिम राजनीतिज्ञों के प्रभुत्व का हथियार बना है, जो जानबूझ कर इस्लाम के नाम पर अपना मतलब साधने के लिए इस्लामी सिद्धान्तों को विकृत करते हैं। ऐसा करना

उनके लिए बिल्कुल आसान है। चूकि इस्लाम में कोई औपचारिक पुरोहित नहीं है, मुस्लिम धर्मगुरू ईसाई पादरी की तरह अपने बल पर कोई आधिकारिक स्थान नहीं पा सकता है। इसलिए उसकी सांसारिक कमजोरी ने उसे राजनीतिज्ञ का गुड़िया बना दिया है। उसके उद्देश्य के अनुकूल कुरान की व्याख्या पर ही उसकी कृपा निर्भर है।

मुल्ला और शिक्षा

मुस्लिम मुल्ला एक शिक्षित आदमी होता है, लेकिन उसकी शिक्षा एक पक्षीय होती है क्योंकि वह कुर्आन और हदीस के अलावा शायद ही कुछ जानता है। वह सामान्यतः भक्त होता है लेकिन गरीबी उसकी ईमानदारी के लिए समस्या खड़ी कर देती है। राजनीतिज्ञों के अनुकूल तोड़—मरोड़ से वह कृतज्ञता अनुभव करता है, न कि कुरान की सही व्याख्या से, जो विश्वासियों को यह विश्वास कराता है कि बर्फ इतना गर्म है जितना आग और गौरेया गरुड़ से भी ऊँचा उड़ सकती है।

कुरान के कानून

इस तथ्य को समझने के लिए इसकी अवश्य अनुभूति होनी चाहिए कि मुसलमान कुर्आन को अल्लाह का अंतिम संदेश, और इसका उद्देश्य कानून की शाश्वत संहिता द्वारा मानव जाति का पथ प्रदर्शन करना, मानते हैं। चूकि कुरान के कानून सदा के लिए हैं इसलिए स्पष्टतः इसका अर्थ है कि यह सभी परिस्थितियों और सभी गुणों के लिए वैधानिक मार्गदर्शन में समर्थ है। ऐसा कानून निश्चय ही अपना सारतत्व खोये बिना व्याख्या में समर्थ होना चाहिए। राजनीतिज्ञ की इच्छा के समक्ष मुल्ला के झुकाव ने कुर्आन को शाश्वत वैधानिक मार्गदर्शक के रूप में एक बड़ा धक्का दिया है। मुस्लिम विद्वानों द्वारा इसपर जोर दिया गया है कि एक बार कोई सिद्धांत इजतिहांद (वैधानिक प्रयास) द्वारा सर्वसम्मति से स्वीकार हो गया है तो वह अंतिम है और समय की अवधि का बिना विचार किए सभी युगों में मुसलमानों के लिए बाध्यकारी है। इस प्रकार उन्होंने विधि सम्मत विचार के मूल्य को नष्ट कर दिया है और इस्लाम को जड़ और जीवन की प्रतिगामी संहिता बना दिया है।

कत्ल–ए–मुर्तद

उदाहरण के लिए सर्व सम्मति से स्वीकृत सिद्धान्त कत्ल–ए–मुर्तद (मजहब छोड़ने वाले की हत्या) को लें, यह पूरी तरह कुर्आन के सिद्धान्त के विरुद्ध है जो स्पष्टता के साथ कहता है कि एक मजहब त्यागने वाला तभी कत्ल किया जाय जब वह मजहब त्यागने को खेल बना देता है अर्थात् वह बार–बार इस्लाम को स्वीकार करता और छोड़ता है। आगे यह इस तथ्य से और भी पुष्ट होता है कि झूठा दिखावा पैगम्बर के लिए सबसे बड़ा घृणित कार्य था। यदि कोई व्यक्ति मुस्लिम पैदा हुआ और इस्लाम का त्याग करना चाहता है, वह हत्या के भय से वैसा नहीं करेगा और पाखण्डी बन कर रहने को बाध्य होगा। कुर्आन की आत्मा पूर्ण रूप से इसे संपुष्ट करती है कि पैगम्बर ने पाखण्डी की तुलना में मजहब त्यागी को वरीयता प्रदान की थी। वह सच्चे अनुयायी चाहते थे मौखिक विश्वासी नहीं। यही कारण है कि कुर्आन कहता है 'ला एकराम फे दीन' अर्थात दीन की कोई बाध्यता नहीं है।

इसी दृष्टिकोण के कारण बहुत से मुस्लिम देश शरिया का पालन नहीं करते हैं। उदाहरण स्वरूप, टर्की ने इसे १९२६ में ही छोड़ दिया और ''स्वीस फेमिली ला'' अपनाया; भारत और पाकिस्तान आवश्यक रूप से, मिले–जुले कानून वाले देश बने हैं। यहाँ तक कि मिश्र और ट्युनीशिया में भी शरिया न्यायालयों का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। बहुतेरे मुस्लिम देश बहु विवाह को समाप्त कर चुके हैं, तलाक के नियमों में संशोधन किये हैं और साक्ष्य पद्धति में रूपान्तरण किये हैं।

दूसरी बात, इस्लाम को व्यावहारिक मजहब बनाने वाला तथ्य यह था कि अमीर–उल–मोमिनीन (मुस्लिम समुदाय का प्रधान) को मत का व्यावहारिक आदर्श होना पड़ता था। ईमानवालों को, इस कानून के कड़ाई से पालन के प्रति आश्वस्त होने के लिए, कुर्आन उन्हें वैधानिक अधिकार देता है कि गलत शासक के विरुद्ध वे उठ खड़े हों :

''तो तू झुठलाने वाले का कहा न मान। और किसी कसमें खाने वाले पतित के कहे में मत आना। जो आवाजें कसता और चुगली करता फिरे। (और जो) अच्छे कामों से रोकता है, जियादती करने वाला भारी गुनहगार है, उज्जड है इसके बाद बदजात भी।'' (अल–कलम ६८:८,१०,११,१२,१३)

आज किसी को भी मुस्लिम नेतृत्व को देखना चाहिए ताकि वह अनुभव कर सके कि अब अनेक मुस्लिम देशों में मजहब का पालन नेतृत्व का अभिन्न भाग नहीं रह गया है। उसके बदले में मुस्लिम अनुयायी सावधानी से और अत्यधिक ''इस्लाम'' शब्द से संवेदनात्मक रूप में जोड़ दिये गये हैं। जो भी प्रभावी ढंग से इसका प्रयोग कर सकता है, मुस्लिमों के आज्ञापालन को नियन्त्रित करता है। यही कारण है कि इस्लाम अंधविश्वास में बदल गया है और राजनीतिज्ञ और सामाजिक प्रतिष्ठा चाहने वालों के लिए प्रभुत्व का औजार की तरह काम करता है। यह कुरान की मनमानी गलत व्याख्या ही है जो इस्लामी दुनिया को अवनति की ओर ले गया। प्रत्येक मुसलमान अपने तरह के इस्लाम का बिना यह जाने कि वास्तविक इस्लाम क्या है, पालन करना चाहता है। वास्तव में, इस्लाम के सच्चे सिद्धान्त, गलत व्याख्या के अन्धकार से इस हद तक आच्छादित किये जा चुके हैं कि पुन: उन्हें स्थापित करना संभव ही नहीं रह गया है। यही कारण है कि इस्लाम बहुत फिर्कों में बँट गया है; यह पूरी तरह गैर इस्लामी है : ''जिन लोगों ने अपने दीन में भेद डाला और कई फिर्कों में बँट गये, तुमको उनसे कोई काम नहीं....।'' (अल–अन्आम ६:१५९) इस्लाम जो फिर्कों में बँट गया, वह इस्लाम ही नहीं है। मुस्लिम संसार की वर्तमान स्थिति पैगम्बर के चरित्र और शिक्षाओं को प्रतिबिम्बित नहीं करती है। इसके विपरीत, पैगम्बर ने जो नापसंद किया और जिसे मना किया, उसका प्रतिनिधित्व करती है। जिस इस्लाम को पैगम्बर ने प्रतिपादित किया, अपने अनुयायियों को हजार वर्ष तक दुनिया पर शासन करने के योग्य बनाया। यही कारण है कि कुर्आन कहता है : ''तुम लोग सबसे श्रेष्ठ उम्मत (संगत) हो जो लोगों के लिए पैदा की गई है कि भली बात का हुक्म देते हो और बुरी बातों को मना करते हो,.....।'' (आले इम्रान ३:११०)

क्या इस पर किसी टिप्पणी की आवश्यकता है?

यहूदियों पर अल्लाह का अभिशाप

इस लम्बे स्पष्टीकरण के बाद, मैं इस्लामी धर्मान्धता की चर्चा पर पुन: लौटता हूँ; कुर्आन कहता है : ''जो यहूदी हैं उनमें कुछ (ऐसे भी) हैं जो बातों को (उनके) ठिकाने से फेरते (माने बदलते) हैं.....लेकिन उन पर तो उनके कुफ्र की वजह से अल्लाह की लानत है.....।'' (अन–निसा ३:४६)

अल्लाह के अभिशाप की व्याख्या

दुनिया भर में मुसलमानों ने इन आयतों की व्याख्या की कि अल्लाह के अभिशाप का मतलब है सर्वशक्तिमान द्वारा यहूदियों को कभी फीलीस्तीन लौट कर अपना राज्य स्थापित करने की अनुमति नहीं देना। यह व्याख्या मुस्लिम विश्वास का एक मौलिक भाग बनी। यही कारण है कि प्रत्येक मुसलमान ने जब १४ मई १९४८ को इसराइली राज्य की घोषणा हुई यह अनुभव किया कि उस पर बिजली गिर गई। यह साबित करने के लिए कि यह क्षणिक स्थिति है अरब समुदाय जिसमें फीलीस्तीनी भी शामिल थे, सभी यहूदियों को समुद्र में डुबा देना चाहते थे; बाद में होने वाले युद्ध इस्लामी धर्मान्धता को तुष्ट करने की कार्रवाई थी।

प्रत्येक राष्ट्र को एक गृह–राज्य का अधिकार है, और यहूदी भी इसका अपवाद नहीं है। यदि हम इस व्याख्या को स्वीकार कर लें जैसा मुस्लिम विद्वानों ने इस आयत की, की है, तब इसका मतलब है कि कुर्आन गलत है क्योंकि यहूदी राज्य एक सच्चाई बन चुका है। मेरा दृष्टिकोण इस सोच पर है कि असली दोष व्याख्याकारों का है। मुस्लिम के रूप में पैदा होने और इस्लामी विद्वान के रूप में प्रशिक्षित होने के कारण मैं जानता हूँ कि कुरान की बार–बार गलत व्याख्या की गयी है। ऐसा उनके द्वारा किया जाता रहा है जो मुस्लिम उत्साही के रूप में इस्लाम के लिए बिना सच्ची श्रद्धा के ही शक्ति और प्रभाव चाहते हैं।

यहूदी अधिकार और बहादुरी

यहूदियों को अन्य किसी राष्ट्र की तरह अपने गृह–राज्य का अधिकार है। यहूदी गृह–राज्य कहाँ है ? यह वही राज्य होना चाहिए जिसे यहूदियों ने सदा प्यार किया है और पूजा है। स्पष्टत: यह फीलीस्तीन है जो यहूदियों के सच्चे विश्वास के अनुसार ईश्वर की प्रतिज्ञा से प्राप्त है। कोई राष्ट्र, यहूदियों के आधा भी अपने राष्ट्र के प्रति श्रद्धा का प्रदर्शन नहीं किया है। फीलीस्तीन, उनकी दृष्टि, उनका धड़कन और सबसे बढ़कर, उनके विश्वास का अभिन्न भाग रहा है। वे प्रभावशाली रोमन साम्राज्य के विरुद्ध खूनी युद्ध लड़े। उनका साहस, प्रतिबद्धता और शूरता, अपनी पवित्र भूमि की रक्षा के लिए, जो यहवे

की भेंट और चरम भक्ति का प्रतीक था, की कोई सीमा नहीं थी। भक्ति का चरम क्यों? बिना शक्तिशाली, अद्‌भुत और उज्ज्वल भक्ति के वे खूनी युद्ध नहीं लड़ सकते थे, जिसे १३२ से १३५ ई० के बीच और पुन: अन्टोनिनस पीयस के शासन काल में १३८ से १६१ ई० के बीच लड़ा गया। ये युद्ध स्वतंत्रता, आचरण की निष्ठा और विश्वास की भक्ति के आदर्श पर आधारित थे और इस लिए भक्ति के चरम को चिन्हित करते थे; क्योंकि न केवल उन्होंने ९८५ शहरों के दसवें भाग को नष्ट किया बल्कि ५,८०,००० पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की हत्या भी की। यहूदी जनसंख्या घट कर आधी रह गई। मैं यहूदी बहादुरी की प्रशंसा करता हूँ। प्रत्येक बलिदानी एक बहादुर था जिसका खून दैवी पवित्रता में घुला था। स्वतंत्रता प्रेमी के रूप में मृत्यु का चुनाव, दासता के जीवन की तुलना में, सम्मान और ईश्वरत्व के निकट है। ये यहूदी देव तुल्य थे और उनका खून पवित्र, विशिष्ट और उत्कृष्ट था। वे उन यहूदियों से भिन्न प्रजाति के थे, जो मेमनों की तरह नाजी गैस चैम्बर में गये। यद्यपि वे युद्ध हार गये, उनके संघर्ष की गुणवत्ता सच्चे मानवीय गुणों से पूर्ण थी और मनुष्य के सर्वोच्च स्वप्न को रेखांकित करती थी।

फीलीस्तीन, मनुष्य का सबसे बड़ा रोमांच

यहूदियों के सिर्फ त्याग ही, फीलीस्तीन को उनका स्वाभाविक घर नहीं बनाते, बल्कि इस देश के प्रति उनका अमर प्रेम भी। फीलीस्तीन के लिए यहूदी प्रेम सबसे बड़ा रोमांच है जिसकी मनुष्य कल्पना कर सकता है। इसकी पवित्रता आसमान चूमती लगती है, जब हम अनुभव करते हैं कि यह प्रेम किसी चाहना पर नहीं, बल्कि बिना किसी पुरस्कार की आशा के, भक्ति पर आधारित है। क्या मैं अतिरंजित कर रहा हूँ? बिल्कुल नहीं। बाहर में नये गृह–राज्य की स्थापना के अनेक अवसर उन्हें मिले थे। उदाहरण के लिए, १९०३ ई० में ब्रिटिश सरकार ने उन्हें उगाण्डा में ६००० वर्ग मील खाली जमीन देने की पेशकश की थी जिसे उन्होंने ठुकरा दिया। क्योंकि वे अपने घर जाना चाहते थे, जो फीलीस्तीन है। वास्तव में वे हमेशा फीलीस्तीन वापस जाना चाहते थे। उनकी यह लालसा और इसे पाने के नि:स्वार्थ प्रयास की कहानी बड़ी लम्बी है। इस पवित्र भूमि से यहूदी लगाव आह्लादकारी और

भक्ति से सराबोर है; बिना इस संबंध के वे अपनी सम्पत्ति, श्रेणी और सुविधा को जिसका वे विस्तार में भोग कर रहे थे, भयानक अनिश्चितता के बदले जो फीलीस्तीन में उनकी प्रतीक्षा कर रही थी, लात मारने की इच्छा नहीं कर सकते थे। एक न्यू यॉर्क, न्यू साउथ वेल्स, नोवा स्कोटिआ, न्यू इंगलैण्ड है, पर कोई न्यू इसराइल नहीं है। क्यों? कारण स्पष्ट है।

जेरूसलम की अखण्डता

फीलीस्तीन क्या है? यह भूमध्य सागरीय पूर्वी तट स्थित एक प्रदेश है। किसी समय यह इसराइल और जुडा राज्यों से सुशोभित था। लेकिन अब बहुत शताब्दियों बाद परिस्थिति बदल गई है। संयुक्त राष्ट्र ने २९ नवम्बर १९४७ को फीलीस्तीन में अलग—अलग अरब और यहूदी राज्यों की स्थापना का अनुमोदन किया। यद्यपि यहूदी आधुनिक लेबनान और सीरिया के क्षेत्रों का, जिसका विस्तार यूफ्रेट्स तक है, का दावा कर सकते हैं जिनपर कभी डैविड (दाऊद) और सोलोमन (सुलेमान) ने शासन किया था, लेकिन उन्हें यथार्थवादी होना चाहिए और फीलीस्तीनियों के अधिकार को भी स्वीकार करना चाहिए क्योंकि वे भी एक गृह—राज्य के अधिकारी हैं। सिर्फ उतना ही नहीं, उन सभी फीलीस्तीनियों को जो उनकी सीमा में निवास करते हैं पूर्ण मानवीय अधिकार प्रदान करना उनका कर्तव्य है। विदेशी भूमि पर वे स्वयं सभी ऐसे अधिकारों का लाभ प्राप्त करते हैं। जो भी हो, वे जेरूसलम का कोई भाग नहीं छोड़ सकते हैं, जो डेविड का सपना, सोलोमन का प्यार और यह्वे की दुल्हन है। बिना सम्पूर्ण जेरूसलम के इसराइल वैसा ही है जैसा बिना दृष्टि की आँख, बिना पूर्णता की शादी, बिना प्रकाश के उल्का, बिना वर्षा के बादल और उत्तेजना के बिना रोमांच। यह धर्मान्धता की बात नहीं है, यदि वैसा होता, मैं खुले रूप से इसका विरोध करता। यह तथ्यपूर्ण बात है कि जेरूसलम यहूदीवाद है और यहूदीबाद जेरूसलम। हेतुवादी होने के कारण, मेरा यह विश्वास है कि हर व्यक्ति को अपनी पसंद का विश्वास धारण करने का अधिकार है, बशर्ते यह अन्य लोगों के दृष्टिकोण के प्रति सहिष्णुता और सम्मान के समर्थन की भावना रखता हो। चूकि जेरूसलम की पवित्रता यहूदी विश्वास का अभिन्न भाग है, जेरूसलम के विभाजन का अर्थ होगा यहूदी

मजहब का ही विनाश। यही वह बात है, जो उसे अविभाज्य बनाती है। यह्वे की दुल्हन सतीत्व हरण के लिए उपलब्ध नहीं हो सकती।

हाँ, प्रभु की दुल्हन स्पर्शणीय नहीं है। इसका विभाजन धर्मभ्रष्ट आचरण है। विभाजन का अर्थ है अपवित्रीकरण। अब जेरूसलम को अपवित्र क्यों करना है? इसलिए कि अब यह यहूदी हाथ में है? तब, हर प्रकार के औचित्य की दृष्टि से यह यहूदी नगर है और इस तथ्य को स्थापित करने के लिए मैंने इस पाठ के आरम्भ में ही इसकी पृष्ठभूमि के बारे में लिखा है।

ऐसा कहना निरर्थक है कि यहाँ ईसाई और मुस्लिम पवित्र स्थल हैं इसलिए इसे अन्तर्राष्ट्रीय नगर समझना चाहिए। मक्का के बारे में? एक बिलियन विभिन्न राष्ट्रीयताओं के मुसलमान इसकी पवित्रता में विश्वास करते हैं, यह सत्य है। फिर भी यह वैधानिक और नैतिक रूप में सऊदी अरब का अभिन्न भाग है। उसी प्रकार रोम भी सभी नस्लों के ईसाइयों का पवित्र केन्द्र होने के बाद भी, इटली का भाग है। यह कहना कि जेरूसलम का भाग विजित प्रदेश है इसलिए इसे छोड़ देना चाहिए और भी बड़ी अनर्थकता है। यहूदियों ने कुछ भी नहीं जीता है; उन्होंने पुनः ग्रहण मात्र किया है जो वैधानिक रूप से उनका था। यदि निष्पक्षता से हम इस बात पर ध्यान दें, तो देखेंगे कि अरब ही फीलीस्तीन में जीत कर हैं। क्या उनसे फीलीस्तीन को मुक्त कराया जाना चाहिए ?

इसका उत्तर जोर के साथ ''नहीं'' है क्योंकि वे वहाँ इतने दिनों से हैं कि फीलीस्तीन अब उनका घर हो चुका है। वे गृह—राज्य के अधिकार और प्रतिष्ठा के सभी पक्षों के अधिकारी हैं, लेकिन अनन्य रूप से सम्पूर्ण फीलीस्तीन उनका नहीं है। यहूदी इसके एक भाग के स्वाभाविक दावेदार हैं जिसे इसराइल कहते हैं, फिर भी, बहुत लम्बे समय से उन्हें अपने इस मौलिक अधिकार से वंचित रखा गया है। यहूदीवाद को इसने प्राणघातक परिणामों से परिपूर्ण एक गंभीर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बना दिया है, जो सम्भवतः यहूदी असुरक्षा की भावना से और भी बढ़ सकता है।

गहन परीक्षण दिखाता है कि असुरक्षा की भावना हीन मनोग्रन्थि का स्रोत होती है जो काल्पनिक श्रेष्ठता के ऊपरी वस्त्र को धारण कर अपनी कमियों

को छिपाती है और आडम्बर एवं युद्धरतता द्वरा इसे पुष्ट करती है। लम्बे समय तक गृह विहीन रहना और अस्तित्व का निरन्तर भय, यहूदियों की असुरक्षा की भावना का स्रोत रहा है। यह उन्हें सामान्य जन के दर्शन एवं दृष्टिकोण के विपरीत ले जाता है। परिणामस्वरूप, मानवता से संबंधित उनकी समायोजन की योग्यता को गम्भीर आघात लगा है और दूसरे लोगों से समान व्यवहार करना यहाँ तक कि मानव जाति का सदस्य समझना, उनके लिए कठिन होता है। यहूदी समस्या का समाधान उनके उन्मूलन में नहीं बल्कि उन्हें सुरक्षित गृह—राज्य प्रदान करने में है।

यहूदी और फीलीस्तीनी दोनों सभ्य लोग हैं लेकिन उनलोगों ने उस सांस्कृतिक स्तर पर रहना चुना है, जिस स्तर पर उनके पूर्वज ३००० वर्ष पहले थे। वे इतना पारस्परिक घृणा और बदले की भावना से अभी भरे हैं जितना वे तब थे। यह धर्मान्धता का परिणाम है जो सद्विवेक को सुन्न कर देता है और मन की हैतुक शक्ति का गला घोंट देता है।

●

यहूदी, ईसाइयत और इस्लाम

एवं

उनकी धर्मान्धता की विभीषिकाएँ

लेखक : अनवर शेख

हिन्दी अनुवाद : सच्चिदानन्द चतुर्वेदी

© लेखकाधीन

मूल्य : 80/–

प्रकाशक : धर्म प्रकाशन,
महामनापुरी (विवेकानन्द मठ के निकट), वाराणसी

मुद्रक : काबरा ऑफसेट्स
रवीन्द्रपुरी, वाराणसी

प्राक्कथन

यह पुस्तक जो आपके हाथ में है, अनवर शेख की अंग्रेजी पुस्तक Semitic Religions & Their Horrors of Fundamentalism का हिन्दी अनुवाद है; जिसे हिन्दू राइटर्स फोरम १२९ बी, एम०आई०जी०फ्लैट्स, राजौरी गार्डेन, नई दिल्ली–२७ से प्रकाशित, प्रथम संस्करण से किया गया है।

मिस्र, मेसोपोटामिया, बेबिलोनिया, सुमेरिया, असीरिया आदि प्राचीन सभ्यताओं वाले स्थानों में पैदा हुए आचार–विचार से प्रभावित संस्कृति और नैतिकता को शामी परम्परा कहते हैं। भारत में उपजा धर्म, जिसे सनातन धर्म कहते हैं इनसे मौलिक रूप में भिन्न है। भारतीय परम्परा में सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की कामना है। जिओ और जीने दो की भावना है। तर्क और विवेक की प्रधानता है; जबकि शामी परम्परा में हत्या, लूट, अपहरण, बलात्कार, गुलामी द्वारा दूसरे समुदायों को कुचल कर अपने अधीन करने और उनका शोषण करने की रही है। इस परम्परा में यही उनकी नैतिकता है। यहूदी, ईसाई और इस्लाम इसी परम्परा के मजहब हैं। सनातन परम्परा के पंथ–संप्रदाय वाले भारत के लोग शामी परम्परा की मूल भावना से सदा अपरिचित रहने और नैतिक मूल्यों की अपनी पारम्परिक दृष्टि से शामी मजहबों को भी देखने के कारण उनकी किसी कार्रवाई का मूल्यांकन सही ढंग से नहीं कर पाते हैं। उनके मौलिक उद्देश्य से अनजान रहने के कारण ही अपनी सुरक्षात्मक रणनीति और तदनुसार कार्रवाई की योजना नहीं बना पाते। इसलिए पाठकों के लिए अनवर शेख की इस पुस्तक, जिसमें इन मजहबों की पाण्डित्यपूर्ण एवं निष्पक्ष समीक्षा की गयी है, का हिन्दी में अनुवाद की आवश्यकता महसूस की गयी।

हिन्दू राइटर्स फोरम के अध्यक्ष डॉ० कृष्ण वल्लभ पालीवाल जी के स्नेहपूर्ण आशीर्वाद से इसे पूरा करने में सहायता मिली है। जिसके लिए मैं हृदय से उनका कृतज्ञ एवं ऋणी हूँ।